मंगल ग्रन्थ माला का चतुर्थ पुष्प।

वृक्ष में जीव है

[सचित्र पुस्तक]

लेखक

श्री स्वामी मङ्गलानन्द पुरी जी।

भूमिका लेखक

श्री पं० केशव राव जी जज हाईकोर्ट,

हैदराबाद-दक्षिण।

प्रकाशक

एस० एस० वर्मा एन्ड कम्पनी

१३८ अतरसूया, प्रयाग।

सं० १९८१ वि०, सन् १९२४ ई०।

सृ० सं० १,९७,२९,४९,०२४ आब्द।

प्रथमावृत्ति

मू० १)

मिलने का पता।

(१) प्रकाशक,

(२) लेखक (मार्फत प्रक ... ,,

(३) बाबू शिवब्रत नारायण,

क्लर्क, गुड्स शेड ई० आई० आर० कानपुर

(४) कृष्ण गोपाल जी

मुलाज़िम लायब्रेरी आर्यसमाज, कानपुर।

विषय-सूची

१ खंड—तर्कवाद

२ खंड—वेदादि के प्रमाण

३ खंड—आक्षेपों के उत्तर।

४ खंड—हिंसा पर विचार।

परिशिष्ट

पुस्तक सूची ।



जिनकी सहायता से यह पुस्तक तैयार की गई है ।

स०	ग्रन्थकर्ता, अनु०, या प्रका०
संस्कृत पुस्तकें	
१ ऋग्वेद दयानन्द भाष्य	वैदिक यन्त्रालय अजमेर
२ यजुर्वेद ,, ,,	,, ,, ,,
३ ऋक् अथर्वेद	सायण भाष्य ।
४ छान्दोग्य उपनिषद्	प० शिवशंकर जी काव्यतीर्थ
५ मानव धर्म शास्त्र	स्वर्गवासी प० भीमसेन शर्मा जी ।
६ मनुस्मृति सांख्य वैशेषिक	,, प० तुलसीराम जी ।
७ वेदान्त शंकर भाष्य	आनन्दाश्रम पूना
८ ,,	,, ,,
९ ,,	श्री प० आर्य मुनि जी काशी ।
१० न्याय वैशेषिक सांख्य	स्वर्ग० प० प्रभूदयाल जी [वेंकटेश्वर यन्त्रालय, बम्बई]

११ वैशेषिक उर्दू भाष्य	स्वामी दर्शनानन्द जी
१२ " अंगरेजी भाष्य	पाणिनि आफिस प्रयाग
१३ " संस्कृत भाष्य	श्री प० चन्द्रकान्त जी तर्कालंकार
१४ भगवद्गीता रहस्य	लोकमान्य प० बालगंगाधर तिलक महाराज।
१५ आपटे का कोष	आपटे, बम्बई।
१६ वृहद्विष्णु पुराण	वेंकटेश्वर यं० बम्बई
१७ श्री मद्भागवत पुराण	
१८ महाभारत	निर्णय सागर यं० "
१९ बृहत् संहिता	" "
२० अष्टाध्यायी	वेदप्रकाश इटावा।
२१ शास्त्रार्थ प० गणपति शर्मा और श्री स्वामी दर्शनानन्द जी	प्रकाशक महाविद्यालय ज्वालापुर [हरद्वार]
२२ स्थावर में जीव विचार	स्व० प० भीमसेन शर्मा जी
२३ " " "	श्री बा० श्यामसुन्दर लाल जी बी० ए० प्रोफेसर वकील मैनपुरी।
२४ " " "	स्वामी दर्शनानन्द जी कृत ट्रैक्ट (इसका ६०

	गोकुलचन्द जी दीक्षित के दर्शनानन्द ग्रन्थ संग्रह पृष्ठ ६४३ से ६७० तक आया है।
२५ वृक्षों में जीव विचार	श्री प० वी० एन० शर्मा जी
२६ ,, ,, ,, निर्णय	,, ,, गणेशप्रसाद शर्मा जी फर्रुखाबाद।
२७ दयानन्द प्रकाश	,, स्वामी सत्यानन्द महाराज लाहौर।
२८ ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन द्वितीय भाग	प० भगवद्दत्त जी बी० ए० रिसर्च स्कालर डी० ए० वी० कालिज लाहौर
२९ आत्म-दर्शन	महात्मा नारायण स्वामी
३० सत्यार्थ प्रकाश	वैदिक यन्त्रालय अजमेर
३१ विकासवाद	प० विनायक गणेश साठे जी [प्र० सद्धर्म प्र० यन्त्रा० गुरुकुल कांगड़ी हरद्वार]
३२ वैज्ञानिक खेती	श्री मती हेमन्तकुमारी देवी जी लखनऊ।
३३ मेरी कैलाश यात्रा	,, स्वामी सत्य देव महाराज।
३४ अक्षर विज्ञान	,, प० रघुनन्दन शर्मा जी (प्र० शूर जी वल्लभदास

	ऐ़ ढ क० वड़गादी बम्बई।
३५ डा० सर जगदीश चन्द बसु और उन के आविष्कार	श्री सुख सम्पतिराय जी भण्डारी (प्र० श्री मध्य भारत पुस्तक एजेन्सी इन्दौर)
३६ जसवन्त जसो भूषण गून्थ मारवाड़	राव राजा श्री रघुनाथसिंह जी ठेकाना जीवन्द(सामेश्वर रेल स्टेशन) जोधपुर राज्य के पास मैंने इस पुस्तक को देखा था।

स्कूली पुस्तकें।

न०	ग्रन्थकर्ता या अनुवादक
३२ Observation Lessons Reader No: 3 का उर्दू अनुवाद	
३८ Nature study No 1	अनुवादक स्वर्ग वासी बाबू माणिक चन्द्र जी बी० ए० सी० टी० (प्राघन सिटी आर्य समाज लखनऊ।)
३८ Nature Study (of Burmah)	E Thompstons B Sc. Deputy Director of

Agriculture, Burmah)
Pub 'Longman Green
and Co,

४० पदार्थ-विज्ञान-विटप Or Primer of Physical science	प० लक्ष्मी शंकर मिश्र जी एम० ए० काशी।

समाचार पत्र।

सं०	ग्रन्थकर्ता अनुवादक या प्रकाशक
४१ ब्राह्मण सर्वस्व	मासिक इटावा
४२ माधुरी	,, लखनऊ
४३ आर्य सिद्धान्त	,, (उर्दू) बदायू (बन्द हो गया)
४४ इन्द्र	,, (उर्दू) श्री धर्म पाल (अब्दुल गफूर जी) निकालते थे।
४५ मस्ताना योगी	,, उर्दू फीरोजपुर
४६ आर्य गजट	साप्ताहिक ,, लाहोर
४७ आर्यमित्र	,, हिन्दी आगरा

अंगरेजी पुस्तकें।

(४८) The Plant Life (४९) Plant and its Food	J Bretland Farmer, Profr of Botany, Imperial College of Science

ॐ

समर्पण

बागला-कुल भूषण, सनातन-धर्म के स्तम्भ,

साधु ब्राह्मणों पर श्रद्धा रखने वाले,

विद्या प्रेमी, ऐंग्लो-संस्कृत फूलचन्द-बागला

हाई स्कूल, हाथरस के संस्थापक और

सञ्चालक, श्रीमान् रायबहादुर

सेठ चिरंजी लाल जी बागला

के

कर कमलों में सादर

समर्पित ।

मङ्गलानन्द पुरी ।

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

धन्यवाद।

मङ्गल ग्रन्थमाला की पुस्तकों को छपाने के लिए जिन सज्जनों ने आर्थिक सहायता दी है, उनको शतश धन्यवाद है। उन सज्जनों की नामावली परिशिष्ट में प्रकाशित कर दी गई है।

श्रीमान् प० केशव राव जी जज हाईकोर्ट (भूतपूर्व प्रधान आर्य समाज) हैदराबाद दक्षिण के हम विशेष बाधित हैं, क्योंकि जिस उदारता से आपने इस पुस्तक के प्रकाशन में सहायता दी है वह सराहनीय है।

२—इस पुस्तक को मैंने हैदराबाद से प्रताप प्रेस के मनेजर और ट्रस्टी श्री प० शिवनारायण जा मिश्र के पास भेजा था, आपने इसे कमशल प्रेस में छपवा दिया।

मिश्र जी ने जिस प्रेम और श्रद्धा के साथ पुस्तक प्रकाशन में सहायता दी, उसके लिए आप को धन्यवाद है।

३—लाला भगवानदास जी गुप्त कमर्शल प्रेस कानपुर, श्री प० किशोरीदत्त जी शास्त्री राजवैद्य, नयागज, कानपुर को भाषा की अशुद्धिया ठीक करने के लिए धन्यवाद है।

चिरजीव शान्तिप्रिय द्विवेदी काशी निवासी, और क० प्रेस के चिरञ्जीव देवीदीन को सहायता के लिए आशीर्वाद।

४—इस पुस्तक के अनेक प्रमाणों की खोज में मेरी सहायता श्री पं० लक्ष्मीशंकर शर्मा जी उपदेशक हैदराबाद दक्षिण (आनरेरी प्रबन्धकर्ता, श्री देवीदत्त संस्कृत पाठशाला, राघवपुर सिकन्दरपुर जि० उन्नाव,) ने की है, अतः आप भी धन्यवाद के पात्र हैं ।

५—जिन पुस्तकों से मैंने इस पुस्तक-रचना में सहायता ली है, अन्त में मैं उनके लेखक, अनुवादक, प्रकाशक महाशयों को सहस्रशः धन्यवाद देता हूं । सच तो यह है कि मैंने उन की ग्रन्थ-वाटिका से कुछ सुमन चुन २ कर एक गुलदस्ता तैयार किया है जो आज प्रस्तुत रूप में आप के सामने है ।

लेखक ।

प्रस्तावना

यह पुस्तक आप की सेवा में उपस्थित की जाती है। इसकी तैयारी की राम कहानी सुनाना कदाचित अरोचक न होगा।

संवत १९७२ विक्रमी में सीतापुर (अवध) आर्यसमाज के वार्षिकोत्सव में मैं भी शरीक था। वहां शङ्का—समाधान के अवसर पर एक महाशय ने प्रश्न किया कि "क्या वृक्ष जीवधारी हैं?" उत्तर मैंने ही दे दिया कि "हां!" प्रश्न कर्ता को तो सन्तोष हो गया, परन्तु उस समाज के प्रधान श्री रामानन्द जी ने यह घोषणा कर दी कि "समाज के उपदेशकों में इस विषय पर मत भेद है इसलिए इस प्रश्नोत्तर को समाज की ओर से न समझा जाय।"

इस घोषणा का परिणाम जैसा कुछ होना चाहिए था वैसा ही हुआ। अर्थात उसी समय एक सनातन धर्मी प्रश्न कर्ता ने उक्त प्रधान जी को आड़े हाथों लिया और कहा कि आप का कुछ ठीक ठिकाना भी है? आप की वेदी से एक संन्यासी उत्तर देते हैं और आप झट खड़े हो कर कहते हैं कि उस को आर्य समाज की ओर से न माना जाय !! इत्यादि।

यह शोचनीय दशा देख कर मेरे मन में बड़ा खेद उत्पन्न हुआ और मैंने अनुसन्धान किया तो ज्ञात हुआ कि ऐसे कई विषय हैं जिन पर आर्य सामाजिक विद्वानों का अभी मत भेद है और अगर उनका निर्णय न हो गया तो विपक्षियों को आर्य समाज पर ठट्ठा उड़ाने का उचित अवसर मिलता ही रहेगा, इसलिए मेरा यह विचार दृढ़ हो गया कि इन एक विषय का तो मैं पूरा २ अनुसन्धान करूं कि "वस्तुत वृक्ष का जीवधारी होना ठीक है या नहीं ?

इसी अभिप्राय से मैंने पक्ष और विपक्ष की सारी पुस्तकें मंगाई, और उन सब को पढ़ने तथा यथोचित मनन करने पर इसी परिणाम पर पहुचा कि वृक्ष में जीव का विद्यमान होना ही प्राचीन और अर्वाचीन विद्वानों के युक्तियों, प्रमाणों तथा निर्णयों से सिद्ध है।

निदान इस प्रकार के परिश्रम से मैंने इस विषय की एक पुस्तक का पूरा सामान तैयार कर लिया। पुस्तक तो तैयार हो गई परन्तु इसको स्वत प्रकाशित करना मेरी शक्ति से बाहर था, इसलिए मैंने कई सभा समाजों तथा पुस्तक प्रकाशकों से पत्र व्यवहार किया पर सारा परिश्रम व्यर्थ गया।

२—इसी बीच मे एक घटना इस प्रकार घटित हुई पुस्तक के लिखे जाने पर श्रीमती आर्य प्रतिनिधि सभा संयुक्त प्रान्त ने इसको मंगवा लिया और वृन्दावन गुरुकुल के मुख्याधिष्ठाता

श्रीमान् नारायण प्रसाद (वर्तमान महात्मा नारायण स्वामी जी) की सेवा में सम्मति प्रकाशनार्थ भेज दिया। उक्त महात्मा जी ने मेरे लेखों को पढ़ कर जो सम्मति प्रकट की वह सभा की पत्र संख्या ५६ ता० १ अक्टूबर १६१८ द्वारा मुझे सूचित की गई जिसकी प्रति लिपि निम्न प्रकार है—

"श्रीमती आर्य प्रतिनिधि सभा के योग्य मन्त्री जी की आज्ञानुसार मैंने स्वामी मंगलानन्द जी पुरी कृत "वृक्षों में जीव है" नाम वाली पुस्तक को पढ़ा है।

पुस्तक बहुत उपयोगी है, युक्तियों और प्रमाणों—दोनों का अच्छा संग्रह किया गया है। इस बात का पूरा उद्योग किया गया है कि कोई आक्षेप इस सिद्धान्त के विरुद्ध उत्तर देने से बाकी न रहे।* केवल एक ही दोष पुस्तक में है और वह यह कि भाषा बहुत खराब और अशुद्धियों से भरी है, यदि सभा इसका छपाना स्वीकार करे तो भाषा दुरुस्त कराई जा सकती है †।"

गुरुकुल
२०।८।१९१८ } (ह०) न० प्रसाद

---

*जिस समय यह पुस्तक लिखी गयी थी उस समय से इस में और भी नवीन युक्तियों तथा प्रमाणों का समावेश कर दिया गया है। (मंगलानन्द)

† यथा सम्भव भाषा दुरुस्त कराई है।
मंगलानन्द

अब पुस्तक को छपाने का प्रश्न सभा की अन्तरंग बैठक में उपस्थित किया गया। परन्तु निर्णय हुआ कि सभा इस पुस्तक को नहीं छपा सकती"। क्यों? जब कि सभा ही के एक प्रतिष्ठित मान्य ने इसको बहुत उपयोगी मान लिया है तो पुस्तक के छपाने से इनकारी क्यों?—सभा ने तो मेरे इस प्रश्न का कुछ उत्तर न दिया, परन्तु उसके एक सभ्य श्रीमान्, पं० गंगाप्रसाद जी एम० ए० हेड मास्टर डी० ए०वी० स्कूल प्रधान आर्य समाज चौक प्रयाग ने यों बतलाया—

"आप की पुस्तक को सभा की ओर से छपने का मैंने ही विरोध किया था। मेरा कथन यह था कि जब कि सभा के सभ्यों में इस विषय पर दो पक्ष हैं तो ऐसे झगड़ालू विषय की पुस्तक को छपा कर सभा क्यों एक तरफा डिग्री दे देवे। इस से दूसरे पक्ष वालों में मनोमालिन्यता आ जायगी।"

सभा की अन्तरंग बैठक की उपयुक्त व्यवस्था सुन कर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। अगर ऐसे विवाद ग्रस्त विषयों की छानबीन researches का काम ये सभायें न करायेंगी, तो फिर वे कैसे तय होंगे? सभा के बड़े २ धुरंधर विद्वान्गण (ग्रेजुएट साहबान) यह क्यों नहीं विचार करते कि अगर झगड़ालू मामले न तय हुए तो फिर किस मुंह से सारे संसार को वैदिक धर्म में आने का निमन्त्रण दे सकते हैं। मुसलमान ईसाई, जैन, बौद्ध पारसी आदि जब कभी ऐसे ही जटिल प्रश्नों की

आप से जांच पड़ताल करेंगे तो उनसे क्या यह कहोगे कि वृक्ष में जीव के होने के प्रश्न पर हमारे यहां दो पक्ष हैं अतः इस विषय पर हम कोई विचार नहीं कर सकते। क्या आप के इस उत्तर से वे सन्तुष्ट हो जायगे ? अगर नहीं तो फिर क्या समाजों तथा सभाओं का यह परम कर्तव्य नहीं है कि अन्य कार्यों की अपेक्षा सबसे प्रथम इन्हीं विवादास्पद विषयों का निपटारा करा डालें।

हां! यह प्रश्न हो सकता है कि इन झगड़ालु विषयों को कैसे निपटाये ? उत्तर यह है कि सभा को उचित था कि मेरी इस पुस्तक को ऐसे रिमार्क Remark (टिप्पणी) के साथ छपवा देतीकि—"वृक्षमें जीव है या नहीं ?" इस विषय पर सभा की निजकी कोई सम्मति नहीं है, सभा इस विषय की ओर से उदासीन है, अतः इस पुस्तक को सभा विद्वानों के विचारार्थ प्रकाशित कराती है' क्यों कि सभा क एक सभ्य का कथन है कि लेखक ने "युक्तियों प्रमाणों का अच्छा संग्रह कर दिया है और पुस्तक बहुत उपयोगी है। अगर इस पुस्तक को पढ़ कर विपक्षी लोग यह समझें कि वे इन युक्तियों प्रमाणों का खण्डन कर सकते हैं तो व अपना लेख सभा के पास भेज दें और यदि वह उपयोगी माना जायगा तो सभा दूसरे संस्करण में उन को भी छपा देगी" इस प्रकार इस विषय पर काफी वाद विवाद हो कर कुछ

सिद्धान्त निश्चित होकर सबको सुगमता से ज्ञात हो जाता। ऐसे रिमार्क के साथ सभा मेरी पुस्तक को अगर छपा देती तो वह अपना कर्तव्य पालन करने वाली मानी जा सकती थी। अस्तु।

३—सब ओर से निराश हो जाने पर मैंने अपनी इस पुस्तक और अन्य पुस्तकों को छपाने के लिए पेशगी मूल्य तथा दान प्राप्त करने की ठान ली और इस प्रकार दाताओं की सहायता से (जिनकी नामावली परिशिष्ट में छपी है) यह पुस्तक आठ वर्षपश्चात् अब प्रकाशित हो सकी है।

पाठक ! यह थोड़े में इस पुस्तक के प्रकाशित होने का इतिहास है। मुझे आशा है कि आप लोग इस पुस्तक को अपना कर मुझे आगे और भी पुस्तकें लिखने के लिए उत्साहित करेंगे। पुस्तक कैसी है ? इसका निर्णय तो आप स्वयं कर लेंगे।

४—मैंने यथा सम्भव इस बात की कोशिश की है कि पुस्तक में विपक्षियों के सम्पूर्ण प्रश्नों के उत्तर दे दिये जांय। सन १९१६ से आज (१९२४) तक अनेक स्थानों पर घूमने वृक्षों के जीवधारी होने पर व्याख्यान देने तथा इस विषय पर होने वाली शङ्काओं के समाधान करने से जो जो निष्कर्ष निकले उन्हें इस पुस्तक में उत्तर सहित सम्मिलित किया गया है। दिल्ली के सद्धर्म प्रचारक में मैंने इसी अभिप्राय का एक विज्ञापन

छपाया था कि जिन लोगों को इस विषय पर कुछ शङ्कायें हों वे लिख भेजें। इस सूचनानुसार दो पत्र आए उन में जो शङ्कायें की गई थीं उन के उत्तर पूर्व से ही लिखे जा चुके थे। पुस्तकें छपने पर कई नवीन शङ्कायें सुनी गईं, उनको भी उत्तर सहित सम्मिलित कर लिया गया। कई छपने योग्य बातें पुस्तक के छप जाने पर पाई गईं, मैंने उनको भी परिशिष्ट में स्थान दे दिया है। आगे जो शङ्कायें सुनी जायगी उनको पुनरावृत्ति में शामिल करने का प्रयत्न करता रहूंगा।

५—इस पुस्तक में मेरी निज की कोई सामग्री नहीं है। प्रथम खण्ड तो अंगरेजी पुस्तकों के आधार पर लिखा गया है और अन्य खण्डों में शास्त्रों के प्रमाणों की भरमार है। हाँ टीका टिप्पणी द्वारा विषय को सरल बनाने की यथा सम्भव कोशिश की गई है।

जहां अन्य विद्वानों के वाक्यों पर किसी टीका टिप्पणी की आवश्यकता पड़ी है वहां मैंने उन टिप्पणियों के अन्त में अपना नाम भी दे दिया है। ऐसा रिवाज हिन्दी पुस्तकों में कम देखा जाता है किन्तु अंगरेजी पुस्तकों में यह प्रणाली बड़ी सावधानी से वर्ती जाती है।

आज कल हिन्दी पुस्तकों के लिखने वाले सज्जनों की बेपरवाही से पाठकों को कई उलझनों में पड़ना पड़ता है (मैं स्वयं बहुत बार ऐसे झमेलों में पड़ा हू) खास कर जिन विषयों में संस्कृत श्लोकों का उद्धरण होता है प्राय हिन्दी पुस्तकों में उन प्रमाणों के अर्थ और गून्थकर्ता की सम्मति इतनी मिली जुली हुई रहती है कि जो पाठक यह पता लगाना चाहे कि प्राचीन उद्धरणों का आशय कहा तक है और नवीन गून्थकर्ता महाशय

की राय क्या है वो यह जानने में बड़ी कठिनाई पड़ती है। हम सस्कृतज्ञ यूरोपियनों (मोर्स मूलादि) की प्रशसा किये बिना नहीं रह सकते कि वे मूल पुस्तक से जहा अपनी ओर से एक शब्द भी अधिक कहना चाहते हैं फ़ौरन अपने हस्ताक्षरों द्वारा स्पष्ट कर देते हैं यह प्रणाली अनुकरणीय है।

जहा कहीं कोई टिप्पणी अपने ही वाक्यों पर देना पड़ा है वहां हस्ताक्षर नहीं किया इस से पाठक गण दूसरों के उद्धरणों को जो इस पुस्तक में बहुतायत के साथ हैं आसानी से भेद कर सकेंगे।

६—अन्तिम निवेदन मुझे यह करना है कि इस बात की बहुत कोशिश की गई कि पुस्तक में अशुद्धियाँ न रहें, परन्तु फिर भी कुछ गलतियां रह ही गईं, जिन में से कुछ भारी भारी अशुद्धियों का "शुद्धि पत्र" परिशिष्ट में जोड़ दिया गया है। पाठक शुद्धि पत्र से सँशोधन कर के पढ़ ले वो ठीक होगा। इस कष्ट के लिए मैं पाठकों से क्षमा-प्रार्थी हू। आशा है कि आप विषय की गम्भीरता के सम्मुख भाषा या प्रूफ़ की गलतियों की परवाह न करेंगे। इत्योम् शान्तिः॥

आर्यसमाज कानपुर
ए० बी० रोड
ता० २६ मार्च १६२४

सर्व-हितैषी
मंगलानन्द पुरी



भूमिका

(श्रीमान् माननीय पण्डित केशव राव जी जज हाईकोर्ट हैदराबाद दक्षिण लिखित)

वास्तव में इस पुस्तक की भूमिका राव आत्माराम जी बड़ौदा निवासी लिखने वाले थे। जिस योग्यता से वे इस कार्य को सम्पादन करते, आर्य भाषा के सेवकों में वैसा दूसरा कोई मुझे नहीं दिखलाई पड़ता। अर्वाचीन विज्ञान-शास्त्र रूपी यन्त्रों के द्वारा प्राचीन आर्य सभ्यता की कानों में से चमकीले रत्नों को निकालने में जैसी उनकी निपुणता देखी जाती है, वैसी बहुत ही कम लोगों में है। और इसी निपुणता के आधार पर वृक्षों में जीव के अस्तित्व को स प्रमाण सिद्ध करने वाली इस स्वर्णमयी पुस्तक पर जिस योग्य रीति से राव जी सुहागा लगा सकते थे मुझे खेद है कि उस योग्यता से मैं इस कार्य को नहीं कर सकता। राव जी के बहुत अधिक बीमार होने के कारण ग्रन्थ-कर्त्ता ने यह कार्य मुझ से सम्पादित कराने की अभिलाषा की।

इस कार्य-भार का मेरे सिर पर पड़ने का एक और

कारण भी है, उसे मैं यहाँ लिखे बगैर नहीं रह सकता। वह यह है कि इस पुस्तक का उत्पत्ति-स्थान वही है जो मेरा निवास-स्थान है। इस पुस्तक का बीजारोपण कहीं भी क्यों न हुआ हो, पर इस का तर्तीब दिया जाना और वर्तमान रूप में आना हैदराबाद में ही हुआ था। इस बात का हम हैदराबाद वासियों को हर समय अभिमान रहेगा कि एक परिव्राजक संन्यासी को लोकोपकार के कार्य में प्रवृत्त होने के लिए हम स्थान और सहायता दे सके।

जैसा कि मैंने अभी लिखा है कि इस पुस्तक का आदि स्थान वही है जो मेरा निवास-स्थान है, इसलिए मुझे इस पुस्तक के आदिम स्वरूप को देखने का भी अवसर मिला। जब मैंने स्वामी मङ्गलानन्द जी महाराज के सचित्र आधुनिक वैज्ञानिकों के तर्काश्रित मत और वेदादि शास्त्र के प्रमाणों के समुदाय को देखा था, उसी समय मुझे उनकी विद्वत्ता और सत्य-शोधकता पर आश्चर्य हुआ था। फिर भी मुझे सन्देह था कि वे अपने ज्ञान-भण्डार के इन मुक्ता फलों को मालिका के रूप में आर्य भाषा प्रेमियों को धारण करने के लिए इतनी जल्दी किस प्रकार दे सकेंगे, पर स्वामी जी महाराज के परिश्रम और एकाग्रता को धन्य कि यह शुभ दिन हमें इतनी शीघ्र देखने को मिल गया।

स्वामी जी महाराज ने अपनी पुस्तक को चार हिस्सों

में विभक्त किया है। पहिला विभाग उन्होंने तर्कवाद के समर्पित किया है। इस विभाग में उन्होंने अनेक वनस्पति शास्त्र शोधकों के आविष्कारों को सूत्र रूप से संग्रहीत किया है और इन बातों से यह दर्शाने की कोशिश की है कि वनस्पतियों में ऐसी विचित्र विचित्र बातें जो देखी जाती हैं उसका स्पष्टी-करण और किसी तौर पर नहीं किया जा सकता सिवाय इस के कि वृक्षों में जीवात्मा के अस्तित्व को मान लिया जाय।

दूसरे भाग में उन्होंने यह दर्शाया है कि जिस सिद्धान्त को वे अपने अखण्डनीय तर्क से प्रथम भाग में स्थापित कर आये हैं, वह आप्त-प्रमाण अर्थात् अनेक प्रसिद्ध विद्वानों के मन्तव्यों से भी सिद्ध होता है। इस भाग में उन्होंने महाभारतादि सर्व मान्य ग्रन्थों के, पुराणादि सनातन धर्म-शास्त्रों के, और वेदादि प्राचीन आर्ष-ग्रन्थों के प्रमाणों से यह दर्शाने का प्रयत्न किया है कि इन ग्रन्थों के कर्ता भी वृक्षों में जीव के अस्तित्व को मानने वाले थे। इस के सिवाय अनेक उद्धरणों द्वारा उन्होंने यह भी दर्शाया है कि महर्षि दयानन्द, प्रोफ़ेसर गुरुदत्त, लोकमान्य प० बाल गङ्गाधर तिलक तथा पण्डित आर्य-मुनि सरीखे आधुनिक भारतीय विद्वान् भी इसी सम्मति के हैं।

तीसरा भाग इस पुस्तक का मेरी समझ में सब से अधिक महत्व का है। वृक्ष में जीव मान लेना बहुत

की वृद्धि हो, उसी तौर पर मुझे पूर्ण आशा है कि प्रत्येक आर्य भाषा भाषी और किसी लिये नहीं तो केवल ज्ञान प्राप्ति के निमित्त इस पुस्तक को जरूर पढ़ेंगे और ग्रन्थकर्ता के प्रयत्नों को सफल करेंगे।

यह पुस्तक हिन्दी भाषा में अपने तरह का पहला और अद्वितीय रत्न है और प्रत्येक आर्य्य पुरुष के पुस्तकालय में इसका होना निहायत जरूरी है।

हैदराबाद-द०
१२ अप्रैल १९२४

केशव राव
शान्ति कुंज
बेगम पेठ।

पहला खण्ड ।

तर्कवाद ।

॥ ओ३म् ॥

वृक्ष में जीव है।

पहला अध्याय।

कुछ आरम्भिक बातें।

१—पहला अनुवाक।

'वृक्ष में जीव है या नहीं,' इस प्रश्न पर हम दो प्रकार से विचार करेंगे—एक तो युक्तियों और तर्कों द्वारा, दूसरे शास्त्रीय प्रमाणों द्वारा। हम प्रथम खण्ड में तर्कों को ही प्रस्तुत करना चाहते हैं, क्योंकि आजकल लोगों की प्रवृत्ति तर्कप्रधान हो रही है। दूसरे खण्ड में हम वेदादि के प्रमाणों को दर्शायेंगे। और तीसरे खण्ड में विपक्षियों के आक्षेपों के उत्तर सुनायेंगे। फिर चौथे या अन्तिम खण्ड में यह विचार पाठकों की सेवा में प्रस्तुत करेंगे कि अगर वृक्ष में जीव का होना सिद्ध है तो क्या हम मनुष्यों को उनके फल, फूल, डाली,

पक्षी आदि खाने से हिंसा का पाप लगता है या नहीं ?

अच्छा, अब इस प्रथम " तर्कवाद " खण्ड में हमें युक्तिया प्रकट करनी चाहिये कि किन दलीलों से यह साबित हो सकता है कि वृक्ष में जीव विद्यमान है ? हम यहां पर वनस्पति विद्या (बोटानी Botany) की कुछ स्कूली पुस्तकों में से यथोचित युक्तिया दर्शायेंगे । कृषि-विद्या तथा कई अंगरेज विज्ञान-वेत्ताओं की पुस्तकों से अनेक विचारों को प्रस्तुत करेंगे और बड़े रोचक, मनोहर और आश्चर्यदायक शब्दों में महात्मा, डाक्टर, सर जगदीशचन्द्र वसु महाराज के अन्वेषणों का भी सक्षेप में वर्णन कर देंगे। निदान, युक्तियों की जहां तक सम्भावना है, पाठकगण इस प्रथम खण्ड में उनकी त्रुटि न पायेंगे । और हम दावे के साथ कह सकते हैं कि विपक्षियों को भी अगर वे पक्षपात छोड़कर हमारी बातों पर कान देंगे, तो अपना मत परिवर्तन कर देना पड़ेगा।

दूसरा अनुवाक ।

—:o:—

हमारा साध्य विषय यह है कि " वृक्ष में जीव है "। इस से हमारा अभिप्राय अभिमानी जीव का है। अर्थात् हम लोग आवागमन-सिद्धान्त के माननेवाले ऐसा निश्चय

रखते हैं कि हम मनुष्यों के जीवात्मायें अपने कर्मानुसार कभी पशु, पक्षी के शरीर पाते हैं, तो कभी वृक्ष की भी योनि में चले जाते हैं। अत ज्ञात रहे कि हम एक वृक्ष में जड़ से फुनगी तक मे उसका एक जीवात्मा मानते हैं। जैसे मानुष-शरीर में एक अभिमानी जीवात्मा इसका मालिक, प्रभु या राजा बना बैठा है। जो वृक्षों में अनेकों जीव जन्तु घर बना कर जा बैठते हैं, या सडे फलों मे जो कीड़े पड़ जाते हैं, या गूलर के फल में जो सैकड़ों मच्छड़ विद्यमान रहते हैं, उन से हमारे विषय का कुछ सरोकार नहीं है। वे वहा वैसे ही निवास करते हैं जैसे हमारे शरीर में भी अनेक कीडे पडे रहते हैं। खास कर फोडे आदि मे सैकड़ों कीडे पड़े हुए प्रत्यक्ष दीखते हैं। और जो अनुशयी जीव कहलाते हैं उन से भी हमारा कोई सरोकार नहीं है। पाठकगण उनका हाल तीसरे खण्ड के अध्याय—"बीज मे अनुशयी जीव"—में पढेंगे।

निदान् जिस प्रकार हम अपने मानुषी शरीर के मालिक जीवात्मा हैं उसी प्रकार वृक्ष के अन्दर एक जीवात्मा उस सारे शरीर का मालिक बना बैठा रहता है, जो उसे जिंदा (हरा भरा) बनाये रखता है। इसी मन्तव्य की पुष्टि हम इस प्रथम खण्ड में वैज्ञानिक युक्तियों से और दूसरे तीसरे खण्डों में वेदादि के प्रमाणों से करेंगे।

तीसरा अनुवाक।

यद्यपि हम इस प्रथम खण्ड मे वैज्ञानिक (खासकर पाश्चात्य विज्ञान) की युक्तियो को प्रस्तुत करेगे, परन्तु यह बात स्मरण रखने योग्य है कि जीवात्मा की परिभाषा मे हमारे शास्त्रों और पाश्चात्य वैज्ञानिकों का भारी मत भेद है। जहा हम एक शरीर (मनुष्य, पशु या वृक्ष) मे एक जीवात्मा को उस सारे शरीर का "अभिमानी"—मालिक, प्रभु या राजा मानते हैं, वहा वे शरीर में रुधिर के एक एक बूद को सैकड़ो जीवात्माओं का समूह मान रहे हैं। अत वे लोग वृक्षों के भी पत्ती पत्ती में जीवों का होना (और शायद एक २ पत्ती को जीवो का समूह) मानते हैं। इसलिए पाठकगण कही भ्रम में न पड़ जाय, क्योंकि हम उन वैज्ञानिकों की सारी बातों को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हैं। हमारा अभिप्राय इन वैज्ञानिक युक्तियो को उपस्थित करने से केवल यह दर्शाने का है कि प्राचीन ऋषियों का सिद्धान्त

---

* सूक्ष्म-दर्शक यन्त्र Mycroscope से हमने भी रुधिर म(?) उन रेंगनेवाले व्यक्तियों को देखा है जिन्हें वे पाश्चात्य डाक्टर लोग "जीव" मान बैठे हैं।

वृक्ष के जीवधारी होने का ऐसा अकाट्य और यथार्थ है कि आधुनिक विज्ञान ने भी उसके आगे सिर झुका दिया है।

प्रश्न—अगर विज्ञान का यह निर्णय "कि शरीर सहस्रों जीवों का एक समूह है" युक्तियों से ठीक सिद्ध हो रहा है, तो आप को उसे स्वीकार करने में क्यों एतराज है?

उत्तर—इस प्रश्न पर वाद विवाद करना हमारे इस पुस्तक का उद्देश्य नहीं है। "शरीर अनेकों जीवों का समूह है" यह विज्ञान का निर्णय कहां तक सत्य है, इस पर तत्वज्ञानी (फ़िलासफर) लोग विचार करेंगे। हमें तो इस पुस्तक में केवल यह दर्शाना है कि मनुष्य या पशु पक्षी की सादृश्यता वृक्ष भी रखते हैं। शास्त्रों ने जहाँ मानुषी-शरीर का एक अभिमानी जीवात्मा माना है, वहां वृक्ष-शरीर का भी एक अभिमानी जीव माना है। और विज्ञान जहां मानुषीशरीर के एक एक बूँद को अनेक जीवों का समूह मानता है, वहां वृक्ष के भी एक एक पत्ते को सैकड़ों जीवों से भरा हुआ मान रहा है। ऐसी दशा में यह विषय निर्विवाद है। अर्थात् जिन्हें विज्ञान का निर्णय प्रिय* हो, वे वैसा ही मान लें और तब या

* मुझे या मुझ जैसे शास्त्रीय प्रमाणों को प्रमाणिक माननेवालों को "वह प्रिय हो नहीं सकता।

मानना होगा कि मानुषी शरीर लाखों जीवों का समूह है। इसी प्रकार वृक्ष-शरीर भी करोड़ों जीवों से तैयार हो सका है। परन्तु हमारे साथी महाशयगण (वेदों, शास्त्रों, पुराण आदि को माननेवाले) का मन्तव्य यों होगा कि जिस प्रकार हम एक जीवात्मा इस मानुषी शरीर में बैठे हैं, उसी प्रकार वृक्ष-शरीर में भी एक जीवात्मा बैठा है।

प्रश्न—आप जब कि विज्ञान के निर्णय को पूरा पूरा नहीं मानते तो आप का क्या हक है कि उसकी युक्तियों का यहां उल्लेख करने लगे हैं ?

उत्तर—विज्ञान की जितनी बातें हमारे शास्त्रों के साथ एकता रखती हैं, उन्हें प्रकट करना इसलिए उचित और आवश्यक है कि तर्कवाद के प्रेमियों पर हम यह प्रभाव डालना चाहते हैं कि उन के तर्क और युक्ति भी हमारे पक्ष के पोषक ही हैं।

प्रश्न—परन्तु विज्ञान की यह बात कि रुधिर का एक एक बूंद जीवों से भरा पड़ा है, आप लोगों को क्यों अभीष्ट नहीं है ? क्या युक्ति, असली दलील और प्रत्यक्ष प्रमाण से जो बातें सिद्ध हों उनसे भी इनकार कर देना बुद्धिमानी है ?

उत्तर—विज्ञान की उक्त बात को संसार के धार्मिक बुद्धिमानों ने अभी तक तसलीम नहीं किया है। रुधिर में जो रेंगते हुये जीव दीखते हैं उन्हे हम जीवात्मा नहीं मान सकते,

क्योंकि "जीवात्मा" के लक्षण और परिभाषा उन पर नहीं घटते। वे वैज्ञानिक तो खून की हरारत को ही जीव मानते हैं, अत उनके मत में शरीर के साथ साथ जीव भी मर जाता है, परन्तु हम लोग (समस्त हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, पारसी, बौद्ध, जैनी) शरीरान्त पर जीवात्मा का अमर बना रहना मान रहे हैं। हमारे इस मन्तव्य की पुष्टि में युक्तियों की बडी भरमार दर्शनों आदि में पाई जाती है। परन्तु हमारे इस पुस्तक का वह विषय नहीं है इस कारण इस विषयान्तर को यहीं समाप्त करते हैं। †

चौथा अनुवाक।

"वृक्ष"—पौधो की कई किस्मों मे से एक है, परन्तु इस पुस्तक के नाम में "वृक्ष" शब्द से हमारा अभिप्राय समस्त प्रकार के नबातात (Vegetable kingdom) से है।

इन सब मतों की पुस्तकों का यही निर्णय है, किन्तु अगर कोई वैसा न मानता होगा तो वह उसकी व्यक्तिगत मति समझी जायगी।

† आगे तीसरे खण्ड (आक्षेपों का उत्तर) में अध्यायों—"वृक्ष में अभिमानी जीव है" और "बीज में अनुशयी जीव है" — में इस विषय पर अधिक प्रकाश डाला जायगा।

उन क़िस्मों की सूची मनुस्मृति में अङ्कित है, अत: हम यहां उन श्लोकों को उद्धृत करना उचित समझते हैं :—

१—उद्भिज्जाः स्थावराः सर्वे, बीज काण्ड प्ररोहिणः।
ओषध्यः फल पाकान्ता, बहु पुष्प फलोपगाः ॥४०॥
२—अपुष्पाः फलवन्तो ये, ते वनस्पतयः स्मृताः।
पुष्पिणः फलिनश्चैव वृक्षास्तु भयतःस्मृताः ॥४७॥
३—गुच्छ गुल्म तु विविध, तथैव तृण जातयः।
बीज काण्ड रुहाण्येव प्रताना वल्लय एव च ॥४८॥
(मनु॰ अ० १ श्लोक ४६—८)

अर्थ—इन तीन श्लोकों में पौधों के अनेक प्रकार बतलाये गये हैं जिन्हें हम एक चक्र में नीचे प्रकट किये देते हैं :—

१—औषधि	जो फल देने पर सूख कर मर जायं जैसे—गेहू, जौ, चना, धान आदि सारे अनाज।
२—बीजकाण्ड प्ररोहिण	जिन के कलम लगाने से लग जायं जैसे—गुलाब, गेंदा, बेला आदि।
३—वनस्पति ..	जिन में फूल न हों, पर फल लग जायं जैसे—गूलर।
४—वृक्ष	जिन मे फूल फल दोनो उपजें—जैसे आम, जामुन आदि।
५—गुच्छ	गुच्छेदार जिन में शाखा आदि न हों

	और जो जड़ से ही अनेक भाग में उपजें—जैसे घीकुवार इत्यादि।
६—गुल्म	जिनमें न फूल हो न फल, जैसे—गन्ना (ईख), बेंत, सरकन्डा आदि ।
७—तृण	जो आप ही आप बिना बीज बोये उपजें —अर्थात् घास इत्यादि ।
८—वल्ली	जो दूसरों के सहारे फैलें, इन्हें लता या बेल कहा जाता है, जैसे—गुरिच, इश्क-पेंचा, अंगूर, सोमलता इत्यादि ।
९—प्रताना	वे लतायें जिन में सूत जैसा निकलता है, जैसे—कद्दू, खीरा, खरबूजा इत्यादि ।



पहला अध्याय।

पौधों की किस्में।

प्रथम अनुवाक।

—:o:—

कई प्रकार के ऐसे पौधे देखे जाते हैं जो अपने अन्दर जीवन के प्रत्यक्ष प्रमाण दे देते हैं। उनमें से कुछ थोडों का हाल यहां प्रकट किया जाता है :—

(क) सूर्यमुखी।

यह पौधा बहुत विख्यात है। सभों ने देखा होगा कि सूर्यमुखी का पौधा प्रात:काल में पूरब की ओर झुका रहता है। उसके पत्ते इस प्रकार घूम जाते हैं कि प्रत्येक पत्ते पर सूर्य की किरणे पूर्ण रूप से पड सकें। कोई पत्ता ऊपर की ओर बैठ जाता है, कोई दाहिनी ओर, और कोई बाईं ओर फिर जाता है, जिसमें सब के सब सूर्य की किरणों का पूर्ण रूप से आलिङ्गन कर सके।

फिर सायकाल में ऐसा जान पड़ेगा कि इस सूर्यमुखी पौधे की पत्तिया पश्चिम की ओर झुक गई हैं। इत्यादि बातें प्रकट करती हैं कि सूर्यमुखी पौधे में जीवधारियों के लक्षण विद्यमान हैं।

सूर्यमुखी को अँगरेज़ी (लेटिन) में "हीलियो ट्रोपिज़्म" (Helio tropism) कहा जाता है।

(ख) कमल।

कमल के बारे में भी यह विख्यात है कि प्रातःकाल सूर्य के उदय होने पर उसका फूल खिलता है और सूर्यास्त पर बन्द हो जाता है।

(ग) बिच्छू पौधा।

यह एक छोटा पौधा है जिसकी पत्ती छू लेने से ऐसा कष्ट प्रतीत होता है जैसे बिच्छू के डङ्क मारने पर। हमने स्वयं इसे पूर्वीय अफ्रीका देश में देखा और छूकर कष्ट भी सहन किया था, और स्वामी सत्यदेवजी ने मेरी कैलाश यात्रा के पृष्ठ १५ पर इसका यों वर्णन किया है —

" एक प्रकार के वन्य पौधे के पत्तों से मेरी टाँग छू-गई। मानों बिच्छू काट गया, बड़ी जलन होने लगी। यह बिच्छी घास कहलाती है। पहाड़ों में यह बहुत होती है। सूखने पर इसके रेशों की रस्सियां बनाई जाती हैं। हरी हरी पत्तियों का शाक भी लोग खाते हैं।"

इससे पता लगता है कि इस पौधे में तीक्ष्ण स्पर्श इन्द्रिय मौजूद है जो किसी का छूना पसन्द नहीं करता, अतः यह लक्षण जीवधारी ही के हो सकते हैं।

(घ) प्रार्थना करने वाला पेड़।

आर्यमित्र आगरा ता० ३१ मई १९१७ ई० के अङ्क में पृष्ठ ४, कालम २ पर यों छपा है—

" विचित्र पौधा

फ़रीदपुर जिले में एक अद्भुत पेड़ है जो सवेरे तो खड़ा रहता है पर संध्या होते ही लेट जाता है। इस का नाम महात्मा जगदीशचन्द्र जी ने (Praying plant) प्रार्थना करने वाला पेड़ रख दिया है।"

क्या बिना जीवात्मा की सत्ता के कभी ऐसा हो सकता है?

(ङ) बार्बेरी पौधा।

इस (Barberry) बार्बेरी पौधे की पत्तियां खूब नोकदार होती हैं और उनमे गति (Movement) का वर्णन आया है।

दूसरा अनुवाक।

लाजवन्ती।

पाठकों ने लाजवन्ती या छुई मुई का छोटा पौधा देखा होगा। इस को अंगरेज़ी में Mimosa कहते हैं।

इस में बड़ी विचित्रता यह पाई जाती है कि इसको अगर हम छू दें या फूंक मार दें तो वह अपनी पत्तियों को सिकोड़ लेगा। ऐसा वह क्यों करता है ? शत्रुओं से अपनी रक्षा करने के लिए। पशुओं में कछुआ को आपने देखा होगा कि वह ज़रा भी भय प्रतीत होते ही अपना सिर झट सिकोड़ कर अन्दर कर लेता है। उस वक्त उसकी पीठ मात्र दीखती है जो इतनी मजबूत होती है कि कोई शस्त्र उसे नहीं काट सकता। इसी कारण युद्धवाले उसी की ढाल बनवाने लगे हैं। निदान जैसे कछुआ अपने अङ्गों को सिकोड कर शत्रु के भय से अपनी रक्षा करता है, उसी प्रकार यह लाजवन्ती भी अपने अङ्गों (पत्तियों) को सिकोड़ लेती है।

वृक्ष सम्बन्धी जाच पड़ताल करनेवालों के लिए यह पौधा बहुत ही उपयोगी सिद्ध हो रहा है, क्योंकि इस बात पर सहजतया परीक्षायें हो सकती हैं। इसका आगे चलकर विस्तार से वर्णन आवेगा।

तीसरा अनुवाक।

सब से ऊंचा पेड़।

वन्देमातरम् (उर्दू) लाहौर ता० ७ जनवरी १९२३ ई० के अङ्क में पृष्ठ ८ पर "दुनिया में सब से ऊंचे और मोटे दरख्त"—शीर्षक लेख छपा है। इसमें कहा गया है—

"कोलम्बिया (अमेरिका) में मेरीशेज नाम का एक स्थान है। यह सान्फ्राँसिस्को शहर से २०० मील पर है। यहा एक प्रकार का वृक्ष बहुत ऊंचा होता है जो चीड़ जैसा प्रतीत होता है। इसकी ऊंचाई ३०० तीन सौ फ़ीट और चौड़ाई यानी तनों का लपेट ९० फ़ीट है। ऊंचाई में वह मानों हमारे कुतुबमीनार दिल्ली की बराबरी कर रहा है। आंधी से गिरे हुये एक ऐसे वृक्ष के तने से एक सुरंग बना दी गई है क्योंकि वह अन्दर से पोला रहता है। इस सुरग से (जो ९० फ़ीट के घेरे के पोल वाला है) एक घोड़ा सवार बड़ी आसानी से चला जा सकता है।" इत्यादि बड़ी अद्भुत महिमा इस वृक्ष की लिखी है। ३०० फ़ीट की ऊंचाई तक जड़ से खाद्य द्रव्यों का पहुंचाया जा कर हरा भरा बनाए रखना क्या बिना जीवात्मा की सत्ता के कभी होना सम्भव है?

चौथा अनुवाक।

—.o—

तार का पौधा।

महात्मा जगदीश चन्द्र महाराज अपनी पुस्तक "प्लान्ट रिस्पान्स" (Plant response) में पृष्ठ ४ पर कहते हैं :—

"नसों की गति या नाड़ियों के चलती रहने के अनेक दृष्टान्त हम पौधों में पाते हैं। एक पौधा बहुत स्पष्ट निर्णय कर देता है जिसका नाम डेस्मोडियम जाइरान्स या तार का पौधा (Desmodium Gyrans or Telegraph plant) है। यह पौधा गङ्गा किनारे के जङ्गलों में उगता है जहां इसका देशी नाम "बान चरल है" अर्थात् जङ्गल से पृथक किया हुआ। इस पौधे के पास अगर ताली बजाई जाय तो इसकी पत्तियां नाचने लगती हैं। यह तिपती के जैसा तीन पत्तियों वाला पोधा है। जिन में से अन्तिम तीसरी पत्ती बड़ी होती है, किन्तु दूसरी दोनों किनारोंवाली पत्तियां बहुत छोटी होती हैं।

प्राफेसर फ्रान्स भी इस पौधे का वर्णन अपनी पुस्तक "Germs of mind in plants" पौधों की मानसिक दशा में करते हैं। उनका कथन है कि महाभारत

और अलिफलैला (अर्बी पुस्तक सहस्र रजनी चरित्र) में भी इस पौधे का वर्णन आया है । इस पौधे की तीन पत्तियों में से दो (किनारे वाली) छोटी पत्तियां सदा अपनी Normal (आरोग्यता की ठीक) दशा में बराबर हिलती रहा करती हैं—अत. पौधे की ऊची नीची गति को प्रकट कर देती हैं जिसमें दो से चार मिनट तक लग जाते हैं ।

इस पौधे की पत्तियों के नोक से हम उसके नाड़ी की गति का पता पाते हैं, जो प्रत्यक्ष पशुओं (या मनुष्यों) के हृदय के सञ्चालन के ही सदृश है ।



तीसरा अध्याय।

—.o.—

मांसाहारी पौधों की किस्में।

पहला अनुवाक।

कई वृक्ष या छोटे पौधे मांस खानेवाले पाये गये हैं, उनके नाम सुनिये —

(क) काली पहाड (मांसाहारी)।

स्वामी फतेहराम जी स्थान नीमाड़ा (मोमेश्वर रेल स्टेशन) जोधपुर राज्य ने हमें बतलाया कि मारवाड़ देश में एक पौधा ऐसा "कांनी पहाड" नाम का होता है जिस में यह गुण है कि छोटी छोटी मक्खियां और मच्छड इत्यादि जो उसके नीचे चली जाती हैं वे फिर वापस नहीं आ सकतीं, बस वहां ही उनकी मौत हो जाती है। अतः इसे मांसाहारी पौधा मानना चाहिये।

क्या यह क्रिया बिना जीवात्मा के कभी सम्भव है?

(ख) तैरनेवाले हिंसक पौधे।

प्रोफेसर फ्रांस अपनी पुस्तक (Germs of mind in Plants, "पौधों की मानसिक दशा" में यों वर्णन कर रहे हैं —

"प्राय सरोवरों आदि में एक प्रकार के तैरनेवाले पौधे देखे जाते हैं। इनकी जड़ें धरती में जमी हुई नहीं रहतीं बल्कि इधर उधर तैरती रहा करती हैं। और हवा के बहाव से इधर उधर झोकों के साथ बहती रहती हैं। इस पौधे पर अनेक पानी के जीव जन्तु यथा जल-पिस्सू स्कीपर Skipper और मच्छड़ आदि मडराते रहते हैं। परन्तु वे जब इस पौधे के बालों द्वारा जकड़ लिये जाते हैं, तो कदापि छूट नहीं सकते, और उनका भक्षण कर डाला जाता है।

(ग) मक्खी पकड़नेवाला पौधा।

अमेरिका में यह (Fly trap) पौधा होता है। मक्खियां इस के पत्तों पर बैठें तो बस उनकी मौत आ गई समझो। इसका विशेष वृत्तान्त आगे १४ वें अध्याय के ४ थे अनुवाक में पढ़िये।

(घ) सनडिव शिकारी पौधा।

यह Sun Dew याने "सूर्य का ओस" नामी पौधा मच्छड़, मक्खी आदि को, जो उसका ओस चाटने के लिए उस पर आ बैठता हैं, अपना शिकार बना लेता है। यह जर्मनी देश में उपजता है जहा इसका देशी नाम Drose rarotum defolia है।

(इसका विवरण १४ वें अध्याय के दूसरे अनुवाक में पढ़िये)।

(क) प्रोटिस्टा पौधा।

इस पौधे का आहार रक्त व मांस है। यदि इन को रक्त चूसने और मांस खाने को न मिले तो ये सूख कर मुरझा जायँ अर्थात मर जायगे।

इन प्रोटिस्टाओं के समीप जब कोई पक्षी उड़ता है, या छोटा जानवर आता है तो इनकी शाखायें हिलने लगती हैं और पशु पक्षी इनकी ओर स्वयं खिंच जाते हैं। इनका धड़ खुल जाता है और वे अपनी शाखाओं से उसे पकड़ कर उनका सम्पूर्ण रक्त और मांस निचोड़ लेते हैं। केवल हड्डियां पृथ्वी पर गिर पड़ती हैं।*

क्या ये बातें बिना जीव के हो सकती हैं?

दूसरा अनुवाक।

लकड़ी खाने वाला पेड़।

आर्य गजट ता० १४ दिसम्बर १९२२ ई० के अङ्क में श्रीयुत पण्डित सन्तरामजी बी० ए० का एक लेख "इण्डिया

* इसका और हाल नौवें अध्याय के प्रथम अनुवाक (सत्यां) में देखो।

मानेशाला “ ” छपा है । इसमें मडेगास्कर द्वीप के वक्त वृक्ष का हाल लिखा गया है । हमारे पण्डित सन्तराम जी बतलाते है कि उस देश के वाशिन्दे खास खास अवसरों पर इस वृक्ष रूपी देवता को एक क्वाँरी कन्या की भेंट चढ़ाया करते हैं । उनके लेख को हम यहाँ उद्धृत करते हैं —

"यह वृक्ष १० फीट ऊँचा होता है और इसमे इतनी ताक़त है कि यह आदमी को अपने जाल की फ़फरी में फँसा कर उसका काम तमाम कर सकता है । मौत के इस दरख्त की शकल बड़ी ही अनोखी है । इसका तना (धड़) लगभग १० फीट ऊँचा होता है । तने की शकल पैसे की सी होती है । इसकी छाल पर अजीब चित्रकारी की हुई होती है । जिससे यह एक बड़ा भारी अनन्नास सा मालूम होता है । इस के तने के ऊपर एक बहुत बड़ा थाल सा लगा रहता है । तने की चोटी से जमीन तक आठ पत्ते लटके रहते हैं, उनकी लम्बाई दस बारह फुट होती है । निकलने की जगह उनकी चौड़ाई एक फीट से दो तक हो जाती है । आखिर में सूड की तरह-जाकर उनकी नोक सुई की तरह तेज हो जाती है । इन पत्तों पर बड़े बड़े जहरीले कांटे बहुत अधिक सख्या में निकले रहते हैं । उनकी मोटाई बीच में १५ इञ्च से कम नहीं होती । उनकी नोकें जमीन

को छुये रहती हैं। तने पर के थाल के नीचे से कोई आधे दरजन सूत आगे रहते हैं । ये देखने में बहुत कमज़ोर मालूम पड़ते हैं। इनके सिर ऊपर की ओर उठे रहते हैं । ऐसा मालूम होता है कि तने की चोटी पर के उस थाल में से गाढा और मीठा रस कुछ निकलता रहता है। यह रस शायद पक्षियों को लुभाने के लिए पैदा होता है । इस में तेज़ नशा रहता है, यहां तक कि थोड़ा सा चखनेवाला उसी समय बेहोश हो जाता है ।

जर्मनी के एक यात्री का आख देखा हाल इस प्रकार है —

"इस टापू में एक जंगली जाति रहती है। वह इस दरख्त को पूजती है और इस पर अपनी कारी लड़कियों का बलिदान देती है। इस बलिप्रदान का तरीक़ा बड़ा खौफ़नाक होता है। अर्थात् उस लड़की को इस वृक्ष पर चढ़ने और इस का रस पीने पर विवश किया जाता है। मुझे मालूम नहीं था कि दरख्त लड़की को ऊपर से कूद पड़ने से कैसे रोकता है । परन्तु आखिर मुझे इस का भी पता लग गया। मैंने उस लड़की को देखा जिस की बलि होने वाली थी । उस के चेहरे से खौफ़ के निशानात साफ़ दिखलाई देते थे। उस के जातिवाले नाचते, कूदते, शराब पीते और खुशी मनाते रहे। अन्त में वे

इस बद किस्मत लड़की पर झपट पड़े। उन्हों ने इसे घेर लिया और इशारों से तथा चिल्ला चिल्ला कर दरख्त पर चढ़ जाने की आज्ञा देने लगे।

परन्तु वह बेचारी डर कर पीछे हट गई और दया के लिए प्रार्थना करने लगी। इस पर वे लोग क्रूरता के साथ उसे डराने धमकाने लगे। और आज्ञा मानने पर विवश किया, मगर लड़की ने न माना और बचने की कोशिश की। इस पर वे हाथों में भाले लेकर उसको उस मौत के वृक्ष की ओर हांकने लगे।

अखीरकार सब तरह से हार कर वह बेचारी उस वृक्ष के पास चली गई। थोड़ी देर वह चुप चाप खड़ी रही, फिर दिल की सारी ताक़त को जमा करके एक दम दरख्त की तरफ़ उछली और हाथों के सहारे ऊपर चढ़ गई और ऊपर चढ़ कर उसने उस रस को पी लिया।

एक बार वह फिर ऊपर को उछली। मुझे आशा थी कि वह नीचे कूद पड़ेगी क्योंकि मैं समझता था कि काम समाप्त हो चुका है। इस धुंधली रोशनी में मैं यह न देख सका कि उसके चिल्लाने का क्या कारण था। वहां जो कार्य हो रहा था, मैं अचानक इसे समझ गया, अर्थात जो वृक्ष एक मिनट पूर्व गुप चुप सुन्न जैसा मालूम होता

थी, वह उठा । जो सूत कमज़ोर मालूम पड़ते थे उनका हिलना बन्द हो गया और उन्होंने लड़की के सिर और कन्धों पर कुण्डली डाल कर उसे ऐसी मज़बूती से जकड़ लिया था कि उनसे छूटने की उसकी सारी कोशिश बेफायदा हुई।

हरी हरी टहनियां जो पहले बहुत कड़ी थीं ऐंठने लगीं। उन्होंने सांपों की तरह चारों ओर कुण्डली मार ली। वे बड़े बड़े पत्ते धीरे धीरे उठने लगे, उनके लम्बे लम्बे खौफनाक कांटे अन्दर की ओर हो गये थे। इनकी नोकें लड़की के शरीर में घुस गईं और उन्होंने शिकञ्जे की तरह उसको कस लिया।

जिस समय ये एक दूसरे से मिल गये तब उसके तने से गुलाबी रंग का पानी सा टपकने लगा *। इस पर वे सब (बलि देनेवाले) लोग बड़ी खुशी से फिर खाने पीने लगे, उन्होंने समझा कि देवता प्रसन्न होगया।

इस कथा को सुना कर प० सन्तराम जी लिखते हैं कि इस वृत्तान्त ने वनस्पतिविद्या के विद्वानों में एक बड़ी हलचल उत्पन्न कर दी है, और विद्वानों का समूह जल्दी ही मैडेगास्कर द्वीप को जा कर इस वृक्ष के भेदों को ज्ञात करने की कोशिश करेगा।

* अवश्य यह उस लड़की का रुधिर था। (भगलानन्द)

इस उद्धरण को पढ़ कर कौन समझदार मनुष्य उस हिंसक "मनुष्य-भक्षक" वृक्ष के जीवधारी होने से इनकार कर सकता है ?



चौथा अध्याय ।

पौधा कहें या जन्तु ?

पहला अनुवाक ।

कुछ ऐसे पौधे हैं जिनके बारे में अभी तक यह निश्चय नहीं हुआ कि उन्हें जीव जन्तु, कीड़े मकोड़ों की श्रेणी में रक्खा जाय या वृक्षों में। पुस्तक (The animal World) "पाशविक जगत" से प्रोफ़ेसर गैम्बल (F W Gamble) साहब कहते हैं :—

"अनेकों पशु-शरीर विद्या (Zoology) की पुस्तकों मे यह वर्णन आया है कि ऐसे अनेक पदार्थ हैं जो जन्तु भी ज्ञात होते हैं और वनस्पति भी । या दोनों न माने जाय । वे सृष्टि-उत्पत्ति के विकास में धीरे धीरे, उन्नति करते हुये एक खास दर्जे तक ही पहुच पाये हैं। हम उन के कुछ दृष्टांत यहा प्रकट किये देते हैं ।

दूसरा अनुवाक ।

वलेस्नारिया ।

वलेस्नारिया Volesnaria नाम की घास पानी में पैदा होती है । इसे सूक्ष्म वीक्षण यन्त्र (माइक्रासकोप) की सहायता से देखा जाय तो जिस प्रकार प्राणियों के शरीर में खून की धारा बहती है उसी प्रकार इन वनस्पतियों के अन्दर चेतनोत्पादक प्रोटोप्लाज्म (Protoplasm) की धारा बहती हुई प्रत्यक्ष दिखाई देती है ।

देखो पुस्तक विकासवाद पृष्ठ २८ ।

२—ट्रेड्स्कांशिया ।

Tradescantia नाम के पौधे का भी वृत्तान्त इसी प्रकार का ही है ।

३—मानेर यमोथा आदि ।

ये कीटाणु नाग बेल, मानेर तथा यमोवा आदि अब तक सन्दिग्ध दशा में हैं। कोई इन्हें कीट कहता है, कोई वनस्पति। पर कट जाने पर इनके दोनों खण्डों का जीवित रहना प्रगट करता है कि ये कीट नहीं किन्तु वनस्पति हैं। क्योंकि वनस्पति में यह गुण पाया जाता है कि वह कटकर दूसरी जगह लगाई जाय और जीवित रहे, परन्तु कोई जन्तु कट-

कर जीता नहीं रहता, इस व्यापक नियम के अनुसार ये कीटाणु नहीं हैं। वे निस्सन्देह वनस्पति हैं।

देखो अक्षरविज्ञान पृष्ठ १९।

४—वाकोल।

यह Vocuole अत्यन्त सूक्ष्म जन्तु भी अन्य साधारण पशुओं की श्रेणी में रक्खा जा सकता है, यद्यपि इसका मिलान अत्यन्त सूक्ष्म पौधों में है।

प्रोटोप्लाज्म (Protoplasm) में एक अत्यन्त छोटा सा स्थान रहता है, जिसे केन्द्र कहना चाहिये। यह बड़ा उपयोगी अवयव है लेकिन वह पशुओं तथा पौधों दोनों में विद्यमान रहता है। इस (प्रोटोप्लाज्म) का दूसरा भाग हरे रंग का होता है जिससे यह पौधा प्रतीत होता है। विशेषत. इस लिये कि इसके बीच में दो आँखों के पलकों के चिन्ह मिलते हैं। अत उनमें भूरे या पीले रंग की आखें (Eye spots) भी मौजूद हैं।

निदान् इसकी गणना भी पौधों और पशुओं दोनों में की जा रही है।

५—अनिमोनिस।

यह (Anemones) एक जंगली फल समुद्री तट पर होता है। इसको लोग पौधा मानते थे, परन्तु पेरिस की

विज्ञान-समिति (Academy of science) में प्रोफेसर रयूमर Reaumur ने यह सिद्ध कर दिया कि वह पौधा नहीं बल्कि पशु श्रेणी में है। वस्तुत. यह इतना अधिक पौधों के गुणों स मिलता जुलता सा है कि कोई भेद वृक्ष से इसमें नहीं जान पड़ता। प्रो० फ्रान्स पुस्तक (Germs of mind in plants) "पौधों की मानसिक दशा" के पृष्ठ २१ पर कहते हैं —

"सहस्रों प्रकार के जन्तु सरोवरों, पर्वतों में तथा समुद्र की तली में ऐसे ऐसे भरे पड़े हैं, जो रेंगते हैं, नाचते हैं, चक्कर लगाते हैं, या पानी में तीर के सदृश तन जाया करते हैं। परन्तु इतने पर भी विज्ञानवेत्तागण उन्हें "पौधा" ही नाम दे रहे हैं।" अवश्यही इससे वृक्ष का जीवधारी होना सिद्ध है।

६—प्रोटिस्टा पौधा।

आर्य मित्र ता० १७ मई १९१७ ई० में श्री म० रामलाल साह जी नैनीनिवासी का एक लेख निम्न प्रकार छपा था —

"... इस बात को हैकल साहब ने सूक्ष्मदर्शक यन्त्र द्वारा सिद्ध कर दिया है कि इस पृथ्वी में बहुत ऐसे जीव हैं जिनको हम न जानवर ही कह सकते हैं न वनस्पति।

दुनिया के कई भागों में अनेक प्रकार के ऐसे वृक्ष पाये जाते हैं जिनकी गणना पशुओं में है न वृक्षों में इनको अंगरेज़ी में Protista प्रोटिस्टा अर्थात जानवर

वनस्पति के मध्य के जीव कहते है। ये अद्भुत प्राणी वृक्ष के आकार में हैं। "

७—नाग बेल।

इसे अमर बौरिया या अमर बेल भी कहते हैं। अगरेजी में इसका नाम Roots king plant है। यह पेड़ों के ऊपर ऊपर लपटी रहती है। यह अपनी जड़ भूमि म नहीं रखती, किन्तु अन्य वृक्षों के ऊपर २ ही सर्प की भांति रेंगती रहती है। यह जिस पेड़ का आधार रखती है उसी को खाकर स्वय बढ़ती है। टूटजाने पर टूटा हुआ टुकड़ा अलग एक लता बन कर अपना विस्तार करने लगता है।

यद्यपि यह वनस्पति सर्प आदि जन्तुओं से बहुत कुछ मिलता है, और इसे "नाग बेल" कहते भी है, पर वनस्पति के गुण इसमें आधे से अधिक पाये जाते हैं, इसलिए इसे वनस्पति ही कहते हैं।

यह गरमी में उपजता है और शीत काल में फलता फूलता है — यद्यपि अन्य सारे वृक्ष उन दिनों पाला मार जाते और ठिठुरे हुये पड़े रहते हैं। देखो पुस्तक अक्षर-विज्ञान पृष्ठ १८।

८—चिड़ी चावड़िया।

इस नाम की एक लता मारवाड़ देश में होती है, जो अमर बेल सदृश ही है। अर्थात् इसकी जड़ भूमि में नहीं होती

बल्कि यह घास या छोटे छोटे पौधों के ऊपर फैल जाती है, और उन्हें ही खा कर पुष्ट होती है।

अवश्य ही यह चैतन्यता का लक्षण है।

९—फोसिल पौधा।

मिस्टर स्काट D H Scoth कहते हैं—

"... फोसिल नाम वाले पौधों का हाल बहुत ज्ञात नहीं है, परन्तु ऐतिहासिकों की दृष्टि में इस पौधे का बड़ा मान्य (Importance) है। वे पशुओं के सदृश ही प्राय पाये जा रहे हैं। अगर कुछ बातों में वह पौधा मालूम होता है, तो दूसरी बातों के विचार से पशु ज्ञात हो रहा है।

यद्यपि पौधों में पशुओं की हड्डी (skeleton) जैसी कोई वस्तु नहीं होती, तथापि इस "फोसिल" नाम वाले पौधे मे वह भी पाया जा रहा है।

पत्तियों और डालियों आदि के होने के सिवाय हम इस फासिल पौधे में एक बड़ी विचित्र बात यह देखते हैं, कि इसके उत्तम प्रकारों में ऐसे नमूने देखे जाते हैं जो पत्थर जैसे जम गये है। अर्थात् इनमें खनिज पदार्थ इतना अधिक प्रवेश कर जाता है कि इनके अवशेष भाग को सुरक्षित रख सकता है*।

* Fossil का अर्थ यह है कि वनस्पति या पशुओं का अवशेष भाग जो पत्थर जैसा बन गया और पृथ्वी खोदने पर निकाला गया हो। (भगवानन्द)

दूसरा अनुवाक ।

१—मेंढक ।

कई ऐसे जीव जन्तु हैं जिनकी उत्पत्ति वृक्ष सदृश होती है । उन में से एक "मेंढक" है ।

मेंढक का मुरदा शरीर पीस-कर चूरा पास रख लो फिर जब बरसात की ऋतु आवे तब उस चूरा को पृथ्वी पर छितराय दो जैसे गेहूं आदि के बीज बोए जाते हैं, तो देखोगे कि मेंढकिया सैकड़ों पैदा हो जायगी । इस से सिद्ध होगा कि मेंढक जैसे प्रत्यक्ष उछलने कूदनेवाले जीवधारी की उत्पत्ति वृक्ष सदृश ही है, अत वृक्षों को मेंढकों सदृश जीवधारी मानने मे क्यो असमञ्जस है ?

२—वीर बहूटी ।

इसी प्रकार वीर बहूटी का चूरा बोने से भी उसकी उत्पत्ति हो जायगी ।

३—केंचुआ ।

इसी प्रकार केंचुवे की भी उत्पत्ति सम्भव है । इस का विबरण पुस्तक अक्षरविज्ञान पृष्ठ २१ पर एक टिप्पणी में यों दिया हुआ है कि—

"केंचुये कभी कभी छेद टो फूट के भी देखे गए"

हैं। ये ज़मीन पर ११-१२ दिन में तैयार होते हैं। १ ज़मीन ऊंची होती है, २ गोल होती है। ३ कठिन होती है, ४ रंग बदलती है, ५ चमकता है ६ ज़मीन से लगाव छूट जाता है, ७ वृद्धि होती है, ८ चैतन्यता होती है, ९ गति होती है, १० रेंगने लगता है।"

अब पाठक गण विचार करें कि वृक्षों की भांति भूमि फोड़ कर उत्पन्न होने वाला केंचुवा अगर जीवधारी है तो फिर वृक्षों के जीवधारी होने में क्या सन्देह हो सकता है।

तीसरा अनुवाक।

प्रोफ़ेसर जे० प्रेट्लन्ड फ़ार्मर साहब अपनी पुस्तक (Plant-Life) वृक्षजीवन के पृष्ठ ९-१० पर यों लिखते हैं कि—

"हम अन्त में इसी परिणाम पर पहुंचते हैं कि वनस्पति तथा पशु-वर्ग के बीच मे कोई भारी भेद नहीं है। बल्कि इन दोनों प्रकार के जीवधारियों में जो समानता दृष्टि गोचर होती है, वह हमे अचम्मे मे डाल रही है। जो कुछ भेद भाव है, वह केवल स्थितियों या बाहरी बनावटों (Features) में है, और वह इस कारण से है; कि दोनों के "आहार" प्राप्ति की प्रक्रियायें भिन्न भिन्न प्रकार की हैं।

अगर हम Organic & inorganic अङ्गों वाले और बिना अङ्गों वाले ममार पर दृष्टिपात करें तो ज्ञात होगा कि अब इन की सीमाओं का पूर्व काल से अधिक यथार्थ पता लग गया है। और बहुतेरे कार्यों का जो इन मे जीवन और गति इत्यादि को सिद्ध कर रहे हैं, अब भली प्रकार जान लिया गया है। यह बात भी मालूम हो गई है कि हरारत या सञ्चालन उन की गति का आधार रूप है। जिन से उन के शरीर की बनावट या पालन पोषण मे सहायता मिलती है। और वे Catolytic वर्ग के (बिना अङ्गोंवाले शरीरों के) सदृश भासित होती हैं। जो उन पशुओं के सदृश अपने अन्दर रासायनिक परिवर्तन करते हुए शरीर के ह्रास से बचे रहते हैं।



पांचवां अध्याय।

वृक्ष की अन्य जन्तुओं से समानता है।

जो लोग यह कहा करते हैं कि वृक्षों में ज्ञान इन्द्रियों का अभाव है, इसलिये वे चेतन नहीं माने जा सकते, उन्हें जानना चाहिये कि वृक्ष तो क्या कई जीव जन्तु भी जिनके जीवधारी होने में किसी को कभी शङ्का नहीं हो सकती, सारी ज्ञान-इन्द्रियां नहीं रखते। इस बारे में प्रोफेसर गैम्बल साहब अपनी पुस्तक Animal world (पशु संसार) में यों कथन कर रहे हैं —

क—परामेशियम।

ये Paramecium या स्लिपर Slipper फिसिलने वाले नाम के अत्यन्त छोटे छोटे जन्तु, जो सूक्ष्म-दर्शक-यन्त्र के बिना नहीं देख जा सकते, तीन सम्बन्ध या डोरे रखते हैं, जिनकी सहायता से किसी भी सहारे की वस्तु पर लटक रहते हैं, यद्यपि वे उस (सहारे) का तनिक भी ज्ञान नहीं रखते (क्योंकि ज्ञान-इन्द्रियों का उन के शरीर में अभाव है।)

ख—मेडूसा।

इस Medusae या Rhizastoma में केवल एकही प्रकार की गति है—अर्थात लहराना, हिलना, डोलना। परन्तु वह इस एकही गति से अपने आवश्यकता की सारी बातें पूरी कर लेता है—याने वह पानी पर तैरता रहता है, अपने मुह में ख़ुराक ले लेता है और अपने अवयवों को हवा खिलाता है (यद्यपि इसमें भी ज्ञान इन्द्रियों का अभाव है ।।

ग—पृथ्वी के कीडे।

इन Earth worm का यह हाल है कि वे अच्छी तरह जीवन बिताते हैं। इनकी आखें नहीं होतीं, परन्तु प्रकाश और अन्धकार मे भेद जान लेते हैं। वे रात्रि के अन्धकार मे अपने बिलों में घुस जाते हैं और सूर्योदय होने पर उनमें से बाहर निकल आते हैं। गरमी सरदी का उन पर यथेष्ट प्रभाव पड़ता है। वे गरमी से घबराकर भूमि से बाहर निकल आते हैं और सरदी पडने पर वे अपने बिलों के अन्दर चले जाते हैं।

निदान् इन जीव जन्तुओं और पशुओं में यह बात पाई जाती है कि यद्यपि उनमें बाह्य-इन्द्रिया प्रत्यक्ष रूप में नहीं प्रतीत होतीं (तथापि वे जीवन को भली प्रकार जारी रख सकते हैं)।

घ—स्पञ्ज।

इस Sponge स्पञ्ज का हाल यों है कि वह कोई गति वाला कार्य सम्पादन करता हुआ नहीं देखा जाता।

ङ—पोलाइप।

यह Polype याने मूंगे वाला जन्तु केवल अपनी जिह्वा को बाहर निकालता है (जिससे कुछ खा सके)।

च—हामस्टर।

यह Hamster नाम का जन्तु छ मास तक पड़ा सोता ही रहता है।

छ—स्केल।

यह Scale नामी जन्तु बिलकुल टस से मस भी नहीं करता।

इन दृष्टान्तो से ज्ञात हो रहा है कि जिन के जीवधारी होने में तनिक भी सन्देह नहीं हो सकता, उन पशुओं में भी प्रयत्न की न्यूनता पाई जाती है, तो फिर भला वृक्षों की तो बातही क्या कही जाय।



छठवां अध्याय।

वृक्ष श्वास लेता है।

पहला अनुवाक।

वृक्ष को हम जीवधारी इस कारण कहते हैं कि जिस प्रकार अन्य जीवधारी लोग (पशु, पक्षी, मनुष्य) वायु का सेवन करते हैं — याने श्वासा अन्दर खींचते हैं और बाहर फेंकते हैं। उसी प्रकार ये वृक्ष भी करते हैं।

अवश्यही जीवधारियों के जीवन का मूल वायु ही है। वे अन्न पानी बिना कई दिनों तक जीवित रह सकते हैं परन्तु हवा के बिना थोड़े मिनटों भी जीवित रहना असम्भव है। ऐसे परम उपयोगी वस्तु की, जैसी हम मनुष्यों को आवश्यकता है, वैसे ही वृक्षों को भी है। अच्छा अब इसका विवरण सुनिये —

एक स्कूली पुस्तक पदार्थ-विज्ञान विटप (Primer of Physical science) में लिखा है कि —

हम लोग जो श्वास बाहर फेंकते हैं वह अन्दर की गलाजत लेकर बाहर जाती है। इसका नाम कार्बोनिक ऐसिड

गेस (Carbonic Acid Gas) या प्राण-नाशकवायु * है। इसको वृक्ष पी लेते हैं (याने अपने अन्दर खींच लेते हैं) और वह उनको मुफीद (लाभदायक) है, इसी प्रकार वृक्ष में से जो हवा निकलती है वह आक्सिजन (oxygine) अर्थात प्राणप्रद वायु †) है जो हम लोगों के लिये लाभदायक है (अत मनुष्य उसे अपने अन्दर खींच ले जाया करता है) ।

इससे सिद्ध हुआ कि वृक्ष भी हमारे सदृश श्वासा लेते हैं फिर जब दोनों में समानता है तो यह कैसे हो सकता है कि इन दोनो (वायु म श्वासा लेनेवालो) में से एक तो जीवधारी हो पर दूसरा निर्जीव ?

फिर उसी पुस्तक के पृ० ८० पर देखिये यो लिखा है।

" यह तत्व (कार्बन) आदमी और जानवरों के जीने के लिये निहायत जरूरी है । लकड़ी जलाने मे कोयला निकलता है और गोश्त जलाने से भी कोयला बन जाता है । "

यहां भी दोनों की ममानता सिद्ध है, अर्थात वृक्ष की लकड़ी और पशु का माम दोनों जलने पर "कोयला" ही बन जाते हैं ।

* १ शास्त्रों म इसे अपान वायु कहा गया है ।

† २ " " प्राण " "

प्रश्न—अगर इन दोनों के सिवाय अन्य वस्तुएं जैसे कङ्कड़ पत्थर आदि को भी जला दे तो उनसे भी कोयला ही तो बनेगा ?

उत्तर—लकड़ी, और मास से जो कोयला बनता है वह carbon कार्बन तत्व वाला है, पर अन्यों में वह गुण नहीं है। इस तत्व का वर्णन इसी पुस्तक में इस प्रकार आया है—

"सब खाने की चीजों में यह (कोयला) रहता है और अगर दुनिया में यह तत्व न होता तो जानवर और दरख्त न होते।"

अब पाठक-गण विचार करें कि जहा इस तत्व के न होने पर जानवर न होते, वहा वृक्ष भी न रह सकते। इस लिये अवश्य ही पशु और वृक्ष समान हैं अत वृक्ष भी जीवधारी हैं।

हवा पीने में समानता होने के सिवाय प्रकाश या अग्नि तत्व को ग्रहण करने मे भी इनकी ऐसीही सादृश्यता है। देखिये उसी पुस्तक के पृष्ठ ७६ पर यों लिखा है—

"जानवरों में से हर वक्त गरमी बाहर निकला करती है और हकीक़त मे रासायनिक संयोग से वे हर वक्त जला करते हैं पर दरख्त सूरज की गरमी और रोशनी अपने अन्दर ले लेते हैं और उनमें ऐसी चीजें बना करती हैं जो जलें।"

फिर उसी पुस्तक में यों लिखा है :—

"पत्तियो के नीचे की ओर बहुत छोटे छोटे छेद रहा करते हैं, जिन्हे तुम नहीं देख सकते क्योंकि वे अत्यन्त सूक्ष्म हैं। वे छेद उनके मुख सदृश हैं, परन्तु उनके द्वारा खाने का काम नहीं होता। उनसे वे श्वासा भीतर खींचते और बाहर फेकते हैं और अपने अन्दर की ठडक (या पानी के भाग) Moisture को वे (छेद) Gas गैस (एक प्रकार के भाफ) के रूप मे बाहर निकालते हैं।"

दूसरा अनुवाक।

वृक्ष श्वासा किस प्रकार लेते होगे ? इस प्रश्न का उत्तर श्रीमती हेमन्त कुमारी देवी जी अपनी पुस्तक "वैज्ञानिक खेती" प्रथम भाग में यो दे रही हैं —

" वृक्ष सूर्य की रोशनी से कार्बोनिक एसिड गैस ले कर अपनी देह को तन्दुरुस्त करते हैं और आक्सिजन छोड़ते जाते हैं। अधेरे मे वे कार्बोनिक एसिड छोड़ते हैं। श्वास के जरिये मनुष्य जिस कार्बोनिक एसिड गैस को छोड़ते हैं, वृक्ष उसे पाकर बलवान होते हैं। वृक्ष के द्वारा छोड़ी हुई आक्सिजन से मनुष्यो की रक्षा होती है। यदि मनुष्यों के साथ वृक्षों का यह सम्बन्ध न रहे तो ससार में प्राणियों का जिन्दा बना रहना मुश्किल है।

कार्बोनिक एसिड वृक्षों की एक खास श्वासा है। आग जलाने, जीवों के श्वास लेने और सड़े गले जीव जन्तुओं से कार्बानिक ऐसिड गैस निकलती रहती है। वायु मण्डल के ३०० हिस्सों में एक हिस्सा कार्बोनिक ऐसिड गैस है। • कार्बोनिक ऐसिड् गैस से वृक्ष की अंगारक शक्ति पुष्ट होती है।

पौधे, जल और वायु से ये दोनों चीजें अम्लजन, द्रजन (Oxygen Hydrogen) अपनी जरूरत के मुताबिक लेते हैं। ये चीजे पोधो के लिये निहायत जरूरी हैं।

. शोराजन (Nitrogen) पौधों की एक खास खूराक है। जमीन का हवा मे यह खूब रहता है। पौधे इसे तीन रीतियो से लेते हैं (१) वायु मण्डल से शोराजन (नाइ-ट्रोजन) की सूरत में और (२) दुसरे एमोनिया की सूरत मे और (३) तीसरे मट्टी से नाइट्रिक एसिड की सूरत में • शोराजन से पौधे की पत्तिया और टहनिया मजबूत हो कर हरी रगत प्राप्त करती हैं।"

फिर पृष्ठ २० पर यह लिखती हैं —

"जमीन के छेद खुल जाने से आक्सिजन उस के भीतर घद्रिज्जो को लाभदायक हो जाता है। खास कर Oxygen आक्सिजन का और एक गुण यह है कि वस

से जमीन में नाइट्रेट Nitrate बनता है। यह नाइट्रेट पौधों की जिन्दगी को बहुत फायदेमन्द है।"

इन बातों का साराश यही है कि वृक्ष भी हम लोगों की भांति श्वास लेते और छोड़ते हैं, अत वे भी हमारे सदृश जीवधारी हैं।

३—अनुवाक।

हम एक चक्र यहां दर्शाते हैं जिस के द्वारा पाठकगण आसानी से यह जान सकेंगे कि वायु के किस क़िस्म से क्या क्या कार्य सम्पादन हो रहे हैं —

नाम वायु का	कार्यविशेष
१ Carbonic Acid Gas कारबोनिक एसिड गैस (प्राणनाशक वायु)	मनुष्य इसे भीतर से बाहर फेंकता है और वृक्ष भी लेता है। यह वायुमंडल में १/३३०० भाग है (अपान वायु)
२ Oxygen (अम्ल जन) (प्राणप्रद वायु)	वृक्ष इसे फेंकते हैं और हम मनुष्य लोग अपने भीतर खींचते हैं (प्राण वायु)
३ Carbon	लकड़ी या मास को जला

नाम वायु का	कार्यविशेष
(कोयला तत्व) (कार्बन)	से जो तत्व उत्पन्न होता है वह कार्बन है, जो खाने की प्रत्येक वस्तु मे विद्यमान रहता है।
Hydrogen हाइड्रोजन (उदजन)	पौधे इस धातु को वायु मे से खींचते हैं।
५ Nitrogen नाइट्रोजन (शोराजन)	पुष्टिकारक पदार्थ। इसे वृक्ष पीते हैं जिससे उन की पत्तिया पुष्ट हो कर हरा रग ग्रहण करती हैं। यह मनुष्य के लिये भी बलकारक है।
६ Phosphorus फास्फरस	यह पौधो को पुष्ट करता है।



सातवां अध्याय।

वृक्ष देखता, सुनता सूंघता है।

पहला अनुवाक।

ऊपरी पाचवीं अध्याय से यह प्रगट हो रहा है कि अनेक जीवधारी छोटे छोटे कीड़े मकोड़े आदि भी ऐसे हैं जिनमें सारी ज्ञान-इन्द्रिया विद्यमान नहीं हैं, अत अगर वृक्षों में भी सब इन्द्रियां मौजूद न हों तो इससे उनके जीवधारी होने में सन्देह नहीं हो सकता। परन्तु विद्वानों ने दर्शाया है कि उनमें किसी न किसी अश तक ज्ञान इन्द्रियों की विद्यमानता पाई जाती है। अव इस अध्याय में हम यह दर्शायेंगे कि वृक्षों में किस प्रकार आँख कान आदि के कार्य हो रहे हैं। अच्छा सुनिये—

दूसरा अनुवाक।

वृक्ष देखते हैं।

प्रो० फ्रान्स अपनी पुस्तक Germs of mind in plants (पौधों की मानसिक दशा) पृष्ठ २५—३० में यों कथन कर रहे हैं —

"पौधों में आँख या देखने की शक्ति विद्यमान है। लताओं पर ध्यान दो कि वे अपना सहारा ढूंढती रहती हैं और जिस ओर — दाहिने, बायें, आगे, पीछे, ऊपर, नीचे, जहां कहीं कोई आश्रय देनेवाली वस्तु दीख पड़ती है तो वे उसी पर लपट जाने के लिए आगे बढ़ती हैं। यह देखा जाता है कि लताओं की टहनिया बहुधा हवा मे लहराती रहती हैं और उस समय वे इस खोज मे लगी रहती हैं कि जो वस्तु सहारे की मिल जाय उसी पर चढ़ जायँ। अगर कोई द्राक्ष (अंगूर) की लता को दोपहर तक ध्यान से देखे तो ज्ञात कर सकेगा कि उसकी टहनियां सचमुच उक्त प्रकार की खोज में व्यग्र रहती हुई प्रत्येक ६—७ मिनटों पर अपने नोकों को घुमाया करती हैं (यही खोज में प्रवृत्त रहने का चिह्न है) और उसी समय में उनके नोक (Tendrils) धीमी चाल से हवा में ऊंचे चढ़ते हैं, और एक के पीछे दूसरे भी सब के सब ऐसा ही करते रहते हैं। परन्तु जब उन्हें कोई वृक्ष, खम्भा, दीवार या अन्य ऊंची वस्तु नहीं मिलती कि उसके इर्द गिर्द लपट जायं और इसी प्रकार लपटते हुये बढ़ें, तो फिर लाचार हो कर वे नीचे को झुकती हैं कि वहीं शायद कोई दीवार आदि मिल जाय। परन्तु अगर नीचे भी ऐसा कोई सहारा नहीं मिलता तो वे लतायें फिर अपनी नोकों को ऊपर उठाती

हैं, और जहां तक ऊंची चढ सकती हैं उठती हैं, इत्यादि घटनायें अवश्य यह सिद्ध कर रही हैं कि लतायें देखती हैं*, क्योंकि जब वह किसी के आश्रय को प्राप्त कर लेती हैं, तो उसके चारों ओर लपटती हुई आगे बढती हुई चली जाती हैं। और उसे वे ऐसी मज़बूती से जकड़ लेती हैं कि बिना ज़ख़म दिये हुये क्या मजाल कि कोई उन्हें उस से अलग कर सके।"

निदान् वृक्षों का देखना सिद्ध हो रहा है।

पौधों में प्रकाश का ज्ञान।

प्रो० फ्रान्स साहब फिर पृष्ठ ६३ पर कहते हैं कि—

"प्रकाश, अर्थात् देखने के कार्य में पौधे ऐसे कुशल हैं, कि उनकी इस अद्भुत शक्ति पर मनुष्यों को पूरा यक़ीन नहीं होता। यह ज्ञान इन्द्रिय उनकी इतनी उत्तम और स्पष्ट है कि अन्धकार में जो पत्तियां बढती हैं, वे प्रकाश (उजियाले) के उन सूक्ष्म से सूक्ष्म भेदों तक को भी ताड़ लेती हैं, जिन्हें हमारे वैज्ञानिक यन्त्र (Scientific apparatus,) तक भी नहीं भाप पाते। और तो क्या, वे

* अगर देखने की शक्ति न होती तो रास्ता कैसे पा जाते। यही बात महाभारत में भी लिखी है जिसे हम उसी प्रकरण में उपस्थित करेंगे। (मंगलानन्द)

म से भी कहीं अधिक (प्रकाश के सूक्ष्म अवयवो को) देख सकती हैं।

नरगिस (Violet) नाम के फूल के पौधे की किरणें ऐसी तीक्ष्ण होती हैं कि मनुष्य की आखो को चौधिया देती हैं। और इन किरणों का प्रभाव उन फूलों, पत्तियो पर बहुत ज्यादा पड़ता है। यद्यपि उसकी लाली जो हमारी आखों को सहन नहीं हो सकती, उन (फूलो, पत्तियों) पर कुछ प्रभाव नहीं डालती।

उन किरणो के भेद, जो हमें रग विरगे जान पडते हैं, पौधो पर भी हमारे ही समान प्रभाव डालते हैं।"

इत्यादि बातो से वृक्षो मे चक्षु-इन्द्रिय का होना सिद्ध है।



तीसरा अनुवाक।

वृक्ष सुनता है।

प्रो० फ्रास अपनी पुस्तक "पौधो की मानसिक दशा" पृष्ठ ९६ पर कहते हैं —

"वृक्षो मे सुनने की शक्ति विद्यमान है। यद्यपि वे

हमारे सदृश सब प्रकार के शब्दों को नहीं सुनते, परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि वे जोर की आवाजों पर सचेत रहते हैं। हवा के बहने, आंधी के झोंके तथा अन्य ऐसी प्राकृतिक घटनाओं के शब्दों को अवश्य वे सुनते और प्रभावित होते हैं। बहुत सम्भव है कि उनकी तुलना मछलियों के साथ इस विषय में की जाय क्योंकि इन के भी सुनने पर बड़ा झगड़ा है।* "

पाठकगण! आप ने प्राय यह ज्ञात किया होगा कि जोर के शब्दों का प्रभाव पशु, पक्षियों और मनुष्यों पर किस प्रकार पड़ता है। हम देखते हैं, कि अगर शिकारी मनुष्य किसी पक्षी को मारने की गरज से बन्दूक चलाता है तो चाहे उस के निशाने वाला पक्षी उस निशाने की ही गोली से मरता हो, परन्तु निकट की सैकड़ों चिड़िया उड़ कर भागने लगती हैं और कई उस शब्द के प्रभाव से मर जाती और कई मूर्च्छित हो जाती हैं। इतना ही क्यों, हम तो यह भी देख रहे हैं कि घोर जोरदार शब्दों, कड़ाके की आवाजों और बिजली की कड़क आदि के द्वारा गर्भवती स्त्रियों के गर्भों तक का नाश (गर्भ-पात) हो जाया करता है। अत इस में क्यों सन्देह किया जाय कि

* अर्थात् कई विद्वानों का मत है कि मछली में श्रवणशक्ति नहीं है। (भगवानन्द)

इसी प्रकार भारी आवाजों का प्रभाव वृक्षों पर पड़ता है। यही उनका सुनना है।

चौथा अनुवाक।

—:o:—

वृक्ष सूघता है।

प्रोफेसर फ्रान्स साहब अपनी पुस्तक (पौधों) के पृष्ठ ५२ पर वृक्षों में "सूघने" की शक्ति का होना भी प्रगट कर रहे हैं।

" वे पौधे जो मांसाहारी हैं अपने शिकार वाले जन्तुओं का गन्ध सूघ कर उनका निकट होना ताड़ लेते हैं, और तब उन्हें शिकार करने की चेष्टा में प्रवृत्त होते हैं। यह चेष्टा उन पौधों का उन जन्तुओं की ओर (Crawl) 'रेंगना' ही है। " इस के सिवाय हम देखते हैं कि अगर सरसों की खली छोटे पौधों की जड़ों पर खाद के रूप में डाल दी जाय तो वे उसके क्षार को न सहन कर सकने के कारण मुरझा जाते हैं या मर जाते हैं। ऐसा क्यों? अवश्य ही इस से उन के घ्राण-इन्द्रिय का पता लगता है। वे उस खली की क्षार को सूघते हैं और प्रभावित हो जाते हैं, ठीक जिस प्रकार हम मनुष्य लोग

दुर्गन्ध से व्याकुल हुआ करते हैं। यहां तक कि अगर दुर्ग युक्त वायु से ही हमें बार बार श्वासा लेने के लिये विव होना पड़े तो हमारी मौत का कारण होता है। जो मेल पर हैजा इत्यादि रोग फैल कर सैंकड़ों मनुष्यों की मृ देखने मे आती है यह इस का प्रत्यक्ष प्रमाण है।

निदान जैसे दुर्गन्ध से हमारी मौत होती है उस प्रकार वृक्षों के लिये जो वस्तु दुर्गन्ध है उस से उन भी मौत हो जाती है, अत उन में घ्राण इन्द्रिय या "सूंघने" की शक्ति का विद्यमान होना मानना पड़ेगा।



आठवां अध्याय।

वृक्ष खाता है।

पहला अनुवाक।

—○◦○—

वृक्ष का श्वास लेना और देखना, सुनना, सूँघना बतला चुकने के पश्चात् अब हम यह प्रगट करेंगे कि उस में रसना याने स्वाद लेने की इन्द्रिय भी मौजूद है और वह खाना खाता और हज्म करता है। अच्छा सुनिये—

पुस्तक (Nature Study Book No 1) प्राकृतिक पाठ नम्बर १ में यों लिखा है—

पृष्ठ ४० पर — दरख्त की दो छोटी पत्तियों में से एक को तोड लो। अब देखोगे कि तोडी हुई पत्ती नहीं बढती परन्तु लगी हुई पत्ती बढती जाती है।

नतीजा—हरे पौधे के हिस्से बढते रहते हैं।

पृष्ठ ४१—पत्ती या छोटे पौधे में बाहर से गिज़ा (भोजन) आने के कारण वजन अधिक हो जाता है।

प्रश्न—भीगी हुई लकडी और दरख्त की शाख के बढने में फ़र्क बतलाओ ?

उत्तर— भीगी हुई लकडी मे पानी जज्ब हो जाता है, मगर उस से कोई नये हिस्से नहीं निकलते, बढती हुई शाख के अन्दर हलके और रेशे सब बढ जाते हैं।

नतीजा— पौधे खाना हज्म करते है। पौधे में खाना हज्म हो जाने के कारण रेशे और हलके बढ जाते हैं।

दूसरा अनुवाक।

— ० —

फिर देखो पुस्तक Nature, study of Burmah पृष्ठ २८ पर यो लिखा है—

" वृक्षों की जडो मे से पत्तियो मे पानी आता है। जिस मे अन्य तत्वो के परमाणु अत्यन्त सूक्ष्म रूप में मिले हुये रहत है। पत्तिओ मे उन के (छोटे २) मुखों याते छिद्रो द्वारा वायु प्रवेश करता है। हरे रङ्ग का पदार्थ (Chlorophyll) जडों वाले रसयुक्त पदार्थो मे से और हवा में से भी (Starch) अर्थात् जीवन सत्व या निशास्ता और शक्कर (मिठास) को पैदा करता है।

मिठास और स्टार्च वृक्षो के मुख्य खाद्य द्रव्य है, और वे पत्तियों में बन कर जब तैयार हो जाते हैं, तब वे पानी में रस के रूप में घुल कर पौधों के नसों और

पत्तियों के रेशों मे होते हुये वृक्ष के सारे नस नाडियो मे प्रवेश करते हैं। और तब सारे भाग—तना डालियो आदि मे पहुच जाते है। परन्तु इन का भारी खजाना जड और तना मे ही सुरक्षित रहता है।"

तीसरा अनुवाक।

—०—

प्रो० जे० ग्रेटलैण्ड फार्मर साहब अपनी पुस्तक (Plant Life) वृक्ष जीवन पृष्ठ २८—२९ पर यों कथन कर रहे हैं —

"पौधों के ऊपरी छाल (Skin) में छोटे छोटे छिद्र (cells) रहते हैं, उन्ही के द्वारा वह अपने खाद्य द्रव्यो को अपने अन्दर प्रविष्ट करता है। और यह प्रक्रिया ऐसी उत्तमता से सम्पादन होती है, कि उसकी खूराक रस के रूप में अन्दर पहुच जाती है (कि पचाने में कष्ट न पड़े) क्षार और अन्य ठोस पदार्थों का भी रस बन जाता है, तब वे पौधों के अन्दर जज्ब होते हैं। और गैसें यानें आक्सिजिन, कार्बन इत्यादि भी इसी प्रकार उस में प्रवेश करते हैं।

परन्तु पौधों में पानी का कार्य कुछ भिन्न प्रकार से

से होता है। (ख) पौधा इन चीजों को मट्टी मे लेता है।—

१ फासफरस—यह पौधे की जरूरी चीज है। इस में दो यौगिक चीजें हैं, जोकि पौधों को पुष्ट करती हैं—एक अद्रव कैल्शियम् फास्टफेट दूसरे द्रवनीय कैल्शियम् फास्फेट।"

पाठकगण। ऊपर के उद्धरणो से आप ने भली प्रकार जान लिया होगा कि वृक्ष में स्वाद लेने, खाना खाने और उसे पचाने की शक्तिया विद्यमान हैं, अत इस अश में भी वे हमारी समानता रखते हैं।



नवां अध्याय।



वृक्ष सोता है।

पहला अनुवाक।

—०—

प्रो० फ्रान्स साहब अपनी पुस्तक (पौधों की मानसिक दशा) के पृष्ठ ९९ पर यों कथन कर रहे हैं।—

"जिस प्रकार हम लोग रात में सरदी से बचने के लिये कुछ ओढ लेते और सिकुड़ जाते हैं, इसी प्रकार वृक्षों का भी सिकुड जाना देखा जाता है। इतना ही नहीं, बल्कि बनफशा (Pansy) या गाजर के फूलों के गुच्छे रात्रि समय में अपने शिरों को नीचे झुकाये रहते हैं। परन्तु वे प्रत्येक रात्रि में ऐसा नहीं करते, बल्कि जब अधिक सरदी पडती है तब ही वे मानो उस से बचने के लिये इस प्रकार अपने अङ्गों को सिकोड़ लेते हैं।" आगे फिर कहते हैं कि " पौधे सोते भी हैं" क्योंकि सायङ्काल में फूलों की शोभा सकुचित हो जाती है, परन्तु फिर प्रातःकाल सूर्योदय होने पर प्रफुल्लित हो जाती है। वे रात्रि में ऐसे सिकुडे हुये हो जाते हैं, मानों

पाला से मारे गये हों। यह निद्रा का प्रश्न कर लेने की दशा का ही सूचक है। उस अवस्था मे उनकी छोटी छोटी पत्तियाँ आपस मे एक दूसरे से चिपटी हुई सी हो जाती हैं। लेकिन यह दशा सूर्योदय के पश्चात नहीं रह जाती। क्यों ? प्रत्यक्ष ही है कि रात्रि में उक्त दशा निद्रा वश थी। विशप अल्ब मेग्नस Bishop Alb Magnus ने ६०० वर्ष पूर्व यह कहा था कि वृक्ष इसी प्रकार सोते है, जैसे मनुष्य। परन्तु उनको ऐसा कथन करने के कारण दोषी और अपराधी मान लिया गया था। महान् डार्विन ने भी यही कहा है कि वृक्षों की जाडे पाले आदि से रक्षा रात्रि मे शयन करने से हो जाती है।"

दूसरा अनुवाक।

—०—

फिर प्रोफेसर फ्रान्स साहब कहते हैं —

"छोटे छोटे जीव जन्तुओं को प्रकाश बहुत पसन्द रहता है, यह बात भली प्रकार जांच कर ली गई है, और हम

[1] जिससे उन युरोपियनो की मूर्खता प्रत्यक्ष होती [illegible] है। विज्ञानवादियों की यहां सदा यही गति रही है — जिन पृथ्वी का गोल होना और घूमना प्रकट किया था उनको भी फांसी दी गई थी इत्यादि। (मंगलानन्द)

देखते हैं कि घास की पत्तियां भी प्रकाश को प्यार करती हैं।*

पतङ्गा (Moth) जो प्रकाश में उड़ता रहता है, इसी सूर्य उपासना (Helio tropism) का एक दृष्टान्त है। जितना ही अधिक ये जीव जन्तु दिन के प्रकाश में उड़ते रहते हैं उतनी ही पौधों की जड़ प्रकाश से दूर भागती हैं। पतङ्गो और तितलियों को, जो दिन में सो जाती, और कमती प्रकाश के समय में उड़ती रहती हैं, अगर अंधियाली कोठरी में रख दिया जाय तो भी अपने इस नियम में परिवर्त्तन न करेंगी। यही दशा पौधों की भी है, कि वे शयन कर लेते हैं और कुछ पता नहीं मिलता। पशुओं में रात दिन के परिवर्त्तन का ज्ञान उनकी इन्द्रियों के द्वारा नहीं प्राप्त होता। यह बात इससे जानी जायगी कि (Eyeless maggot) आंखों से रहित (मैगट) मक्खी अन्य रात्रि में उड़नेवाले पङ्गों के ही सदृश अन्धकार से प्रकाश की ओर उड़ती चली जाती है। इन बातों से स्पष्ट है कि अन्धकार प्राणीमात्र को शयन करानेवाला है और वृक्षों की जड़ें भी शयनागार निमित्त अन्धकार की शरण लेती हैं। तथा उनकी परिओं आदि की भी यही दशा देखी जाती है। अनेक

* आ दोनों में समानता हुई।

पाला से मारे गये हों। यह निद्रा का प्रश्न कर लेने की दशा का ही सूचक है। उस अवस्था मे उनकी छोटी छोटी पत्तियाँ आपस मे एक दूसरे से चिपटी हुई सी हो जाती है। लेकिन यह दशा सूर्योदय के पश्चात नहीं रह जाती। क्यों ? प्रत्यक्ष ही है कि रात्रि में उक्त दशा निद्रा वश थी। विशप अल्व मेग्नस Bishop Alb Magnus ने ६०० वर्ष पूर्व यह कहा था कि वृक्ष इसी प्रकार सोते है, जैसे मनुष्य। परन्तु उनको ऐसा कथन करने के कारण दोषी और अपराधी मान लिया गया था। महान् डार्विन ने भी यही कहा है कि वृक्षों की जाडे पाले आदि से रक्षा रात्रि मे शयन करने से हो जाती है।"

दूसरा अनुवाक।

—०—

फिर प्रोफेसर फ्रान्स साहब कहते हैं —

"छोटे छोटे जीव जन्तुओं को प्रकाश बहुत पसन्द रहता है, यह बात भली प्रकार जांच कर ली गई है, और हम

जिससे उन युरोपियनो की मूढता, पक्षपात और [illegible] पाई जाती है। विज्ञानवादियों की प्रथा सदा यही रही है — जिसने पृथ्वी का गोल होना और घूमना प्रकट किया था उसको भी फांसी दी गई थी इत्यादि। (भगवान

देखते हैं कि घास की पत्तियां भी प्रकाश को प्यार करती हैं।*

पतङ्गा (Moth) जो प्रकाश में उड़ता रहता है, इसी सूर्य उपासना (Helio tropism) का एक दृष्टान्त है। जितना ही अधिक ये जीव जन्तु दिन के प्रकाश में उड़ते रहते हैं उतनी ही पौधों की जड़ प्रकाश से दूर भागती हैं। पतङ्गो और तितलियों को, जो दिन में सो जातीं, और कमती प्रकाश के समय में उड़ती रहती हैं, अगर अंधियाली कोठरी में रख दिया जाय तो भी अपने इस नियम में परिवर्त्तन न करेगी। यही दशा पौधों की भी है, कि वे शयन कर लेते हैं और कुछ पता नहीं मिलता पशुओं में रात दिन के परिवर्त्तन का ज्ञान उनकी इन्द्रियों के द्वारा नहीं प्राप्त होता। यह बात इससे जानी जायगी कि (Eyeless maggot) आखों से रहित (मैगट) मक्खी अन्य रात्रि में उड़नेवाले पङ्गों के ही सदृश अन्धकार से प्रकाश की ओर उड़ती चली जाती है। इन बातों से स्पष्ट है कि अन्धकार प्राणीमात्र को शयन करानेवाला है और वृक्षों की जड़ें भी शयनागार निमित्त अन्धकार की शरण लेती हैं। तथा उनकी पत्तिओं आदि की भी यही दशा देखी जाती है। अनेक

* अर्थ दोनों में समानता हुई।

पौधों के फूल और कलियां ओस और सर्दी से
रक्षा करती हैं अत वे (पत्तियां) सिकुड़ कर
हो जाती हैं, इत्यादि बातें प्रत्यक्ष रीति से
(Clover), खरबूजा (Gourds), टमाटर (
बैंगन) (Tomoto) या सूर्यमुखी में देखो
वे अगर ऐसा न करे तो बरफ से उनका जम जाना
है। फिर अँखुओं और टहनियों का चक्कर
और भी अधिक कार्य सम्पादन कर देता है।
हुए बिना द्राक्ष (Hopvine) की बेलें ऊपर को
सकतीं और न (Grapes) अंगूर ही चढ़
ट्रोपिजम (Tropism) के समूह बिना जड़ें भी
का पालन पोषण नहीं कर सकतीं। सूर्यमुखी के
भी पौधा प्रकाश को नहीं ले सकता। ...
बढ़ कर यह बात है कि उनकी पत्तिया
हैं और दिन होने से पु... खुलतीं। ऐसा
है? इस प्रश्न का उत्तर ... में
poration) का बन्द ... है (
क्यों होती है? इसके
जीवात्मा सो जाता है,

तीसरा अनुवाक।

—०—

कमल।

कमल के फूल का सायंकाल में बन्द हो जाना और प्रातः समय खिल उठना उस के शयन करने की साक्षी देता है। संस्कृत पुस्तकों में इसका बहुत वर्णन आया है। अर्थात् कवि लोगों ने यह प्रगट किया है कि कभी कभी भौंरा कमल के सुगन्ध में मस्त होता हुआ उसी पर बैठा रहता है। यहां तक कि सन्ध्या काल में कमल फूल के बन्द होने पर वह स्वयं भी उसी के अन्दर बन्द हो जाता है और प्रातः होने पर जब फूल खिलता है तब वह बन्धन से छूट जाता है।

इससे यह निश्चय हुआ कि कमल का पौधा रात भर शयन करता रहता है। क्या यह बात बिना जीव के कभी हो सकती है? कदापि नहीं।

दसवां अध्याय ।

वृक्ष नाडी और गति रखता है।

पहला अनुवाक ।

वृक्षों का बढ़ना यह सिद्ध करता है कि वह गति (movement) रखता है। अगर उस में गति न मानो तो जड़ वस्तुओं के सदृश उसे उतने का उतना ही बना रहना* चाहिये, पर ऐसा नहीं है, इस कारण वृक्ष को गतिमान मानना पड़ेगा। फिर उन मे हिलना, डोलना, झुकना, झूमना, लहराना, मुड़ना, कांपना आदि विद्यमान हैं, जो उस में गति को सिद्ध कर रहे हैं। अलबत्ता यह बात ठीक है कि वृक्षों के अङ्ग इतने फुरतीलेपन से काम नहीं कर सकते जैसे हमारे।

पुस्तक "पौधों की मानसिक दशा" के पृष्ठ ११० पर प्रो० फ्रान्म साहब कथन करते हैं कि —

वृक्षों मे (Excitation) "हल चल" भी पाई जाती है। वह दशा हम मनुष्यों में तो शरीर भर में व्याप्त नसों के द्वारा होती है। फिर क्या वृक्षों में भी नस नाड़ियां विद्यमान हैं? यह एक प्रश्न है, जिसका उत्तर बहुत ध्यान

---

* कोई लोग यह प्रश्न किया करते हैं कि पत्थर भी बढ़ते हैं इस पर हम आगे उचित स्थान में विचार करेंगे।

(म०)

न और भारी जांच पड़ताल के पश्चात् "हां" में दिया
या है। अलबत्ता यह (Plant nerves) पौधों की नसें
न्य पशुओं से बिलकुल भिन्न प्रकार की हैं। सन् १८८४
यह अन्वेषण हुआ था कि जब किसी पौधे का कोई
ाग – पत्ती, डाली या कोई भी अवयव — जख्मी होता, काटा,
लाया या तोड़ा जाता है, तो एक विचित्र प्रकार की
चना उस जख्म के इर्द गिर्द होने लगती है। यहां से
ति (Movement) आरम्भ होकर अन्दर अन्दर छिद्रों
ं होती हुई चली जाती है। परन्तु ज्यों आगे आगे बढ़ती
त्यों त्यों कमज़ोर होती जाती है, यहां तक कि जख्म
े एक सेन्टीमीटर (Centimeter) की दूरी पर जा कर
माम हो जाती है। कुछ दिनों पीछे सारे छोटे छोटे
(Amœbæ) "अमीबा" उन छिद्रों में रेंगते हुये
ापस आते हैं और बेचारे पौधे का आन्दोलन (Agitation, थक कर शान्त हो जाता है। इस सारी प्रक्रिया में
"Feeling" (सुख दुःखानुभव ज्ञान) का होना सिद्ध हो
रहा है।... नस समूह (Nervous system) का दिमागी
सम्बन्ध वृक्षों की जड़ों में विद्यमान होना सब से प्रथम
प्याज़ में ज्ञात हुआ है, फिर फ़्लोरा Flora फूलों, सम्बुल (Hyacinth), कमल (Waterlily), फर्न (Fern) पौधों में और अन्तत
मक्की, लौकी, मटर और आलुओं में भी देख लिया गया है।

...इतना ही नहीं बल्कि पौधे के शरीर में एक नस दूसरी से महानुभूति मागने के तार-समाचार भी अपने इन्हीं तारों या धागो सदृश सम्बन्धों द्वारा भेजती हैं, जब कि उन के शब्द यों होते हैं कि —

"हमारा बडा पोषक और पिता जो जड है वह बेचारा पीडित हो गया है (चलो चलो उसकी सहायता करें) । ...... इस प्रकार की गति, जो क्रोध के सन्देशे से भरपूर होती है, उस समय बिलकुल बद हो जाती है; जब कि (Temperature) टेम्परेचर (सरदी गरमी की दशा) दैवयोग से २०° से ८°C डिगरी पर आ गिरता है । उस समय उक्त तार का सम्बध (Telephone line) टूट जाता है और रेशे (नसें) एक दूसरे से पृथक हो जाती हैं। निदान सारा सम्बध टूट जाता है। परतु फिर जब उस मार्ग (लाइन) की मरम्मत हो जाती है, तो कार्य फिर आरम्भ हो जाता है ।

उक्त प्रकार की लाइन का स्वय मरम्मत हो जाना एक बड़ी आश्चर्य और कौतूहल-जनक घटना है, जैसी कि ससार में अन्यत्र कहीं नहीं देखी जा सकेगी, यह अवश्य ही उन (पौधों) के जीवन की साक्षी है ।"

दूसरा अनुवाक।

प्रोफेसर फ्रांस साहब अपनी पुस्तक "पौधों की मानसिक दशा" में यों कथन कर रहे हैं —

"कोई पौधा बिना गति के नहीं होता।... विद्वान तत्व-ज्ञानियों का कथन है कि इन वृक्षों की ये सब गतियां उनमें से उस रस Liquid के कारण उत्पन्न होती हैं, जो उनके नसों मे दौड़ता रहता है। इसी रस के प्रताप से पौधों के अवयव बढते और टहनियां फूटती हैं। अगर इस विषय पर ध्यान से विचार किया जाय तो ज्ञात होगा कि मानो रेलगाडी की भांति वृक्षों की दशा है (अर्थात् जैसे वह दौड़ी चली जाती रहती है, उसी प्रकार वृक्ष शरीर के अंदर नसों से पानी, खाद्य द्रव्यों, गैसों—वायु के परमाणुओं आदि का जोर शोर से घूमना जारी रहता है)।"

ठीक जिस प्रकार हम मनुष्यों के शरीरों में अन्नाहार से रुधिर बन कर जब दौड़ता है तो हम लोग प्रसन्नता पूर्वक चलते फिरते, उछलते कूदते रहते हैं। मगर दो चार दिन खाना न मिले तो देखोगे कि मनुष्य भी मुर्दा पड़ा रहेगा।

[मंगलानन्द ।]

तीसरा अनुवाक।

अगर यह प्रश्न किया जाय कि वृक्ष में गति है, तो वह हम लोगों की तरह चलता फिरता क्यों नहीं ? तो उत्तर यों है कि पौधों में उतनी गति और शक्ति मौजूद है जितने की उन्हें आवश्यकता है। अब यह बात सहज ही समझी जा सकेगी कि वे साधारणतया शान्त और चुपचाप क्यों रहते हैं—कारण स्पष्ट है कि उन्हें अपना सादा जीवन गुज़ारने के लिए कुछ अधिक परिश्रम या हल चल करने की आवश्यकता नहीं है।

इस प्रकार वृक्षों में गति और नस नाड़ियों का होना सिद्ध हो रहा है।

अध्याय ग्यारह।

वृक्ष रोगी होते हैं।

पुस्तक वैज्ञानिक खेती प्रथम भाग पृ० ७० पर श्री मती हेमन्त कुमारी देवी जी यों लिखती हैं—

"मामूली तौर पर पौधे दो किस्म के रोगों से घिरे रहते हैं। १ फंगस (Fungas) यह पौधे के किसी हिस्से पर हमला कर अन्दर घुस जाता है, और उसकी देह के तन्तुओं को कमजोर करके मार डालता है। ये उद्भिद, खुर्दबीन की सहायता बिना दिखाई नहीं दे सकते। इनके बीज वायु मण्डल, मट्टी और पानी मे रहते हैं। बीज अकुरित होकर पौधे के कोष (Cells) में रक्खी हुई सामग्री से तैयार होता है। फिर उससे एक धागा सा निकल कर वृक्षो में फैल जाता है। ये वृक्ष के भीतर रक्खी हुई चीजों को खा जाते हैं। इससे झाड़ निस्तेज, रोगी हो जाते हैं। ये रोग पैदा करने वाले पौधे खुद हवा, पानी और मट्टी से खोराक नहीं ले सकते, इस लिए दूसरे की जमा पर कब्जा कर बैठते हैं। किसी जिन्दा झाड़ का रस सोख कर या मरे हुए

और सड़े गले पदार्थ पर जम कर अपना निर्वाह करते करते हैं। • ••• बीज में भी कीड़े पड़ जाते हैं। इस लिए बीज और कलम इत्यादि को लगाने, बोने से पूर्व खूब साफ कर लेना आवश्यक है। बीज इत्यादि को साफ करने या रोग से बचाने के लिये उनमें कीड़ों को मारने वाली या जीवाणु नाशक कुछ चीजें मिला देनी चाहिए। इन चीजों में विषैलापन, बदबू और तेज बू हो।

••• •• •• •• तूतिया के पानी में बहुत देर तक बीज, कलम या जड़ को रखने से उसकी पैदा होने की ताकत मारी जाती है।

• • ••• (आगे पृष्ठ ७५ पर देखो या लिखा है कि —

• हरदा (गेरुई) लगना—जमीन में पानी रह जाने पर या अच्छी तरह सूर्य की किरणों के न पड़ने से यह रोग होता है। धान के सिवाय और कोई फसल बँधे हुए पानी में रह कर स्वस्थ और ताजा रहता हुई बढ नहीं सकती।

पाट, अरहर, भुट्टा (मकई) ज्वार, गन्ना इत्यादि के पौधे पानी में घिरे रहने से रोगी हो जाते हैं। बैगन और मिरचे के खेत में अगर पानी भरा रहे, तो वे मर जाते हैं।

• • • अब तक कोई अच्छा उपाय नहीं जाना जा सका जिस से गेहू का हरदा रोग दूर किया जा सके।

इस रोग की जड़ गेहुओं के बीज के साथ ही आती है • •• • धान, भुट्टा और ज्वार के रोग भी इसी जाति के हैं। "

(फिर देखा पृष्ठ ७८ पर भी यों कहा है) —

" गन्ना—कई वर्ष पहले रोग हो कर गन्ने की खेती बम्बई के सूबे से एक तरह उठ ही गई थी। इस रोग का नाम खास Daetraea Bacharatis Fabur है। कहीं कहीं किसान इसे भजेरा भी कहते हैं। यह कीड़ा डठुल में घुस कर रेशा खाता है। जब पानी की कमी होती है, तभी यह रोग देखा जाता है। इस के सिवाय एक ही जाति का गन्ना अगर बार २ एक ही खेत में बोया जावे, तो कुछ दिनों में पतला हो कर इस रोग से खराब हो जाता है। जिन पेड़ों में इस रोग के लक्षण दीख पड़े, उन्हें उखाड़ कर खेत से दूर ले जा कर जला दें, और फसल कट जाने पर खेत का कूड़ा कचरा हटवा दें। इससे फिर इसका डर नहीं रहता।

गन्ना की दूसरी दुश्मन फफूंदी है। • मट्टी का तेल इस की सब से बढ़िया दवा है। ••• ••• बोने से पहिले गन्ने के टुकड़ों को मट्टी के तेल में पानी मिला-

कर भिगो देने से फिर फफूदी का डर नहीं रहता।"

इत्यादि उद्धरणों से सिद्ध है कि वृक्ष हमारे ही सदृश रोगी भी होते हैं, इस लिये उनके जीवधारी होने में सन्देह नहीं हो सकता।



बारहवां अध्याय।

वृक्ष नर मादा होते, सन्तान छोड़ते और रिश्ता नाता रखते हैं।

पहला अनुवाक।

(नर-मादा)

—०:०:—

स्कूली पुस्तक Natuie study book No 1 (प्राकृतिक पाठ सं० १ में) पृ० ४२ पर यों लिखा है —

"पौधे अपने किस्म के दूसरे पौधे पैदा करने के लिए बीज पैदा कर देते हैं।

किसी जमीन में तांबे या लोहे के टुकड़े और बीज का डाल कर देखो। (देखने से जानोगे कि) तांबे या लोहे का टुकड़ा नहीं बढ़ता और बीज से पौधा निकलता है जो अपनी गिजा को हजम करता और अपने किस्म के नये पौधों के लिए बीज बनाता है।"

निदान जो चीजें बढ़तीं, खाना हजम करतीं और अपनी जिन्स (योनि या सन्तति) को क़ायम रखती हैं, वे

जी-रूह (जीव-धारी) कहलाती हैं और जिन में ये बातें नहीं होतीं वे ही बेजान (गैर जी-रूह) कहलाती हैं।

खीरे की बेल।

आगे इसी पुस्तक में पृष्ठ ५५ पर खीरे की बेल का वर्णन यों आया है —

"ऊपर एक गाभे में बहुत से छोटे छोटे फूल और नीचे सिर्फ एक फूल लगता है।*

अन्दर की तरफ सिर्फ जीरे ही होते हैं, बीजदान नहीं होता। उस में बीजदान ही होता है जीरे नहीं होते।†

पृष्ठ ७१ पर—

मादा फूलों में बीच के सतों में तीन टोपियां एक छोटी नली और बाहरी पत्तियों और अन्दरूनी पंखड़ियों के नीचे बीजदान होता है।

---

* इन में से वह एक फूल नर तथा अन्य छोटी अनेकों नारियां या मादा होती हैं। (मंगलानन्द)

† यहां वृक्षों में नर मादा होने का वर्णन किया गया। एक में जीरे और दूसरे में बीजदान की विद्यमानता से यह जाना जायगा कि बीजदान ही वहां गर्भाशय का काम देता है। इसी में जीरों के (वीर्यसदृश) गिरने पर फलों की गर्भ स्थापना होती है, और पश्चात् उसका फल (सन्तान रूपी) उपजता है जिस में उस वृक्ष के बीज मौजूद रहते हैं। (मंगलानन्द)

दूसरा अनुवाक।

वृक्ष विषय भोग करते हैं।

प्रो० जे० ग्रेट लैंड फार्मर साहब ने अपनी पुस्तक (Plant life) (वृक्ष जीवन) में एक पूरा अध्याय (अर्थात् १९ वां चेप्टर) वृक्षों के नर मादा होने के विषय में लगा दिया है। हम उस लम्बे लेख को अत्यन्त सक्षेप में नीचे उद्धृत करते हैं —

"वृक्षों में भी पशुओं सदृश नर मादा होते हैं" छोटे पौधों में अभी तक ऐसा नहीं देखा गया, तो भी यह अनुमान है कि उसमें भी पुरुष स्त्री सम्बन्ध रहता है।

उनमें उपस्थ इन्द्रिय भी है, पर अत्यन्त सूक्ष्म तर होता है। हमें देखने से ऐसा प्रतीत होता है कि पौधों में यह इन्द्रिय पूर्व में रही होगी पर अब नष्ट हो गई। लेकिन अगर उनको पुष्ट किया जाय तो उनकी यह इन्द्रिय प्रबल होकर भासित होने लगेगी।

नर मादा पौधे पास पास होते हैं, और वे विषय भोग करते हैं। प्रत्येक पौधे में दो प्यालों सदृश अवयव रहते हैं, जिन्हें Gametes (गैमिटि) कहा जाता है। समागम होने पर वे दोनों मिल कर एक हो जाते हैं, अब

इसका नाम Zygate जाइगेट हो गया जो एक cell कोठरी जैसा हो जाता है। उसी से नवीन सन्तान पैदा होती है।

एक प्रकार का पौधा Unicellular होता है (अर्थात् एक cell कोठरीवाला पोधा)। इस पोधे में नर मादा दोनों की उपस्थ इन्द्रिय एक समान होती है, परन्तु शरीर-शास्त्र Physiology द्वारा वे पृथक पृथक देखे जा सकते हैं।

खाद्य द्रव्यो को बहुतायत से पौधा हृष्ट पुष्ट होता है अन्यथा भूखो मरने से सूखा, कुम्हलाया, मुरझाया हुआ हो जाता है। अत. जिस प्रकार इन सुख दु खो के अनुभव उसे प्राप्त होते हैं, इसी तरह हम समझ सकते हैं कि काम चेष्टा का अनुभव भी उनमें होता ही होगा क्योंकि पुष्टिकारक पदार्थों से अगर मनुष्य, पशु, पक्षी आदि मजबूत बन कर कामातुर हो जाते हैं तो इसी न्याय से वृक्ष भी हृष्ट पुष्ट होने पर कामातुर क्यो न होंगे ?

यह देखा जाता है कि पौधों की बाढ एक सीमा तक हो कर रुक जाती है, और वह तभी आगे बढ़ती है जब उन्हें "समागम" का अवसर प्राप्त हो। अगर दैवयोग से उस पौधे को स्त्री-प्रसंग का अवसर न मिल तो, उसकी बाढ रुक जायगी और वह मुरझाय कर मर जायगा।

पौधों में प्राय मादा की गमिटि Gamette बड़ी होती है, जब कि नर का वह अङ्ग छोटा होता है।

जिस प्रकार मनुष्यादि में यह नियम है कि जो भूखों मरता है उस में काम-चेष्टा की कमी हो जाती है, उसी प्रकार वृक्षों में भी जो हृष्ट-पुष्ट, मज़बूत नहीं होते उन में काम-चेष्टा की इतनी न्यूनता पाई जाती है मानों उसका अभाव ही है।

तीसरा अनुवाक।

—०:—

योनि-भेद।

पौधों में "योनि-भेद" भी मौजूद है अर्थात् जैसे बैल, घोड़ा, हाथी आदि अपनी अपनी योनियों — गाय, घोड़ी, हथिनी इत्यादि से ही सम्बन्ध कर सकते हैं। इसी प्रकार पौधों में भी गेहूं का चने के साथ मेल नहीं हो सकता। और जिस प्रकार मनुष्यों, पशु, पक्षियों में भिन्न भिन्न जातिवालों का मेल होकर दोनों के गुण सन्तान में आते हैं वैसाही वृक्षों में भी होता है। जैसे कुत्तों की अनेक जातियों में से एक जाति वाला कुत्ता दूसरी जाति वाली कुतिया के साथ सम्बन्ध करता है और सन्तान में दोनो

के गुण उसमें आ जाते हैं। (यही बात गाय, घोडे आदि में भी देखी जाती है)।*

इसी प्रकार पौधों में भी पाया जाता है कि अगर नर पौधा बासमती चावल का हो और मादा पौधा "रामसागर" नाम के चावल का हो; तो उनका सम्बन्ध हो जायगा परन्तु सन्तान दोनों से भिन्न तीसरे प्रकार की पैदा होगी, यानी दोनों के गुण उसमें आ जायँगे जो तीसरा जैसा भासित होगा इत्यादि ।

यह भी ज्ञात हुआ है कि नर और मादा पौधे समागम द्वारा आपस में शक्ति का अदल बदल करते हैं, अर्थात् उन में से जो कमजोर-निर्बल होता है वह दूसरे की शक्ति को खींच लता है इत्यादि इत्यादि बहुत अधिक बातें इस विषय मे हमारे फार्मर साहब ने कथन की हैं, जिन मे से यह थोड़ा सा ग्रहण उद्धृत किया गया ।

---

*-यह बात मनुष्यों में भी यों देखी जाती है कि अंगरेज पुरुष और हिंद स्त्री से "जो यूरेशियन" सन्तानें जनमी हैं वे दोनों से भिन्न रूप रंग की देखी जाती है।-अफ्रिका में इसके उलट हिंदी पुरुष और अफ्रिकन स्त्री से होनेवाली सन्तानें को तीसरे प्रकार की देखी है। (मंगलानंद)

चौथा अनुवाक।

— ००० —

रज वीर्य।

प्रोफेसर फ्रांस साहब अपनी पुस्तक "पौधों की मानसिक दशा" के पृष्ठ ८४ पर यों कथन कर रहे हैं —

"किन्हीं cells कोठरियो में लम्बे लम्बे बाल रहते हैं जो जीवन-युक्त शक्तियो से इधर उधर ओस की बूंदों पर मडराते रहते हैं। यह इन के जीवित रहने का चिन्ह है। ये ही वे स्पर्मोटोजोआ Spermotozoa (वीर्य के अवयव—रेंगते हुए कीडे सदृश) हैं, जो प्रातःकाल की ओस पर सैर करते रहते हैं। भला वे ऐसा क्यों करते हैं? They seek a charming female वे अपने लिए सुन्दर स्त्री की खोज करते रहते हैं। वे असंख्य मुलायम मुलायम छोटे छोटे पत्तडियों cups को चुन लेते हैं, जिन की थैलियों में Mass egg अण्डाकार-शरीर वाले (स्त्री का रज) छिपा रहता है, और वह तभी जीवधारी बनता है जब कि इन अद्भुत स्पर्मोटोजोआओं* के साथ

* स्पर्मोटोजोआ Spermotozoa वीर्य के उन अवयवों को कहा जाता है जो अत्यन्त छोटे २ रेंगनेवाले जन्तु सदृश होते हैं। उन्हें केवल सूक्ष्मदर्शक यन्त्र द्वारा से देखा जा सकता है। शायद एक माशा वीर्य में ऐसे रेंगनेवाले १०० की संख्या में पाये जाते होंगे। (मंगलानन्द)

प्रेमपूर्वक सम्मिलित हो जाता है। तनिक इस अद्भुत ईश्वरीय लीला का विचार तो करो कि जगलों में क्या क्या कौतुक होते रहते हैं। भला ये नर, मादा खोजने वाले (मुतलाशी) एक दूसरे को किस प्रकार पा जाते होंगे ? इन दोनों को एकत्र करा देने का कैसा विचित्र और अद्भुत प्रबन्ध उस सर्व शक्तिमान् परमात्मा या सर्व शक्तिमती प्रकृति के द्वारा हो रहा है ? यह बड़े ही अचम्भे की बात है कि इस सगम से उन्हें आनन्द प्राप्त होता है। इस स्पर्मोटोजोआ को Malic acid सेव की खटाई में जैसी लज्जत मिल जाती है वैसी और किसी में नहीं मिलती।

लेबोरेटोरी (अन्वेषणालय) में वे छोटे बर्तनों में रख दिये जाते हैं जिन में सेववाली खटाई (मैलिक एसिड) रहती है। अत यह जाच हो गई है कि इन अण्डाकार शरीरों (रज सदृश) को भी यह खटाई बहुत लज्जतदार और पसंद होती है। ये बातें सून-सान जगलों में बहुत अधिकता के साथ देखी जा रही हैं। वहा ये अण्डे और वे स्पर्मोटोजोआयें आपस में मिल जाते

† मानुषी सतान उत्पत्ति की प्रक्रिया भी यही है कि पुरुष के वीर्य का स्पर्मोटोजोआ स्त्री के रज (जो अडे की शक्ल का अत्यत छोटा होता है) के साथ मिल कर एक शरीर बन जाता है और तब गर्भाशय म प्रविष्ट होता है।
(मगलानद)

ौर लज्ज़त प्राप्त करने की धुन में मसरूफ़ रहते हैं। ेकिन बरसात उनके बे मेल जोड़े को नहीं मिलने देती। "फ़र्न" का विवाह उन अण्डोंवाले शरीरों के साथ हो ाता, परन्तु बरसात के कारण यह बे मेल विवाह नहीं ो पाता। "फ़र्न" का स्पर्मोटोज़ोआ उस "मैलिक०" ेब की खटाई पर आकर्षित नहीं होता, वरन् उसको गन्ने की मिठास दरकार रहती है (इसीलिए यह बेमेल जोड़ी मिलते मिलते बरसात के कारण रुक जाती है)। "फ़र्न" पौधे ा अण्डा (रज) भी मिठास वाले पानी का प्रेमी है। ।त. ज्ञात होगा कि किस प्रकार प्रत्येक दुलहा अपने ानुकूल दुलहिन पा जाने मे सफल कार्य हो रहा है। अर्थात् खटाई वाला, खटाई वाली को, और मिठास वाला मिठास वाली को ग्रहण कर रहा है)।



पाचवां अनुवाक।



वर्ण-संकरता।

वृक्षों में वर्ण-सकरता भी देखी जाती है, वह कैसे ? ुनिये :—

किसी वृक्ष का बीज बोने से नया पौधा उगता है,

फिर उसके बीज से आगे की सन्तान चलती है। यह तो सृष्टि नियमानुकूल उत्पत्ति है। परन्तु जो एक पेड़ की क़लम दूसरे पर लगाते हैं वहां वर्ण-संकरता देखी जाती है। अर्थात् ऐसे कलमें लगाये हुये वृक्ष के फल यद्यपि उत्तम और अधिक स्वादिष्ट हो जाते हैं, लेकिन फिर उनके बीज से पौधा नहीं उगता या अगर उगेगा तो इतना कमजोर होगा कि फल उत्तम न दे सकेगा और न उसका बीज आगे की नसल कायम रख सकेगा।

यह प्रक्रिया वृक्षों में ठीक वैसी ही है जैसी पशुओं और मनुष्यों में देखी जाती है। मनुष्य जो बड़े व्यभिचारी होते हैं उन की सन्तानोत्पादक-शक्ति नष्ट हो जाती है और पशुओं में खचर का दृष्टान्त प्रत्यक्ष है—यानी गदहा और घोडी के बेमेल (वर्णसङ्कर) जोड़े से जो संतान पैदा होती है उसको खचर कहते हैं, उसकी आगे नस्ल नहीं बढ सकती। यही बात संस्कृत साहित्य में कथन की गई है, देखो—

"स मृत्युमुपगृह्णाति गर्भमश्वतरी यथा।"

(चाणक्य०)

अर्थ—अश्वतरी (खचरी) अगर गर्भ धारण करेगी तो मर जायगी।

इस चाणक्य-श्लोक के अनुसार यह जाना गया कि

पशुओं में भी वर्णसङ्करता का यह परिणाम होता है कि आगे की सन्तति नष्ट हो जाती है।

जो प्रणाली मनुष्यों और पशुओं में प्रकृति ने चालू करदी है, वही वृक्षों में भी होने से यही मानना पड़ेगा कि वे हमारे सदृश जीवधारी हैं।

छठवां अनुवाक।

रिश्ता नाता।

मिस्टर डी० एच० स्काट साहब अपनी पुस्तक Evolution of plants (पौधों का विकास) पृष्ठ ९१ पर लिखते हैं कि —

"विलियम सोनिया William Sonia के फूलों पर जाच की गई तो ज्ञात हुआ कि इन मे पुरुष स्त्री के चिन्ह एक समान ही थे। जैसा कि Bennettites बेनिटाइट में। इन दोनों में भेद यह है कि विलियम सोनिया के फूलों में नर मादा के चिन्ह बहुत स्पष्ट पाये जाते हैं।"

आगे पृष्ठ २० पर यों कहते हैं —

"पौधों के जीवधारी होने का विषय प्राय २०० वर्षों से चालू है और इस बारे में बहुत भारी खोजें हुई हैं। यह भी पता लगा है कि वृक्षों में रिश्ता नाता भी रहता है और प्राकृतिक विभाग उन में सिद्ध हो रहा है। अर्थात् पौधों के परिवार (फैमिली) होते हैं। विकासवाद (इवोल्यूशन Evolution) वालों की बात पर अगर विश्वास किया जाय तो मानना पड़ेगा कि जिस प्रकार मनुष्यों में एक परिवार के अनेक सभ्य होते हैं उसी प्रकार पौधों के परिवारों में भी समझो। वे दूसरों की अपेक्षा अपने परिवार से घना सम्बन्ध रखते हैं। फिर पौधों में जातियां भी होती हैं और एक जाति वाले दूसरी जाति की अपेक्षा अपनी जाति वालों के साथ अधिक सम्बन्ध रखते हैं।

पौधों के जीवधारी होने का एक यह भारी सबूत है कि एक झुण्ड (ऊंचे दरजे) के पूर्वज दूसरे झुंड (नीचे दरजे) के सभ्यों (मेम्बरों) के साथ कुछ न कुछ थोड़ी बहुत समानता रखते हैं।

फोसिल (Fossil) * पौधे कुछ बहुत प्रख्यात नहीं हैं

---

१ इस शब्द का अर्थ डिक्शनरी में यों है —

Petrified vegetable or animal remains dug out of the earth, organic relics अर्थात् जम गये हुए वनस्पति या पशुओं के शरीरों के अवशेष भाग जो भूमि में से खोद कर निकाले गये हों या खनिज ऐतिहासिक सामान। (म०)

पर तौ भी ऐतिहासिक पत्रों के परमोपयोगी होने के विचार से इनकी तुलना पशु—ससार के साथ की जासकेगी ।

यद्यपि पौधों मे हड्डी या तत्सदृश कोई चीज नहीं होती, तथापि इस फोमिल पौधे में यह विशेषता है कि इस में अपने अन्तरीय अवयवों की रक्षा के लिये काफी मजबूत छाल या हड्डी रहती है । और वह दूसरे भी ऐसे सामान अपने शरीर में रखता है कि अपने शरीर को खूब सुरक्षित बनाये रह सकता है ।



तेरहवां अध्याय।

वृक्ष ज्ञान रखता है।

पहला अनुवाक।

—:o—

हमारे विपक्षी महाशयगण कहा करते हैं कि अगर वृक्ष जीवधारी है तो उसमें जीवात्मा के लक्षण बतलाओ ? वैशेषिक दर्शन में जीव के लक्षण इस प्रकार लिखे हुए हैं कि—

"इच्छाद्वेषप्रयत्नसुखदुःखज्ञानमात्मनो लिंगम्॥ १॥

अर्थ—जीवात्मा के चिन्ह (या लक्षण) इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, सुख, दुःख और ज्ञान है। अत. यह बातें जिनमें पाई जाय उनको जीवधारी कह सकते हैं, क्या वृक्ष में ये बातें हैं ?

हम अब इसी बात का विचार करते हैं। प्रथम इस अध्याय में "ज्ञान" पर प्रकाश डालते हैं, अगले दो अध्यायों मे शेष बातों का भी विचार करेंगे।

प्रो० फ्रांस साहब अपनी पुस्तक 'पौधों की मानसिक दशा' में लिखते हैं कि—

"वृक्ष के अवयव मे सब से अधिक जीवधारी होने

के प्रमाण उसकी जड़ प्रगट करती है, जो वस्तुत छोटे छोटे कीड़ों के सदृश होती है और यही (जड़ों का समूह) उसका दिमाग है।

जड़ों से ही वृक्ष पानी सोखता है, आकर्षण Gravity को धारण करता है, पानी की खोज करता है, ऊपर को चढाता है, और प्रकाश से दूर भागता है। क्या इन सब प्रभावों—आकर्षण, पानी, मट्टी, प्रकाश, आदि—को जाने बिना ऐसा कर सकता था? कदापि नहीं।

डार्विन ने भी इन्हीं आश्चर्यजनक बातो को दर्शाते हुए इनमें मस्तिष्क (ज्ञान-भण्डार) का विद्यमान होना मान लिया है। वह इन्हीं के द्वारा अपना खाद्य द्रव्य ग्रहण करता हुआ स्वाद को प्राप्त करता है। देखो कैसे आश्चर्य की बात है कि जिस जगह की पृथिवी सूखी होती है (रस नहीं रहता) वहा से वृक्ष की जड़ें अपना मुह फेर लेती हैं और जिधर तर भूमि होती है उसी ओर झुक जाती हैं और उसी तर (रसयुक्त) पृथिवी में ये फलती फूलती हैं*। इसके सिवाय वृक्षों की जड़ें पृथिवी में नीचे नीचे घसती जाती हैं। अगर उनमें जीव

* किंतु जहा तरी नहीं मिलती वहा बेचारे पौधे कुम्हला कर सूख जाते हैं, ठीक जिस प्रकार मनुष्य को भी आहार न मिले तो वह मर जाता है। (मंगलानंद)।

न होता और दिमागी शक्ति न होती तो वे ऐसा क्यों कर सकते। क्योंकि जीवधारी लोग ही यह बात जानते हैं कि किस प्रकार प्रत्येक वस्तु को तोड़ मरोड़ कर या घुमाय फिराय कर अपने अनुकूल बनाना होता है। अतः वृक्ष की जड़ें भी पृथिवी को तोड़ फोड़ कर जिधर से रस मिलता है उधर फैल जाती हैं।

केवल इतनाही नहीं बल्कि इससे भी बढ़कर जीवन का प्रमाण इस बात से मिलता है कि वे अपनी दुर्बल जड़ों से भी प्रयत्न द्वारा अपने आवश्यकतानुसार भारी कार्य करालिया करते हैं। अर्थात् जहा कहीं कोई रुकावट उनके मार्ग में आजाती है (जैसे पत्थर आदि का आ पड़ना) जो उनके बाढ में बाधक होती है, तो उस दशा में वे अपनी जड़ों को बडी तेजी के साथ बढाते हैं* और अपने शत्रु को पीछे डालकर अपने लिये कोई मार्ग (आगे पीछे) निकाल लेते हैं। अगर उनमें मस्तिष्क—दिमागी ताकत न होती तो वे भला ये काम कैसे कर सकते?

फिर प्रो० फ्रान्स कहते हैं—

*ठीक जिस प्रकार मनुष्य पर जब कोई प्रहार या आक्षेप करता है तो उस में अपने बचाव के लिये भीतर से आत्मिक-शक्ति आ कर द्विगुणा जोश, उत्साह, साहस बढ आता है। (म०)

"हमें तनिक भी सन्देह नहीं हो सकता कि पौधों में ज्ञान-शक्ति का आरम्भ उस समय अवश्य प्रतीत होता है जब उस पर कोई आघात हो। या जब उस के स्वाद-* इन्द्रिय (Tentacles) को कुछ चखने के लिये मिल जाय या कली कली से फूल खिलने लगें, या पौधा स्वय खड़ा होने लगे, या प्रकाश और आकर्षणशक्ति के प्रभावों से प्रभावित हो, या स्पर्मोटोज़ोआ (Spermotozoa) के स्वाद का पता लग जाय।

ये सारी बातें असम्भव होजायगी, अगर पौधों में गति और विश्राम (मिहनत करना और थक कर सुस्ताना आराम करना) विद्यमान न हो (जो दिमागी शक्ति के बिना अनुभव नहीं किया जासकता) जिस प्रकार मनुष्य और पशु की दशा है, उसी प्रकार की अवस्था वृक्षों को भी इस बारे में है कि उनके इन्द्रिय-ज्ञान को किसी नशे या भड़काने वाली वस्तु के द्वारा नष्ट कर दिया जासकता है (क्लोरोफार्म सुंघाने से)।



* वृक्षों की एक एक पत्ती में यह रसना-शक्ति मौजूद है जैसा कि अन्यत्र कहा गया है। (म०)

दूसरा अनुवाक ।

वृक्षों में मस्तिष्क (बुद्धि-भण्डार) रहने की एक बडी ही उत्तम युक्ति प्रोफेसर फ्रास यह बतलाते हैं —

"वृक्ष वर्षा काल के भविष्य-ज्ञाता भी पाये जाते हैं, अर्थात् वर्षा होने से पूर्व उन्हें यह पता लग जाता है कि पानी बरसने वाला है। क्योंकि उस समय पर वृक्षों में परिवर्त्तन देखा जाता है, और वे रज के साथ अपने फूलों के (cups) पखडियों को बंद कर लेते हैं ।

लाजवन्ती का पौधा बडा सचेत (sensitive) देखा जाता है । और कुछ विद्वानों का यह मत है कि वह वर्षा के आने का पता अपनी पत्तिया हिला हिला कर दे देता है ।"

पाठकगण ! विचार कीजिए कि अगर वृक्ष में मस्तिष्क और बुद्धि न होती तो भला वे भविष्य में वर्षा होने न होने का अनुमान कैसे कर सकते ?

आगे और भी प्रोफेसर फ्रास यों कथन करते हैं —

"भला जी ! जरा पानी में कमल तथा ऐसे अन्य पौधों को तो देखो, जिनकी जडें तह्ले में नहीं होतीं किन्तु पानी में ही तैरती रहती हैं, परन्तु क्या मजाल कि वे

आपस मे एक दूसरे को छू भी लें ।।। ऐसा कदापि नहीं होता, क्या यह थोड़ी बात है, और क्या यह उनकी (Instinct) पाशविक बुद्धि ही का चमत्कार नहीं है? जो उनकी जड़ों मे मानों कह देता है कि "खबरदार," तुम दूसरे की जड़ को मत छूना।"

अवश्य ही ज्ञान के बिना ये बातें असम्भव हैं, अत वृक्ष में "ज्ञान" मौजूद है।

तीसरा अनुवाक।

वृक्षों में "ज्ञान" की विद्यमानता पर प्रो० गैम्बल साहब की बात भी कान देने योग्य है। आप ने अपनी पुस्तक "Animal World" (पशु-संसार) के ६ वें अध्याय में यों वर्णन किया है —

"पशुओं तथा वृक्षों दोनों मे सञ्चालन शक्ति तो समान ही है। यह शक्ति उन में तब बढ जाती है कि जब वे किसी कष्ट, तकलीफ या भय में पड़ जाते हैं। क्योंकि तब ही तो इस बात की आवश्यकता होती है कि कुछ बुद्धि intelligence लड़ावें कि भय को दूर भगाया जाय। प्राय छोटी आयु वालों (छोटे पौधों) में यह शक्ति विशेष पाई जाती है (यही उन में ज्ञान का होना समझो)।

चौथा अनुवाक।



वृक्षों के ज्ञानयुक्त होने की एक यह प्रबल युक्ति है कि अगर दो भिन्न भिन्न स्वभाव वाले पौधों को एक साथ एक गमले या क्यारी में लगायें तो वे अपने अपने अनुकूल खाद्य द्रव्यों को ही ग्रहण करेंगे। दूसरी प्रतिकूल वस्तु का त्याग कर देंगे। जैसे अगर मिरचा और गन्ना इन दोनों भिन्न प्रकृति वाले पौधों को एक साथ लगाया जाय तो पृथिवी में से मिरचे का पौधा अपने तीक्ष्णता युक्त रसों को खींचेगा और मिठास को त्याग देगा*, परन्तु गन्ना केवल मिठास को ग्रहण करेगा और मिरचों के अनुकूल वस्तुओं को त्याग देगा। अब अगर जाँच की खातिर ऐसा किया जाय कि उस गमले या क्यारी में मिठास वाले खाद की भरमार कर दी जाय तो जहां गन्ना खूब हृष्ट पुष्ट होगा, वहां मिरचे का पौधा सूख जायगा। इसी प्रकार अगर तीक्ष्णता और कड़ुवाहट बढाने वाले खादों को ही डाला जाय तो गन्ना सूख जायगा।

इस प्रक्रिया से यह स्पष्ट ज्ञात हो रहा है कि वृक्षों में ज्ञान विद्यमान है। वे यह भली प्रकार जान लेते हैं कि कौन कौन सा खाद्य द्रव्य मेरे अनुकूल है और क्या क्या प्रतिकूल।

चौदहवां अध्याय।

वृक्ष इच्छा और प्रयत्न रखता है।

पहला अनुवाक।

वृक्ष में ज्ञान होने का वर्णन गत अध्याय में करने के पश्चात् अब हम इस अध्याय में वृक्षों के इच्छा और प्रयत्न (उद्योग, पुरुषार्थ, परिश्रम, कोशिश, मिहनत) के बारे में विचार करते हैं।

प्रोफ़ेसर गेम्ज़ साहब 'पशु-संसार' पुस्तक के दूसरे अध्याय पृष्ठ ४२ पर यों लिखते हैं—

"जीवधारी के लक्षणों में से एक लक्षण प्रयत्न है। वह यद्यपि पौधों में वैसा प्रत्यक्ष नहीं है जैसा कि पशुओं आदि में, परन्तु इससे इनकार नहीं हो सकता कि वृक्षों में प्रयत्न मौजूद अवश्य है। वृक्षों की बात छोड़ कर हम देखते हैं कि कई पशु भी ऐसे हैं जिनमें प्रयत्न या गति (हिलना, डोलना, चलना, फिरना) की कमी या अभाव पाया जाता है। दृष्टान्त में स्पान्ज sponge को लेलो कि जिसका वर्णन ऊपर ५ वें अध्याय में आचुका है (वहां और भी अनेक ऐसे जन्तुओं का वर्णन आया है)।

इस आघात के प्रभाव को मस्तिष्क तक पहुचाने में जो थोड़ा सा समय लगता है उसे latent period (अत्यंत न्यून समय) कहते हैं।

मनुष्य के शरीर में वह प्रति सेकिन्ड ११० फीट के हिसाब से दौड़ता है, परन्तु लाजवन्ती पौधे में उसकी तेजी ११८ फीट की देखी गई है। किसी क़िस्म की थकावट से इस वेग में कमी हो जाती है और ताप आदि से वृद्धि भी हो जाती है। ... और ६०° अंश (डिग्री) सेन्टिग्रेड की गरमी पहुचाने पर लाजवन्ती की मृत्यु हो जाती है।"

इत्यादि बातों से वृक्षों मे "ज्ञान" का रहना पाया जाता है।



है। परन्तु अगर इनमें वह सचालन-शक्ति विद्यमान न होतो, तो वे (बीज) पौधों को उत्पन्न न कर सकते। यही शक्ति जब और अधिक उन्नत होजाती है तो हर्ष और आनन्द को बढाती है। जैसा कि पशु पक्षियों में या सब से बढकर मनुष्यों में देखा जाता है।

दूसरा अनुवाक।

प्रोफेसर फ्रास साहब अपनी "पौधों की मानसिक दशा" पुस्तक मे यों कथन कर रहे हैं —

"कई प्रकार के कीडेखोर पौधे भी होते हैं, जिनकी विद्यमानता यह सिद्ध कर रही है कि वृक्षों मे अन्य जीव धारियों के सदृश इच्छा और प्रयत्न (Desire and activities) मौजूद हैं।" उन में से एक का हाल इस प्रकार है —

सनडिव् Sun dew पौधा।

यह सन् डिव अर्थात् सूर्य का ओस नामी पौधा बड़ा शान्त और चुपचाप खड़ा रहता है, परन्तु हमें मानना पडेगा कि वह शब्द सुनने पर ध्यान लगाये रहता है। (जैसे बगुला एक टांग उठाये मछली के शिकार निमित्त

इन जन्तुओं पर विचार करने से यह ज्ञात होता है कि जिन के जीवधारी होने में तनिक भी सन्देह नहीं हो सकता उनमें भी प्रयत्न की न्यूनता पाई जाती है। तो फिर भला वृक्षों की तो बात ही क्या कही जाय। अगर "प्रयत्न" पर विचार किया जाय कि इस की आवश्यकता किसी को क्यों होती है ? तो ज्ञात होगा कि गति (प्रयत्न) का मुख्य कारण और भारी आवश्यकता खोराक तलाश करना है। परन्तु पौधों की दशा इस प्रकार की है कि वे अपनी खोराक हवा और पानी से प्राप्त कर लेते हैं और अपनी जगह से अन्यत्र कहीं जाने के बिना ही वे बढ सकते, फलते, फूलते, तथा वृद्धि प्राप्त कर सकते हैं। जब कि पशु बेचारों में यह बडा घाटा है कि वे केवल हवा पानी के आधार पर नहीं रह सकते। इस कारण अगर पौधो में प्रयत्न का उतना प्रादुर्भाव न हो जितना पशुओं, पक्षियों या मनुष्यों मे है तो कोई आश्चर्य नहीं हो सकता है। आगे चलकर गैम्ब्ल साहब बीजों का प्रयत्न यों बतला रहे हैं —

"बहुतेरे पौधों में यह सञ्चालन शक्ति केवल बीजों में ही पाई जाती है। यह उन्हें केवल रेंगने creep or crawl) मात्र की गति देदेती है और कभी २ यह उन्हें palas.tic दूसरे पौधों पर सहारा रखने वाला बना देती

है । परन्तु अगर इनमें वह सञ्चालन-शक्ति विद्यमान न होती, तो वे (बीज) पौधों को उत्पन्न न कर सकते । यही शक्ति जब और अधिक उन्नत होजाती है तो हर्ष और आनन्द को बढाती है । जैसा कि पशु पक्षियों मे या सब से बढ़कर मनुष्यों में देखा जाता है ।



दूसरा अनुवाक ।

प्रोफेसर फ्राम साहब अपनी "पौधों की मानसिक दशा" पुस्तक मे यों कथन कर रहे हैं —

" कई प्रकार के कीडेखोर पौधे भी होते हैं, जिनकी विद्यमानता यह सिद्ध कर रही है कि वृक्षों मे अन्य जीव धारियों के सदृश इच्छा और प्रयत्न (Desire and activities) मौजूद हैं ।" उन में से एक का हाल इस प्रकार है —

सनडिव् Sun dew पौधा।

यह सन् डिव अर्थात् सूर्य का ओस नामी पौधा बडा शान्त और चुपचाप खडा रहता है, परन्तु हमें मानना पडेगा कि वह शब्द सुनने पर ध्यान लगाये रहता है । (जैसे बगुला एक टांग उठाये मछली के शिकार निमित्त

चुपचाप मौन साधे खड़ा रहता है) और जब कोई मच्छड़ या मक्खी आदि उस पौधे के लुभाने वाले मधुर ओस का स्वाद चखने के लिए उसके निकट आने लगती है, तो उसका छोटा सिर इस गुच्छेदार पौधे के प्रभाव से बहुत तेज़ी के साथ घूमने लगता है, और जब कि उसके छोटे पाव इससे छू जाते हैं, तो वे ऐसे जकड़ जाते हैं कि फिर छूटते ही नहीं — ज्यों ज्यों वह छुड़ाने और स्वयं उस से पृथक् हो जाने की कोशिश करता है त्यों त्यों और भी अधिक जकड़ता जाता है। और कुछ मिनटों ही मे इस बेचारे जन्तु के भाग्य का निपटारा हो जाता है, और अगर कोई बड़ा जीव जन्तु जैसे चींटी, मकड़ी, गुबरीला, या सहस्र पावों वाला जन्तु इत्यादि फस जाता है, तो उस दशा में the whole leaf rolls around it in order to secure its prey उस पौधे की सारी पत्तिया उसके चारों ओर हिलने लगती है कि अपने इस शिकार को खूब जकड़ कर सुरक्षित कर लें जिससे वह किसी प्रकार भागने न पावे।) । और अगर दैवयोग से पर-दार साप

---

* मानो इस मासाहारी पौधे ने उस अपने शिकार को पकड़ लिया हो। वस्तुत उसमें ऐसी आकर्षण शक्ति विद्यमान है कि उसका शिकार उसी की ओर झुका चला आता है। साप की ओर चूहे आदि का विवश झुक जाना प्राकृतिक नियम के अनुसार यहा भी काम हो रहा है। (मंगलानन्द)

या तितली इत्यादि (बड़े जन्तु) इस हिंसक पौधे के पहुँच में आ जाते हैं, तो इनकी दशा बड़ी ही विस्मयजनक बन जाती है। अर्थात् उसकी दूसरी पत्तियां प्रथम उस शिकार को सूंघती हैं। फिर उसके निकट आकर उसको पकड़ लेती हैं। और सारी पत्तियां उस समय इस शिकार को मारने के उद्योग में एक दूसरे की सहायक बन जाती हैं। बस जब उस शिकार को सब पत्तियां मिल कर अकड़ लेती हैं, तो मानों शिकार मार लिया गया, और भोजन की तयारी होने लगती है (वस्तुतः वह शिकार उस समय तक मर नहीं जाता, किन्तु जीवित को ही भोज्य बना डाला जाता है)। यद्यपि बाहर से यह दृश्य (कि कैसे खाया जाता है) कुछ भी नहीं दीखता, परन्तु पता तब लगता है कि जब कुछ दिनों में उस जन्तु के शरीर का कोई भाग शेष नहीं रह जाता, सिवाय हड्डी मात्र के, जो पश्चात् हवा के झोंको से गिर पड़ती हैं।

Flesh and blood have been sucked away, for the tentacles are not only mouths, but stomachs —

मांस और रुधिर सारा शुष्क कर लिया जाता है, क्योंकि (tentacles) (वे अङ्ग, जो पशुओं या जन्तुओं के स्वाद का अनुभव किया करते हैं) केवल मुख ही नहीं

वरन् पेट का भी काम दे देते हैं। ऐसा देखा जाता है कि इन पशु-हिंसक वृक्षों की पत्तियों मे वह शक्ति मौजूद रहती है, जो प्राणियों के मेदे (आमाशय) में होनी सम्भव है। अर्थात् जिस प्रकार हमारे मुंह में अन्दर से एक प्रकार का पानी या थूक आया करता है, जो खाद्यद्रव्यों को चबा कर भीतर ले जाने में सहायक होता है, वह (थूक आदि) इन वृक्षों की पत्तियों में विद्यमान पाया जाता है। इसी से वे अपने शिकार को झटपट चट कर जाते हैं। क्या इस विचित्र पौध की बातों से वृक्षों में इच्छा और प्रयत्न की विद्यमानता नहीं सिद्ध हो रही है!

तीसरा अनुवाक

आगे फ्रान्स साहब यों कहते हैं—

"इसी तरह के मासाहारी Carnivorous पौधे प्राय ५०० से अधिक प्रकार के होंगे। यहांतक कि उनमें से कोई तो ऐसे बडे पशुओं को भी हडप कर जाते हैं, जैसे कि गाय इत्यादि। इन हिंसक वृक्षों में से किसी किसी में तो tentacles (स्वाद चखने वाला अवयव) रहता है। जैसा कि उक्त "सूर्य के ओस" नामी पौधे में। और

वाले वाले पौधों में ऐसा होता है कि पत्तियां उस शिकार को चारों ओर से घेर कर ढक लेती हैं या उनके रेशे जाल तन जाते हैं जैसा कि "मक्खी पकड़ने वाले वृक्ष Diasophyllum में देखा जाता है।

अनेक सुन्दर सुन्दर सुहावने फूलों के पौधों की भी ऐसी ही दशा पाई जाती है कि वे कीड़ों को पकड़ लेते हैं और उनसे अपना पेट भरते हैं। यद्यपि इन "सूर्य के ओस" आदि पौधों की गति अपने शिकारों को पकड़ने में सुस्त देखी जाती है, तथापि जब आवश्यकता पड़ती है तो उनमें भी तेजी के साथ पुरुषार्थ करने की शक्ति कुछ कम नहीं रहा करती।

चौथा अनुवाक

—०—

मक्खी फसाने वाला Fly Trap पौधा।

सब से बढ़कर आश्चर्य-जनक गति sensitiveness अमेरिका के एक "Fly trap" मक्खी फसाने वाला जाल नामक पौधे में पाई जाती है।

छोटे छोटे उड़ते हुये कीड़े इस पौधे के दोनों ओर नोक-वाली पत्तों पर बैठ जाते हैं और उनके बैठते ही झटपट

पत्ती की दोनों नोकें एक दूसरे से मिलकर उसे अपने अन्दर कैद कर लेती हैं । बस अब वह जन्तु उनसे बाहर नहीं जासकता और हड़प कर लिया जाता है । कहिये पाठकगण क्या अब भी वृक्षों में ज्ञान, इच्छा और प्रयत्न के होने में कुछ सन्देह हो सकता है ? अपनी पत्तिया को वे शिकार पकड़ने के निमित्त बन्द कर लेते हैं, यह इच्छा युक्त प्रयत्न नहीं तो और क्या है ? और ज्ञान बिना ये कार्य कभी सम्पादन होही नहीं सकते । इसके सिवाय पत्तियों पर जीव जन्तु के बैठते ही उनका बन्द हो जाना प्रगट करता है कि उन जन्तुओं के आकर बैठने का ज्ञान उस पौधे को हो जाता है । अगर ऐसा ज्ञान न होता पत्तियां बन्द क्यों की जाय । अब सिद्ध हुआ कि पौधों में ज्ञान और इच्छा-युक्त प्रयत्न मौजूद है ।



पन्द्रहवां अध्याय ।

वृक्ष सुखी दुःखी होता और शत्रु से अपनी रक्षा करता है ।

पहिला अनुवाक ।

— ०.—

(सुख दुख)

जीवधारी के लक्षणों में ज्ञान, इच्छा, प्रयत्न के पश्चात् सुख-दुख और द्वेष (दुश्मनी, शत्रुता) की गणना है,* त इस अध्याय में इन्हीं गुणों पर विचार होगा कि क्षों में ये बातें भी विद्यमान हैं या नहीं ?

पुस्तक पौधों की मानसिक दशा में प्रो० फ्रास साहब ी लिखते हैं—

हमें सहस्रों ऐसे प्रमाण मिलते रहते हैं जिन से पौधों में इन्द्रिय ज्ञान Sensation का विद्यमान होना ाया जाता है ।

लाजवन्ती में तो काटना, कुचलना और जलाना burning ा देखा जाता है । इस में कई इन्द्रियों की विद्यमानता ासित होती है ।

* ये सब लक्षण दर्शनों में लिखे हैं,

यह लाजवन्ती ऐसी नाजुक वस्तु है कि इसे बहुधा ग्लास (काच के बरतन)* में ही रक्खा करते हैं। अगर यह किसी ठण्डक वाले दिन में खुली रह जाय तो इस की पत्तिया कापती हैं, मानो वे सरदी से दुखी हो रही हों। शायद कोई ऐसा अनुमान करे कि जिस प्रकार लोहा अग्नि में डाले जाने पर अग्नि के तुल्य गरम हो जाता है उसी प्रकार इन पौधों में भी सरदी गरमी घुस जाती होगी तो उत्तर यह है कि इन बातों की और भी बातों पर ध्यान देना चाहिये। देखो जब लाजवन्ती के पौधे को यात्रा में साथ ले चलते हैं तो फर्स्ट क्लास की गाडी में, जो अधिक हिलती डोलती नहीं है, रक्खे जाने से इसकी पत्तिया कुम्हलाई या मूर्छित दशा युक्त बन जाती हैं और बहुत देरी पीछे होश में आती हैं सो भी तब कि जब पौधे को पकड़ कर इसे खूब हिलायें। और अगर इसे प्रथम से ही तीसरे दरजे की झटके वाली गाड़ी में ले चलें कि इस पौधे की पत्तियां हिलती रह सकें और पश्चात् इसे फर्स्टक्लास वाली गाड़ी में ले जाय तो वह पूरे आराम में रहेगी (अर्थात् मूर्छित न होंगी)।

इस से यह सिद्ध हुआ कि इस पौध की आदत कुछ

* यह योरप का वृत्तान्त है क्योंकि वहा सरदी की अधिकता है। (मगनलाल)

सी है कि वह बहुत हलके छेड़ छाड़ का परिचायक है, र्थात् "रासायनिक" परिवर्तन (जैसे लोहे में अग्नि का विष्ट हो जाना) जैसी कोई बात यहा लागू नहीं होती।

अच्छा तो अब विचारणीय यह है कि अगर पौधो Sensation अनुभव-ज्ञान विद्यमान है तो अवश्य ही दुःख से प्रभावित होते ही होंगे। तो क्या हम लोग पनी नासिका को सुगन्धित करने के लिए जब सैकड़ों लो को तोड़ लेते हैं, तो उन बेचारो को दुःखी नहीं र देते, और अगर पौधे दुखी होते हैं तो मानना पड़ेगा उनमें चेतनता Consciousness विद्यमान है, क्योंकि हा चेतनता नहीं है, वहा दुःख या सुख का ज्ञान नहीं सकता। और जहा ऐसी स्मरण-शक्ति (सुख दुःखों को ानने की ताकत) विद्यमान नही है उस दशा को चेत ता नहीं कह सकते।



दूसरा अनुवाक।

सुख दुःख का प्रभाव।

आगे फिर प्रो० फ्रान्स साहब लिखते हैं कि—

"महान् डार्विन Darwin की पुस्तक पौधों में गति शक्ति The Power of Movements in Plants"

को देखो तो जानोगे कि जैसे अन्य पौधो में जखमी होने पर परिवर्त्तन देखा जाता है वैसे ही लताओं और मांसाहारी पौधों को (जखमी होने पर) यह दशा होती है कि उनका होश-हवास Sensitiveness बिलकुल जाता रहता है (-मूर्च्छा आ जाती है।) निदान वृक्षों में एक Motive Power गति रखने वाली शक्ति (जीवात्मा) अवश्य विद्यमान है। इस बात को पूरा पूरा जानना हो तो डार्विन की ऊपरी पुस्तक पढ़ो। वहा की एक बात हम नीचे उद्धृत किये देते हैं,—

"एक छोटा पौधा अंधियाली कोठरी में लाया गया, जिससे बहुत अधिक "Nyctitiopism निकल रहा था। अब Cotyledous अँखुवा आप ही आप निकलने लगा। अब उस पौधे के मुलायम कोमल बीजों को जो उस में उस समय विद्यमान थे बन्द कर दिया या छिपा लिया गया। फिर एक और छोटा पौधा लाया गया और उसको सूर्य के प्रकाश में रख दिया गया तो उसमें से अँखुवे बड़ी उदारता से खिल गये। अब इन दोनों गमलों को एक ऐसी कोठरी में रखा गया जहां साधारण प्रकाश था न अंधकार था और न सूर्य का घाम था। अब क्या परिणाम हुआ ? देखो कि खुले हुए अँखुये एकबारगी बन्द होगये और जो बन्द थे वे तुरन्त ही खिल उठे। यह

एक ऐसी जाच है जो अवश्य ही वृक्षों में जीवन होने की साक्षी दे रही है।

तीसरा अनुवाक।

वृक्ष शत्रुओं से अपनी रक्षा करता है।

जीवधारी के अन्य लक्षणों के वृक्षों में सिद्ध हो जाने पर अब द्वेष का वर्णन किया जाता है। अब देखना यह है कि वे अपनी रक्षा स्वय शत्रुओं से कर सकते हैं या नहीं ?

प्रोफेसर फ्रान्स साहब अपनी पुस्तक "पौधों की मानसिक दशा" में यों कथन कर रहे हैं—

"पौधे अपने शत्रुओं को भी भगा सकते हैं। इस बारे में लाजवन्ती का वर्णन बड़ा विचित्र है—वह अपनी पत्तिया हिला हिला कर उन जीव जन्तुओं को भयभीत कर देती है, जो इसे खाने के लिये आते हैं। वस्तुत यह बात बड़े आश्चर्य की सी जान पड़ती है कि पौधे पत्तिया हिला हिला कर जीव जन्तुओं को डरा दें !!!

और कुछ इस लाजवन्ती पर ही यह बात निर्भर

नहीं है, बल्कि सभी वृक्षो में न्यूनाधिक यह गुण पाया जाता है । ओक्सेलिस axolis जिसको सोरेल sorel पौधा (एक प्रकार का खट्टा साग) कहते हैं, उस की भी ऐसी ही दशा देखी जाती है । और तो क्या हमारे सुविख्यात बबूल देवता acacia में भी यही गुण पाया जाता है ।

फिर मि० फ्रन्स उसी पुस्तक के पृष्ठ १६ पर कहते हैं "ये वृक्ष बेचारे निर्जीव पदार्थ माने जारहे हैं परन्तु वनस्पति-विद्या विशारदों ने यह अनुसन्धान किया है कि वे जीवन-सङ्ग्राम मे मुकाबिला करने के लिये पूरे कुशल हैं । वे अपना प्रयत्न बडी शान्ति के साथ, चुप चाप, गुप चुप रीति से जारी रखते हैं । परन्तु ऐसा करने मे उनके कार्य में किसी प्रकार की न्यूनता या त्रुटि नही होने पाती । वे हलकी गतियों और रुकावटो * आदि के द्वारा अपने शत्रुओं से बचते हैं ।



* अगर हम किसी पेड़ की डाली पकड़ना और तोड़ना या काटना चाहे, तो वह हम से दूर हटना और अपनी रक्षा करना चाहता है । इत्यादि । (भास्करानन्द)

चौथा अनुवाक।

ज्ञानादि का प्रादुर्भाव।

प्रो० फ्रान्स साहब अपनी "पौधो की मानसिक दशा" के पृष्ठ २० पर यों कथन करते हैं—

"पौधों में वे सारी बातें मौजूद हैं जो जीवधारी लोगों में होनी सम्भव हैं। जैसे कि गति (हिलना, झूलना), ज्ञान-इन्द्रियों के कार्य, जख़म पहुचाने (पत्ती आदि तोड़ने) पर उन में भारी उत्तेजना (द्वेषबुद्धि) का प्रादुर्भाव होना तथा उन पर कृपा, अनुकम्पा और दया करने से अत्यन्त अधिक कृतज्ञता प्रकाश करना इत्यादि ... ... और अगर हम प्रकृति माता के इन प्यारे बच्चों के पास शान्ति के साथ जाय तो वे मानों हम से यह कह रहे हैं कि "हम दोनो एक ही कारण प्रकृति से उपजे हैं — तुम भी कभी हमारी ही सदृश रहे होवोगे।"*

*फ्रान्स साहब का भाव यद्यपि विकास वाद (Evolution से है, परन्तु यह वाक्य हमारे आवागमन को भी सिद्ध कर देता है अर्थात् वृक्ष कहता है कि "तुम भी कभी कर्मानुसार वृक्ष योनि भोगते रहे होवोगे" (मङ्गलानन्द)।

८

पाचवां अनुवाक।

—०—

पौधों के सुखी दुखी होने के बारे में श्री महात्मा जगदीशचन्द्र वसु महाराज का एक वाक्य निम्न प्रकार है —

"जब पौधों का बढना रुक जाता है तब वह कुम्हलाने लगता है और अन्त में मर जाता है। (हम मनुष्यों का भी तो यही हाल है—वृद्धावस्था में हमारे शरीर के धातुओं की वृद्धि बन्द हो जाने से आगे चल कर मृत्यु होती है)।

"जिस प्रकार मृत्यु समय में मनुष्यों को दुख और कष्ट मिलता है, उसी प्रकार वृक्षों को भी मृत्यु काल में कष्ट प्रतीत होता है।"

महात्मा जगदीश जी ने इन बातों को अपने बनाये यन्त्रों द्वारा भली प्रकार निश्चय कर लिया है। और तो क्या, आपने स्वय पौधों से मृत्यु समय के कष्टों का हाल लिखवा लिया है।

---

*कैसे ? इसका उत्तर आगे १९ वीं अध्याय से ज्ञात होगा। (मर्म०)

छठवा अनुवाक।

दुःख घटाने का उपाय।

महात्मा जगदीश चन्द्र जी ने ऐसा उपाय भी खोज निकाला है जिससे वृक्षों के दुःखों को घटाया जा सकता है। यह विषय हम खास उन्हीं के शब्दों में सुनाये देते हैं* —

"सुख दुःखादि का नियमन करने का सामर्थ्य मनुष्य कैसे प्राप्त कर सकता है, इस बात की खोज करते हुए यह मालूम हुआ कि मज्जा तन्तु को बाह्य-सृष्टि से प्राप्त होने वाला उत्तेजन अथवा उन पर होने वाले आघात बाह्य सृष्टि के पदार्थों के परमाणुओं की सघटना के परिवर्तन पर निर्भर करते हैं। परमाणुओं का सगठन दो प्रकार का होता है। एक तो उत्तेजन बढने वाली और दूसरी उत्तेजना कम करने वाली। जहा इन दोनों के द्वारा उत्तेजन-प्रवाह की शक्ति नियम न करने की बात हमारे हाथ आई कि हम अपनी इच्छा के अनुसार जब चाहें तब सुख दुःख का अनुभव कर सकेंगे।

*यह लेख पुस्तक "डाक्टर सर जग० और उन के आविष्कार" में से उद्धृत कियागया है (सङ्क०)।

मैंने (म० जगदीश ने) इस प्रयोग को करके देख लिया है। वनस्पति में निकृष्ट दरजे के मज्जा-तन्तु रहते हैं। उनमें पूर्वोक्त रीति से परमाणुओं की ये दो प्रकार की भिन्न संघटना करके उन के द्वारा वनस्पति में सुख दु:ख की भावना उत्पन्न की जा सकती है। अगर वनस्पतियों को सुख कम हुआ तो वह इस तरह बढ़ाया जा सकता है और उनके दुख के समय उनकी संवेदन शक्ति कम करके वह निर्बल किया जा सकता है। वनस्पति और प्राणि-सृष्टि में सादृश्यता है। ऐसी दशा में यह निर्विवाद है कि जो अनुभव वनस्पति-सृष्टि में हुआ है, वही प्राणी-सृष्टि में भी होना चाहिये, और यह अनुभव होता भी है। एक मेंढक के शरीर में क्षोभोत्पादक क्षार द्वारा धनुर्वात के जैसा हिचकी उत्पन्न कर के फिर पूर्वोक्त उपाय से उस हिचकी की तीव्रता कम की जा सकती है। अभिप्राय यह है कि उत्तेजना अथवा चेतना-प्रग्राहक मज्जातन्तुओं की संघटना में परिवर्तन करने से उस चेतना के परिणाम में अभीष्ट परिवर्तन कर देना, अब असम्भव नहीं रहा है। अर्थात् अब मनुष्य परिस्थिति अथवा दैव का गुलाम नहीं रह गया है। इस में वह शक्ति है कि प्रतिकूल और दु:खदायक परिस्थिति के परिणाम को टाल कर वह सुख की स्थिति उत्पन्न कर सकता है। जिस प्रकार बिजली का दीपक कल फिरा कर चाहे जब जलाया तथा बुझाया जा सकता है, उसी प्रकार कल फिरा कर सुख दु:ख का अनुभव इच्छानुसार किया जा सकता

है। इस के आगे बाह्य-सृष्टि का कुछ भी जोर उस पर नहीं चल सकता।" अवश्य ही इस उद्धरण से बहुत स्पष्ट सिद्ध हो रहा है कि वृक्ष सुख दु खादि का अनुभव करते हैं। महात्मा जगदीश जी जो तरकीब दु ख-निवारण का बतला रहे हैं उसको सीखने के लिये उन के स्थापित किये कालिज (कलकत्ता) का विद्यार्थी बनना होगा।

यहां एक यह प्रश्न होता है कि वृक्षों के दु खों को घटाने से पूर्व हमें अपने दु खों को दूर भगाने का यत्न करना चाहिये। हम इसके उत्तर में यह कह देना उचित समझते हैं कि हमारे प्राचीन ऋषियों ने वह उपाय भी खोज निकाला था, अत ज्ञात हो कि "वेदान्त" में यह शक्ति मौजूद है कि जो कोई उस को ध्यान से पढे, मनन करे और उन साधनों पर, जो वहां कहे गये हैं, अमल करे तो उसके सारे दु ख दूर हो जायगे।

यही बात यूरोप के एक धुरन्धर विद्वान श्रीमान् प्रोफ़ेसर मैक्समूलर साहब कह गये हैं, उन के शब्द यों हैं—

"If philosophy is meant to be a preparation for a happy death, .. I know of no better preparation for it than the Vedanta philosophy.—

(See M. Muller's three Lectures on Vedanta Philosophy Page 8)

अर्थात "अगर तत्वज्ञान का यही अभिप्राय है कि आनन्द दायक मृत्यु की तयारी की जाय, तो मैं वेदान्त फिलासफी से बढ़ कर अन्य ऐसा कोई तत्वज्ञान नहीं जानता जो ऐसी लाभ दे सके।" (देखो मैक्समूलर साहब की पुस्तक "वेदान्त फिलासफी* "पर तीन व्याख्यान" पृष्ठ ८)

---

*वेदान्त विषयकी पुस्तकें—वेद व्यास जी का ब्रह्म सूत्र, प्राचीन ऋषियों के रचे हुये १२ उपनिषदें और उन के आधार पर कथन की गई हुई भगवद्गीता है (मक्ष०)।

सोलहवां अध्याय।

वृक्ष में चेतनता के सब लक्षण पाये जाते है।

पहला अनुवाक।

अमरीका देशके स्कूलों की एक कृषि सम्बन्धी पुस्तक A hand book of Nature-study के पृष्ठ १५-१६ से कुछ बातें नीचे उद्धृत की जाती हैं —

१ — इस पुस्तक का प्रथम अध्याय का विषय ही Living Plant "जीवधारी वृक्ष" दिया हुआ है। उस में हम पढते हैं कि —

"तथापि वह वृक्ष का जीवात्मा केवल अपने शरीर को जीवित ही नहीं रखता वरन् वह कार्य-सम्पादन करता है जो हैवानात (पशु, पक्षी, मनुष्य) करने में असमर्थ हैं।

वह बढता है, तना (धड़), पत्तियों, फूलों और फलों को उपजाता है और इन्हें बढ़ाने के लिये उसे खाना और पानी की अत्यन्त आवश्यकता पड़ती है। निदान वह अपना खाद्य द्रव्य स्वयं अपने आप तैयार कर लेता है। निस्सन्देह यह कार्य (अन्य जीवधारी) पशु आदि कदापि नहीं कर सकते, बरन

वे तो पका पकाया* भोजन खा लेना मात्र खूब जानते हैं।

आगे इसी पुस्तक में लिखा है कि :—

"ठीक जिस प्रकार हमारे शरीर में भिन्न २ कार्यों-निमित्त हाथ पाव तथा दूसरे अङ्ग विद्यमान हैं, उसी प्रकार पौधों के शरीर भी अङ्गों में बटे हुये हैं, जिनमें से प्रत्येक का कर्तव्य कुछ न कुछ जीवन का कार्य-सम्पादन करना है।



दूसरा अनुवाक।

—०—

लतायें।

पुस्तक "पौधो की मानसिक दशा के पृष्ठ १३६ पर प्रो० फ्रान्स साहब लताओं के बारे में यों कथन करते हैं—"बहुत लोगों ने उस लता को देखा होगा जिस की पत्तिया "चूस लेने

---

*अथात् गाय आदि पशु घास चर लेती हैं। सिंह आदि मृगादि को मार कर मास खा लेते हैं। हम लोग फल, फूल, कन्द मूल लेकर उदरपूर्ति कर लेते हैं। परन्तु वृक्षों को तो ऐसे बने बनाये, पके पकाये पदार्थ नसीब नहीं हैं। उन बेचारों को तो कभी हवा में से आक्सिजन नायट्रोजिन आदि खींचना पडता है, और कभी पृथ्वी में से क्षार मिठास, स्टार्च, पोटाशियम आदि चूसना पड़ता है या कभी पानी अग्नि से अपना खाद्य ग्रहण करना पड़ता है, इत्यादि (मङ्ग०)।

वाले पावों से युक्त (Sucles footed leaf) होती हैं, और जिन के द्वारा वे लोहे के सींकचों आदि पर चढ़ जाती हैं। इस लता में नोकीला भाग अन्त में रहता है जिसे वह कहीं भी चुभो कर किसी वस्तु को जकड़ लेती है। यहा तक कि चाहे वह दो टुकडे हो जाय, परन्तु क्या मजाल कि छुड़ाई जा सके। अब प्रश्न यह है कि ऐसा क्यों कर हो सकता, अगर पौधों में चेतनता न होती ? क्योकि यह शक्ति उन्हें तभी प्राप्त होती है, जब इसका काम पड़ता है। अजी ! इतना ही क्यो ! हम तो ऐसी २ लतायें देखते हैं जिन में Insect like feet कीड़ों के सदृश पाव होते हैं, जिन के अन्त में तेज पञ्जे भी रहते हैं, और वे उन से किसी भी वस्तु को पकड़ कर उत्तमतापूर्वक लटक जाया करती हैं।

लतायें अपने अभीष्ट वस्तु को ऐसे जोर से जकड लेती हैं कि यह बात अन्य जीवधारियो सदृश ही मानी जायगी। केवल भेद यह है कि पौधों की इस शक्ति का नाम Contractability और पशुओ की शक्ति का नाम Stereotropism है।

निदान सच तो यह है कि पशुओ का इन्द्रिय-ज्ञान केवल वृक्षो की उसी दशा की एक उन्नतावस्था मात्र है। क्योंकि अगर अत्यन्त से अत्यन्त छोटे पशुओं (जन्तुओं, पतङ्गो, कीड़े मकोड़ों, का ऊ चे से ऊ चे या बड़े से बड़े वृक्षों के साथ तुलना की जाय तो यही परिणाम निकलेगा कि वृक्षों का निर्जीव होना और

पशुओं का जीवधारी होना जो साधारण दृष्टि से प्रतीत होता है, यह केवल मामूली घटनाओं की परिस्थिति पर निर्भर है। हाँ यह बात अलबत्ता है कि पशुओं में सारी गतियां वृक्षों की अपेक्षा अधिक तीव्रता युक्त हैं।

पुष्पों की गतियों का फोटो (प्रतिबिम्ब) लिया गया और वे Conematograph सिनेमेटोग्राफ में लगाये गये और फिर उन्हें पशुओं की गति के अत्यन्त धीमी आकार के साथ मिलाया गया, तो परिणाम यह निकला कि दोनों की सम तुलना हो गई।

तीसरा अनुवाक।

—०—

आगे पृ० ११५ पर प्रो० फ्रान्स साहब वृक्षों में जीवात्मा की विद्यमानता का वर्णन इस प्रकार कर रहे हैं —

"प्रथम अमोबा Amoebae की ओर ध्यान दो स्पाञ्ज Sponge वस्तुतः इन्हीं अमोवियों की एक Colony कलोनी (बस्ती) है और यद्यपि साधारणतः उन में कोई जीव धारी के लक्षण नहीं पाये जाते लेकिन ध्यान से देखें तो उन में चलना फिरना (moving) खाना पीना, फैल जाना या सन्तति बढ़ाना आदि पाया जाता है। जो ऐसी बातें हैं कि उन में जीव का होना सिद्ध कर रही हैं।

... फिर जो बातें हम इस अमोबा (या स्पाञ्ज) में पाते हैं वही मोनाड (Monad) में देखते हैं। और जो बातें इन अमोबा और मोनाड के लिये स्वीकार की जाती हैं, उन से फिर Fungus कुकुरमुत्ता में क्यों कर इन्कार हो सकता ? फिर समस्त ऐसे हरे भरे पौधों पर भी—जो फैलते, अखुआ फोड़ कर उगते, और अपनी सन्तानों से समुद्र, नदियों, सरोवरों आदि को भरपूर कर देते हैं—यही नियम क्यों न लागू किया जाय ? ... और जो कवियों ने फूलों के आनन्दित होने, अभिलापायें प्रकट करने, थकने या दुखी होने तथा वार्तालाप करने आदि की गाथायें वर्णन की हैं, उन पर भी क्यों न ध्यान दिया जाय ? पूर्व विद्वानों ने जीव (soul) को अमर माना है। और साथ ही पौधों में रहने वाले जीवों को भी अमर बतलाया है। . . ... पुस्तक "वृक्ष जीवधारी है" (Soul life of Plants) जो मारास और ओकेन (Martius & Oken) या तत्वज्ञानी फेकनर (Fechner) की रची हुई है अवश्य पढ़ने योग्य है।"

फिर प्रोफेसर फ्रान्स पौधों की आन्तरिक गति का वर्णन पृष्ठ ५८ पर इस प्रकार कर रहे हैं —

"पौधों में आन्तरीय गति विद्यमान है, जैसी कि हमारे शरीर में है, परन्तु हम लोगों को इस का ठीक ज्ञान नहीं है।

पौधों के अन्दर रस की धारा बहती* रहती है और इस बात की तो अब हाल में जांच हो गई है कि इस धारा का प्रत्यक्ष तब होता है कि, जब, पौधे के शरीर में कुछ जखम हो जाय या हम उस के फूल, पत्तियों को तोड़ लें। उस दशा में दर्द या कष्ट की गति वहां से आरम्भ होकर पौधे के शरीर भर में व्याप जाती है।

अतः निश्चय हुआ कि पौधों में (Sense-organs) ज्ञान इन्द्रिया विद्यमान हैं (और फिर जीवधारी क्यों नहीं ?)॥

चौथा अनुवाक।

बिम्ब-प्रतिबिम्ब।

और भी प्रा० फ्रान्स कहते हैं —

"वनस्पतिशास्त्र के एक भारी ज्ञाता प्रोफेसर नगेली (Nageli) वृक्षों में चेतनता मान रहे हैं। (Psychology) अध्यात्म-विद्या वालों ने पशुओं पर अनेकों परीक्षायें कीं और यह निर्णय कर दिया कि ऐसे बहुतेरे जीव जन्तु हैं जिन में दिमागी नसों (Nervous system) क

---

*ठीक जिस प्रकार हमारे अन्दर रुधिर बहता है (मन्त्र०

भाव पाया जाता है, परन्तु वे उन सारी बातों को प्रकट करते रहते हैं जो किसी जीवधारी में सम्भव हैं।

यह जीवात्मा का सादा प्रयत्न, जो निस्सन्देह मस्तिष्क की सहायता के बिना ही प्रादुर्भूत होता है (reflex) "प्रतिबिम्ब" कहलाता है। इसका आशय समझाने के लिये हम इतना कह देते हैं कि जब मनुष्य आंखे बन्द कर लेता है, उस समय उसकी देखी सुनी वस्तुओं का जो ध्यान मन में आता है (बहुधा देखी हुई वस्तुयें आँखों के सामने प्रत्यक्ष सी प्रतीत होती हैं) उसी को "प्रतिबिम्ब" कहते हैं।

.. . .. वृक्षों में इसी प्रकार का प्रतिबिम्ब पाया जाता है — उन का प्रकाश की ओर आकर्षित होना, या पत्तों का जखमी होने पर झुक जाना—आदि इस सिद्धान्त के प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। इस प्रकार वृक्षों में जीवात्मा का कार्य देखे जाने से उन में उस की विद्यमानता माननी पड़ती है।

पाचवां अनुवाक।

फिर भी प्रो० फ्रान्स कहते हैं —

"कई वनस्पतिशास्त्र के ज्ञाता महाशय गण इसी परिणाम पर पहुंचे हैं कि वृक्षों में अवश्य जीवात्मा (soul) विद्यमान है।

इस बारे में प्रो० कर्नर (Kerner) साहब बहुत प्रबलता पूर्वक कथन कर रहे हैं तथा अपने पक्ष की पुष्टि में प्रमाण भी बहुत काफी दे रहे हैं। वे वृक्षों में (Division of labour) कार्य विभरण का विभाजित होना बतलाते हैं। यह ऐसी बात है जो बिना परस्पर के मेल मिलाप और एक दूसरे से परिवर्तन करने की प्रणाली के नहीं हो सकती। पौधे के सारे अवयव एक ही कार्य में नहीं लगे रहते, किन्तु एक कार्य को एक कर लेता है; तो दूसरे को दूसरा। जैसे प्रकाश का यह प्रभाव होता है कि पत्तियां तो इस की ओर आकर्षित हो जाती हैं परन्तु जड़ पृथक हटता है। यह प्रणाली "कार्य विभाग" हम मनुष्यों में पूर्ण रूप से विद्यमान है। अवश्य ही हमारा दिमाग बिना सारे अङ्गों की सहायता के कुछ नहीं कर सकता यही बात वृक्षों में भी समझी जानी चाहिये। अत हम चाहें इसी को (Instinct) पाशविक बुद्धि (हैवानी अक्ल) कहें या "जीवात्मा" कह दें।

छठवां अनुवाक।

इसी पुस्तक के पृष्ठ २१ पर प्रोफेसर फ्रान्स कहते हैं कि —

"वे सब कैसे विचित्र प्रकार से नाचते हैं, आराम कर

हैं, दूसरों के साथ मेल करते हैं। इन (छोटे जीवों) के परिवार प्रायः हरे रङ्ग के पानी के धागे के रूप में फैल जाते हैं, और अब छोटे २ गोलाकार रूप बना लेते हैं, फिर साधारण पत्तियों का रूप धारण करते हैं। और आश्चर्य तो यह है कि कैसे ही अपने जीवन के कार्यों का सम्पादन करते हैं—अपने गुजरान की सामग्री को खींच लेते हैं, उस को हज्म करते हैं, श्वास लेते हैं, अपने अङ्गों को फैलाते हैं, और पानी से पृथ्वी सम्बन्धी जीवन को प्राप्त कर लेते हैं, इत्यादि २ बातें ऐसी हैं जिन का पानी के एक एक बूंद में पाया जाना निस्सन्देह उस में एक छोटे पौधे के अङ्कुर का पता देता है। फिर देखो कली के भीतर के करामात तो बड़े ही अजीब हैं, और पौधों के अन्दर नसों का होना भी आश्चर्य में डालता है। फिर उन की धीमी गति और हिलना झूलना आदि भी विचारणीय ही है। और ख्याल रखना चाहिये कि पौधे भी अपने सारे शरीर को बहुत आसानी से भली प्रकार आनन्द के साथ हिलाते, डुलाते, या झुमाते हैं। ठीक जिस प्रकार कोई पूर्ण ज्ञानी पशु* कर सकता, परन्तु वे ऐसा बहुत धीरे धीरे ही किया करते हैं।

---

*अर्थात् जैसे पशु या हम मनुष्य लोग अपने शरीर के अंगों को हिलाते हैं या अंकड़ाई जमुहाई आदि लेते हैं, इत्यादि इसी प्रकार वे वृक्ष भी करते हैं, वे केवल चल फिर नहीं सकते (मङ्गलानन्द।)

"फिर यह भी विचार करो कि उन की जड़ें पृथ्वी को फोड़ कर अन्दर घुसती हैं, कलियां और टहनिया अपने तङ्ग घेरे में भी लहराती रहती हैं, पत्तियों और फूलों में समयानुसार परिवर्त्तन होते रहते हैं, लताओं की टहनिया कैसे चक्राकार रूप धारण करती हुई अपना आश्रय पकड़ लेती हैं इत्यादि २ बातों के होने पर भी कुछ मनुष्य इन वृक्षों को जीव-रहित जड़ पदार्थ मान रहे हैं, क्योंकि उन्होंने गम्भीर विचार नहीं किया और विषय की छानबीन करने के लिए बुद्धि नहीं लगाई।"



सातवां अनुवाक।

पौधों में लगभग मानुषी गुण पाये जाते हैं।

उक्त शीर्षक (Almost Human Plants) लेख बम्बई क्रानिकल ता० ४ अगस्त १९२० ई० के अंक में छपा था, उस का साराश इस प्रकार है —

*परन्तु हमारे कुछ आर्य सामाजिक महाशय गण तो इस भ्रम में पड़ गये कि अगर वृक्ष को जीवधारी मानेंगे तो मांसाहारी लोग यह आक्षेप करने लग जायगे कि निरामिष-भोजी लोगों पर भी उन्हीं के सदृश हिंसा का पाप लगेगा। हम इस भ्रम को अन्तिम खण्ड में निवारण कर देंगे (मङ्ग०)।

"जब मिस्टर बर्नार्ड शा ने सर जगदीश चन्द्र बोस के लेबोरेटोरी (अन्वेषणालय) को मेडावेल में देखा तो वे खिन्न हृदय हो गये, क्योंकि एक निरामिषभोजी (वेजिटेरियन) यह दृश्य कैसे देख सकता है कि गोभी का एक टुकड़ा उबाला जाय जिस से वह मौत के मुह मे जा पड़े। प्रायः अन्य निरामिषभोजियों को भी इसी प्रकार का खेद प्राप्त होगा।*

.. श्री बोस जी न २५०० पृष्ठों के भारी ग्रन्थों में यह दर्शाया है कि पौधों में नस नाड़ियों की गति मौजूद है। स्मरण-शक्ति, राग, द्वेष, और ज़िन्दगी मौत आदि भी मौजूद हैं। इतना ही नहीं बलिक उन में गरमी, प्रकाश, और विद्युत ज्ञान भी विद्यमान है। ये ऐसी बातें हैं जिन से हम उन्हें मानुषी छाया ही कह सकते हैं।



हरे मटरों मे विद्युत्।

हरे मटर के मृत्यु से हाने वाली पीड़ा से कौन इनकार कर सकता है? क्यो कि जब मटर मरता है तो कांपता या तड़पता है। महात्मा बोस कहते हैं—

*उन के इस प्रकार के भ्रम, शङ्का या धर्मसङ्कट के निवारण के उपाय हम इस पुस्तक के अन्तिम खण्ड मे बतलायेंगे (मङ्ग०)

If five hundred peas were arranged in series the electric pressure would be five hundred volts; which may cause even electrocution of unsuspecting victims —

अर्थ —अगर ५०० मटरों को एक पक्ति में रक्खा जाय तो बिजली का धक्का ५०० "वाल्ट" (Volts) में होगा, जिस का परिणाम यह होगा कि उन सब पर इस का प्रभाव पडेगा।

ऐसा प्रतीत होता है कि पौधे हमारे ही सदृश गति (दिल) की धड़कन रखते हैं। और यह भी अचम्भे की बात है कि वृक्ष की नाडियों पर विष का प्रभाव वैसा ही पड़ता है जैसा कि मनुष्यों पर — बल्कि पौधों को मनुष्यों से भी अधिक लाभ प्राप्त है। जैसे कि पौधे की बाढ जब समाप्त हो जाती है, तो उस को फिर से हम बिजली की सहायता से तरो ताजा बना लेते हैं।"

इत्यादि वाक्यों से यह स्पष्ट हो रहा है कि वृक्षों में मनुष्यों, पशु पक्षियों ही के सदृश चेतनता के सब लक्षण पाये जाते हैं।

सत्रहवां अध्याय ।

वृक्ष की आयु और मृत्यु होती है।

पहिला अनुवाक ।

—०—

वनस्पति विद्या (Botany) की एक स्कूली पुस्तक Observation Lessons Reader no 3 के उर्दू अनुवाद में लिखा है —

इमली के पेड़ की आयु २०० वर्ष है।
नीम के " " " ७२ वर्ष है।

इस से यह ज्ञात हुआ कि वृक्ष भी हमारे ही सदृश चेतन हैं। जिस प्रकार अन्य जीवधारियों की आयु नियत रहती है, उसी प्रकार वृक्षों की आयु भी नियत होने से हमारी इन के साथ समानता है। देखो मनुष्य, पशु, पक्षियों की आयु का अनुमान निम्न लिखित चक्र से ज्ञात होगा —

संख्या	नाम	आयु	विशेष
१	मनुष्य	१००	वेदों में कहा है "जीवेम शरदः
२	कुत्ता	२०	शतम"
३	खरगोश	८	

४	गाय	४०	
५	घोड़ा	५०	
३	कछुवा	१५०	
७	हाथी	२०० से ४००	
८	साप	१०० से १०००	जो पङ्ख वाले सांप होते हैं या जो भूमि के अन्दर पथ रादि में रहते हैं बहुत आयु पा सकते हैं*
९	कौवा	८०० वर्ष	यह लोकप्रसिद्ध है, परन्तु इसके ठीक होने का कोई प्रमाण नहीं है।
१०	गिद्ध	४०० ,,	

जैसे इन पशुओं आदि की आयु नियत है (अर्थात् अगर कोई वध न करे और खान पानादि व्यवहार ठीक २ चला जाय तो इतनी इतनी आयु तक वे जीवित रह सकेंगे) उसी प्रकार वृक्षों का भी हाल है। गेहू, चना, जौ आदि की आयु छः मास की है। मकई, ज्वार, बाजरा, उड़द, मूग, आदि की चार मास, सावाँ काकुन आदि की तीन मास। गेंदा, गुलहजारा

*साप जो केवल वायु भक्षण पर ही आधार रखते हैं अधिक काल तक जीवित रहते हैं। मनुष्य भी जो योगी वायु-भक्षी होते हैं १०० से ऊपर ४०० वर्ष पर्यन्त जीवित रह सकते हैं। (मङ्ग०)

आदि फूल पौधों की छ मास, अरहर, कपास, गन्ना आदि की एक साल के लगभग। केला गन्ना आदि की तीन वर्ष। आम जामुन इत्यादि बडे बडे पेडों की सौ सौ वर्ष या और अधिक। बरगद के पेड़ की आयु १००० वर्ष की सुनी जाती है। इत्यादि इत्यादि।

अगर वृक्ष जड़ होते तो जैसे जड पदार्थों की कोई आयु नहीं हुआ करती वैसे ही वृक्षो का भी कुछ ठीक ठिकाना न रहता।

पुस्तक "पौधो की मानसिक दशा" के पृष्ठ २३ पर प्रोफेसर फ्रान्स साहब कहते हैं कि Flora "फ्लोरा" नाम के पौधे का समूह १००० वर्षो से भी अधिक आयु तक जीवित रहता है।

दूसरा अनुवाक।

पुस्तक वैज्ञानिक खेती प्रथम भाग में श्रीमती हेमन्त कुमारी देवी जी यों लिखती हैं—

"जिस तरह खोराक न पाकर और जीवधारियों का शरीर सूख जाता है, उसी तरह वृक्ष भी सूख कर दुबले हो जाते हैं और मर जाते हैं।"

(फिर देखो पृष्ठ ४५ पर)—

"ताज़ी सरसो की खली पेड की जड़ में डालने से उस को तेज़ी के मारे कभी कभी पेड़ के सूख जाने का डर रहता है।"

तीसरा अनुवाक।

विष-प्रयोग।

श्री महात्मा जगदीश चन्द्र जी ने तार के पौधे पर यह परीक्षा की है कि विष या कोई नशे वाली वस्तु डाल दी गई तो वैसा ही फल हुआ जैसा कि किसी जीवधारी में विष देने पर इस को एक दम मूर्च्छा होने लगी और इस के नस नाड़ियो की गति मृत्यु सदृश बन्द होने लग गई। इसी प्रकार यह पौधा बिजली के धक्के से भी मर जाता है अर्थात् नाड़ियों के डूब जाने से उस का अन्त काल हो जाता है।

निदान् यह प्रत्यक्ष हो रहा है कि इस पौधे में जीवन प्रद वस्तुओं के प्रयोग से इस के नस नाड़ियों में उन्नति पाई जाती है, कमज़ोर करने वाली वस्तुओं से नाड़ी की

चाल सुस्त हो जाती है और विष प्रयोग से तो मृत्यु ही हो जाती है।"

यह तो विष प्रयोग की दशा हुई, परन्तु वृक्ष अपनी स्वाभाविक मौत से भी मर जाते हैं, प्राय आपने ठूठ दरख्तों को देखा होगा, वे तो अवश्य स्वाभाविक मौत से मरे हुये हैं।

यत. आयु और मृत्यु जीवधारी में ही होना सम्भव है इस लिये वृक्ष को अब कोई जीवरहित नहीं कह सकता।

अठारहवां अध्याय।

—:—

डा० ज० चन्द्र बसु का परिचय।

पहिला—अनुवाक।

—०—

इस मत से बढ़ कर एक बात पाठकों के ध्यान में दिलाना चाहता हूं कि जहां प्राचीन आर्यावर्त ने भली प्रकार संसार में यह सिद्धान्त फैलाया था कि वृक्षों में जीव रहता है, (जिसे आप आगे पढ़ेंगे) वहां बड़े हर्ष की बात है कि इस ज़माने में भी यह गौरव भारत ही को प्राप्त हुआ। इस के एक सपूत ने समस्त यूरोप, अमेरिका के विद्वानों को चकित करते हुये एक ऐसी बात उन्हीं की युक्तियों के आधार पर सिद्ध कर दिखाई जो कभी इन पाश्चात्यों की खोपड़ी में न आई थी, और वे लोग इस भारतीय आविष्कार के लिये सदा आभारी बाधित रहेंगे।

डाक्टर सर जगदीश चन्द्र बसु प्रोफेसर, प्रेसीडेंसी कालिज, कलकत्ता का नाम विज्ञान-संसार में आज दिन सूर्य-समान प्रकाशमान हो रहा है। उन्होंने यह प्रमाणित सिद्ध कर दिया कि वृक्षों में जीवों की विद्यमानता पाई जाती है।

—०—

वृक्ष में जान है—



महात्मा डाक्टर सर जगदीश चन्द्र बसु महाराज कलकत्ता।

दूसरा अनुवाक।



माडर्न रिव्यू स० १०८ दिसम्बर १९१५ पृ० ६६३ पर एक लेख "आविष्कार का इतिहास" छपा है। उस में लेखा है —।

" (बोस महाशय की यूरोप यात्रा से) एक तो यह लाभ हुआ कि विज्ञान-ससार की उन्नति भारतीय सहायता के बिना अधूरी रही जाती थी (जो पूरी हुई) दूसरे पाश्चात्यो ने भारत का गौरव अब और अधिक मान लिया।

अब भारत उन विद्या-केन्द्रों के निकट अपना आसन पाने लगा जो आक्सफोर्ड, कैम्ब्रिज इत्यादि वाले कभी इस की ओर ताकते भी न थे। ..

अब अमेरिका की प्रामाणिक विश्वविद्यालयें भी भारत से यह प्रार्थना करने लगी हैं कि वह अपने विद्या रसिक सपूतों को वहा अवश्य भेजा करे।

पाठकगण! क्या आप इसे कोई साधारण बात समझते हैं? जिस आविष्कार (वृक्ष में जीव का साक्षात देखला दिया जाना) ने भारत को इस गये बीते समय में भी ससार भर के विज्ञान-वेत्ताओं में ऊचा आसन प्राप्त करा दिया है और जिस के विषय में हमें यह कहने का

अभिमान प्राप्त है कि चाहे यूरोप अमेरिका ने आज म० वोस जी से यह नया सबक पढ कर इसे जान पाया हो, पर हम भारतवासियों के लिए यह भी वैसी ही प्राचीन बात है, जैसी अन्य "आत्मा परमात्मा" आदि का ज्ञान। क्या यह आश्चर्य न होगा, कि ऐसी दशा में थोड़े से भारतवासी और वे भी "आर्य" नामधारी ऐसे अक़्लमन्द पैदा हो जाय, जो संसार भर के नये पुराने विद्वानों के निर्णय पर तनिक भी कान न दें, मानों युक्ति और तर्कवाद के पीछे लट्ठ लिए फिरते हैं।

तीसरा अनुवाक।



महात्मा वसु के आविष्कारों का वर्णन करने से पूर्व यह उचित है कि पाठकों को उन का कुछ परिचय दिया जाय। परन्तु इस पुस्तक में उन का जीवन-वृत्तान्त वर्णन करने का अवसर नहीं है। इसलिए हम पाठकों से सिफारिश करते हैं कि श्री सुख सम्पत्तिराय भंडारी, इन्दौर की पुस्तक "डा० सर जगदीश चन्द्र वसु और उन के आविष्कार" मंगावें और भारत के ऐसे अनुपम लाल के पवित्र जीवन वृत्तान्तों को विचारपूर्वक पढ़ें।

गी। एक बात यहाँ पर हम इसी पुस्तक में से प्रकट करते हैं। वह यह कि उक्त महात्मा सचमुच प्राचीन काल के ऋषि मुनियों सदृश पूर्ण त्यागी और संसार का उपकार चाहने वाले हैं। जिसका यही सबूत है कि आपने पूर्व काल में बे तार की तारवर्क्की की विद्या को खोज निकाला था। भारत के एक बड़े वैज्ञानिक श्रीमान् पी० सी० राय महोदय का कथन है कि अगर वसु महाराज उस का पेटेन्ट करा लेते तो करोड़ो रुपये की सम्पत्ति अब तक कमा चुके होते, परन्तु उन्होंने जब देखा कि अन्य लोग इस अन्वेषण में लगे हुए हैं तो यह कार्य उन्हीं के मत्थे छोड़ कर आप अपनी इस धुन में गरकाब हुए कि वृक्षों में जीव है या नहीं। इस सम्बन्ध में आप ने पूर्ण सफलता प्राप्त कर ली है, और जो विचित्र और अद्भुत प्रकार के यन्त्रों को आपने निर्माण किया है उन के भी पेटेन्ट कराने का प्रस्ताव लोगों ने किया था, गवर्नमेंट भी अधिकार देने पर राजी थी, परन्तु आपने साफ इन्कार कर दिया और सारे संसार को अधिकार दे दिया कि जो चाहे आप की विद्या से स्वयं धन का लाभ उठावे।

इन बातों से अवश्य ही ज्ञात हो जाता है कि हमारे डाक्टर जगदीश चन्द्र जी न केवल प्राचीन भारत का नाम फिर से संसार भर में प्रख्यात कर देने वाले ही हैं, बल्कि

प्राचीन ऋषियों के सदृश ही त्यागमूर्ति और आदर्श परोप-कारी भी हैं।

अगले अध्यायों में आप उन के अद्भुत अन्वेषणों का वर्णन पढ़ेंगे।

चौथा अनुवाक।

यूरोप-यात्रा।

—०—

रायल इन्स्टिट्यूशन लन्दन की ओर से प्रो० जगदीश चन्द्र जी को अपने अद्भुत आविष्कारों को दर्शाने के लिए स० १९५९ वि० में प्रथम बार बुलाया गया था।

तब से आज तक आप कई बार यूरोप अमेरिका जाकर अपने यन्त्रों के विचित्र आविष्कारों से वहा वालों को दंग कर चुके हैं। अत: आप के कार्यों पर वहा के बड़े से बडे पत्रों में भारी प्रशसा छापी गई, उनमें से एक को हम यहा उद्धृत करते हैं—

अमेरिका के सुविख्यात पत्र "साइन्टिफ़िक अमेरिकन" में यों छपा था कि—

"पौधों के स्वय लेखन" का आश्चर्य-कारक आविष्कार जो डाक्टर सर वसु महाराज ने किया है, बडे महत्व का और

ड़ा मनोरञ्जक है। लगातार वैज्ञानिक अन्वेषणों के बाद सु महोदय ने प्रत्यक्ष वैज्ञानिक प्रयोगों द्वारा यह सिद्ध र दिया है कि अन्य जीवधारियों की तरह पौधों मे ो जीव है। उनमें भी सुख-दुख अनुभव करने की शक्ति । उन पर भी गर्मी-सर्दी जहरीली औषधियों और जली के प्रवाह आदि का वैसा ही असर होता है जैसा क अन्य जीवधारियों पर।

पाचवां अनुवाक।

बम्बई क्रानिकल ता० २४ अगस्त १९२० ई० के अङ्क एक लेख Almost Human Plants छपा था। इस प्रोफेसर गेड्डी ने महात्मा जगदीशचन्द्र की प्रशंसा इन शब्दों । की है—

"इस महान् भारतीय देवता की जाच पड़ताले ऐसी द्भुत और उत्तम हैं कि इन को सब लोग समझ सकते , यहा तक कि साधारण वर्ग के पुरुष और स्त्रिया तक ासानी से समझ सकती हैं। उन्होंने एक ऐसा यन्त्र नाया है कि जिससे पौधों की गति दस करोड गुणी Hundred Million Times) प्रकट हो जाती है। उस यन्त्र को एक करोड़ (Ten Millions) शक्ति

युक्त करके यह दर्शा देते हैं कि घोंघा की चाल, क्वीन एलिज़बेथ के १५ इञ्च वाली बन्दूक़ की गोली की गति से २४ गुणी ज़्यादा तेज़ी वाली होती है ।

छठवां अनुवाक ।

महात्मा जी की महानता का इससे भी पता लगेगा कि आपने अपने लन्दन वाले व्याख्यान में यह घोषित किया था—

"मेरे स्थापित किये विद्यालय (कलकत्ता) में समस्त संसार से कोई भी आकर इस विद्या को सीख सकता है, जिस प्रकार आज से ढाई हज़ार सालों पूर्व नालन्दा और तक्ष-शिला के विश्व विद्यालयों में संसार के सब प्रान्तों से विद्यार्थी लोग आते थे ।"

कहिये पाठक गण ! क्या यह थोड़े हर्ष की बात है कि इस गये बीते समय में भी भारत के इस सपूत ने इसके प्राचीन गौरव का एक नमूना खड़ा कर दिया है । अवश्य ही आज महात्मा जगदीश चन्द्र के प्रताप से नालन्दा और तक्ष शिला का स्मारक फिर एक बार भारत में स्थापित तो हो सका । भारतीय जनता हमारे जगदीश जी का जितना मान्य करे थोड़ा है — भारत के सच्चे सपूत जगदीश ! चिरञ्जीवी हो, चिरञ्जीवी हो ! चिरञ्जीवी हो !

उन्नीसवां अध्याय

महात्मा वसु के यन्त्र ।

पहिला अनुवाक।

श्री जगदीश चन्द्र वसु महाराज ने वृक्षों को जीवधारी सिद्ध करने के लिए—प्रत्यक्ष दर्शा देने की गरज से—कुछ यन्त्र निर्माण किये हैं। ये यन्त्र ऐसे सूक्ष्म हैं कि इन की सहायता से सूक्ष्माति सूक्ष्म बातों का भी ठीक ठीक पता लग जाता है। पौधों की सूक्ष्म-गति, पौधों और धातुओं में होने वाली सूक्ष्म से भी सूक्ष्म हलचल एक सेकन्ड में पौधों के बढने का परिमाण आदि कितनी ही बातें जो मानुषी बुद्धि से परे हैं, इन यन्त्रों के द्वारा जानी जा सकती हैं।

इन यन्त्रों के नाम इस प्रकार हैं

१—Resonant Recorder—

प्रति ध्वनि प्रकाशक यन्त्र ।

२—Self Recording Apparatus—

स्वय सूचक यन्त्र ।

३—Oscillating Recorder —

गति प्रकाशक यन्त्र।

४—Crescograph —

वृद्धि सूचक यन्त्र।

५—High magnification—Crescograph—

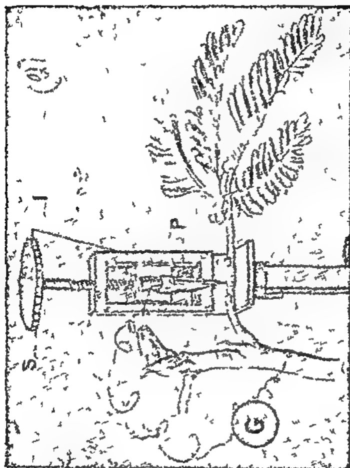
अति उत्कृष्ट वृद्धि सूचक यन्त्र।

दूसरा अनुवाक।

अब हम उक्त पांचों यन्त्रों के कार्यों का विवरण सुनाते हैं—

जो प्रथम "रेसोनेन्ट रिकार्डर" याने प्रति-ध्वनि प्रकाशक यन्त्र है उस के द्वारा पौधों की धड़कन की गति अपने आप अङ्कित हो जाती है। इस यन्त्र मे एक काला काच लगा हुआ है, उसी पर बारीक बारीक लकीर होती जाती हैं। ये लकीरें क्या हैं? पौधों पर जिस प्रकार आघात होता है उसी के भाव को ये लकीरें प्रकट करती हैं। प्रयोग के लिये यदि पौधों पर क्लोरोफार्म डाला जाय तो लकीरों का स्वरूप कुछ, भिन्न होगा। यदि उस पौधे को ठंढे पानी में रख कर प्रयोग किया जाय तो लकीरों का स्वरूप कुछ भिन्न होगा। इसी प्रकार गरम

वृक्ष में जीव है।



महात्मा जगदीशचन्द्र वसु का एक यन्त्र।

(देखो खण्ड १, अध्याय १८, अनुवाक २, पृष्ठ १४२)

पानी के प्रयोगो से लकीरों का भाव और ही दिखाई देगा। मतलब यह कि पौधों की भिन्न २ दशाओं के स्वरूप का ज्ञान भिन्न २ प्रकार पाया जाता है। इस से यह स्पष्ट है कि भिन्न २ अवस्थाओं का प्रभाव भिन्न २ पड़ने ही से उस यन्त्र के काले काच पर भिन्न २ प्रकार की लकीरें होती हैं। यह यन्त्र बिजली की शक्ति से चलाया जाता है। इस यन्त्र के द्वारा पौधों की स्नायविक धड़कन अपने आप अङ्कित हो जाती है, या यो कहिये कि पौधा कलम पकड़ कर इस काच पर अपनी हालत लिख देता है।

इसी यन्त्र के द्वारा डाक्टर वसु ने वनस्पतियो पर कई प्रकार के प्रयोग कर के इस बात को खूब अच्छी तरह जान लिया है कि अन्य प्राणियो की तरह वनस्पति में भी त्वचा और स्नायु (Nerve) हैं। इन में भी आकुञ्चन और प्रसरण आदि अन्य प्राणियों के सदृश होता है।

तेज़ाब, ऐमोनिया की भाफ, गरम धातुओं के स्पर्श, विद्युत् के धक्कों आदि का जैसा प्रभाव मनुष्य की त्वचा और स्नायु पर पड़ता है, वैसा ही प्रभाव वनस्पतियों पर भी पड़ता हुआ दिखाई देता है।

आप ने सिद्ध किया कि सब वनस्पतियों मे अनुभव करने की क्रिया वर्तमान है।

तीसरा अनुवाक।

— ०.—

(दूसरा यन्त्र)

Self Recording Apparatus

(स्वयँ सूचक यन्त्र)

इस यन्त्र से कैसा भारी लाभ प्राप्त किया गया? यह बतलाने के लिये हम नीचे का वाक्य उद्धृत करते हैं—

"यत यूरोप के विद्वानों ने यह तै कर डाला था कि लाजवन्ती में स्नायु नहीं है * इसलिये हमारे महात्मा जगदीश चन्द्र जी ने इस यन्त्र द्वारा इस बात की खूब जाच पडताल कर डाली। अर्थात् लाजवन्ती के पौधे को इसी ग्लास (यन्त्र) मे रख दिया कि वह स्वय अपनी दशा को इस यन्त्र पर लिख दे। पर इस का कुछ परिणाम न हुआ। वह पौधा बहुत ही कमजोर और लकवा मारे जैसा हो गया। वह ठिठुर गया। इस के बाद डाक्टर वसु ने इस पौधे को फिर सचेत करना और ताक़त में लाना चाहा। आपने इस पौधे को बिजली के द्वारा

* लाजवन्ती के पडताल से वे अन्य सभी वृक्षों पौधों में नस नाडी होने के इन्कारी बन रहे थे (मङ्ग०)

खूब उत्तेजना (Stimulation) पहुचाई। परिणाम वही हुआ जो बिना व्यायाम पहुचाये हुए हाथ को व्यायाम देने से होता है। अर्थात् पौधा इस उत्तेजना से अपनी खोई हुई शक्ति पाने लगा — वह अच्छा होने लगा। अब यह पौधा अपनी हालत मजे से उस यन्त्र पर अङ्कित करने लगा।

डाक्टर वसु महोदय ने इस ख्याल से कि इस प्रयोग में जरा सी भी गलती न होने पावे, यह देखना चाहा कि ताप (Temperature) का असर इस पर कैसा होता है। उन्हों ने इस पौधे में कुछ उष्णता पहुचाई और फिर उसे बिजली के द्वारा उत्तेजना दिया। इस वक्त आपने देखा कि इस उत्तेजना या धक्के (Shock) का परिणाम उस पौधे पर अधिक शीघ्रता से होने लगा, और उक्त यन्त्र के कारण इनका परिणाम साफ २ मालूम होने लगा। इस के बाद डाक्टर जगदीश जी ने उस पौधे का ठण्डक पहुचाई। इससे वह इतना ठिठुर गया कि उस यन्त्र पर कुछ भी चिह्न अङ्कित न कर सका। डाक्टर महाशय ने फिर इस पर पोटाशियम साइनाइड (Potassium cynide) नामक एक हलाहल विष डाला। उसका परिणाम यह हुआ कि पाच ही मिनिट में उस की सब स्नायविक क्रियायें बन्द हो गई, वह मर गया।"

निदान इस जाच से प्रत्यक्ष सिद्ध हो गया कि पौधों

में स्नायु (नस नाडियां) विद्यमान हैं, और उन पर बाहरी प्रभाव का असर पड़ता है (और वे मर जाते हैं) ।

चौथा अनुवा

(तीसरा यन्त्र)

(Oscillating Recorder)

गति प्रकाशक यन्त्र ।

इस सूक्ष्म यन्त्र के द्वारा पौधो में होने वाली सूक्ष्म से भी सूक्ष्म स्पन्दन-क्रियाओं का पता लग सकता है। -

यह परीक्षा "तार के पौधे" पर की गई । इस पौधे के पत्ते धड़कते हुए हृदय की तरह नीचे और ऊपर को निरन्तर उठा और झुका करते हैं। निदान इस पौधे में होने वाली स्पन्दन क्रिया प्राय प्राणियों के हृदय की स्पन्दन-क्रिया के समान है । इतना ही नहीं, बल्कि यह भी जाच की गई कि जिस प्रकार हृदय की क्रियाओं का प्रभाव नाड़ियों पर पड़ता है, वही हालत इस पौधे की भी है।

जीव तत्वज्ञों का कहना है कि ईथर के प्रभाव से

प्राणियों के हृदय की गति मन्द हो जाती है। अत डाक्टर वसु जी ने यह जाँच पड़ताल करना चाहा कि क्या यही दशा वृक्षों की भी है या नहीं?

इस निमित्त महात्मा वसु ने तार के पौधे को एक कोठरी में रक्खा और उस कोठरी में प्रबल ईथर नाम क भाफ भर दिया। इस का परिणाम यह हुआ कि इस पौधे के पत्तों की स्पन्दन-क्रिया अर्थात् धड़कन उसी प्रकार मन्द हो गई, जिस प्रकार मनुष्य के हृदय की गति उस दशा में मन्द पड़ जाती है, जब उस को बेहोश करने वाली दवाई दी जाती है। अच्छा, अब महात्मा वसु ने उस कोठरी में ताजी और शुद्ध हवा भर दी, तो इस का फल यह हुआ कि उक्त पौधे के पत्तों की स्पन्दन-क्रिया अब अधिक तेजी के साथ होने लगी। ज्यों ज्यों शुद्ध वायु की अधिकता हुई, त्यों त्यों उस में नव-जीवन का सञ्चार होने लगा। ईथर से भी अधिक प्रभाव इस पौधे पर क्लोरोफार्म का देखा गया है। जरा सा क्लोरोफार्म दे देने से इस के पत्तों की स्पन्दन-क्रिया बिल्कुल रुक गई, कभी कभी इस से मृत्यु तक हो गई।

पांचवां अनुवाक।

(Crescograph)

वृद्धिसूचक यन्त्र।

अब चौथे "क्रेस्कोग्राफ" अर्थात् वृद्धि-सूचक यन्त्र का हाल सुनिये—

इस की सहायता से वनस्पति की सूक्ष्मातिसूक्ष्म वृद्धि (Growth) याने बाढ का पता चल सकता है।

कहा जाता है कि बीर-बहूटी तथा (Snail) घोंघा सब से धीरे चलने वाले जन्तु हैं। परन्तु वृक्षों के बाढ की गति इन जन्तुओ की चाल से भी दो सहस्र गुणी कम हैं। इतनी सूक्ष्म गति का पता लगाना कैसा कठिन काम है। परन्तु म० बसु ने अपने इस यन्त्र की सहायता से यह भेद भी प्रकट कर दिखलाया। अर्थात् उन्होंने इस यन्त्र के द्वारा वृक्षों की द्धि को हजार, दस हजार और कभी कभी दस लाख गुनी तक बढा कर दर्शा दिया।

इस से बडो आसानो के साथ यह बात देखी जा सकती है कि कौन सी वनस्पति की वृद्धि किस हिसाब में हो रही है। इस मे हमें एक व्यावहारिक फायदा भी है

वह यह कि—खाद, बिजली का प्रवाह तथा अन्य उत्तेजक पदार्थों का वनस्पति की वृद्धि पर क्या प्रभाव पड़ता है—यह बात केवल दस पन्द्रह मिनटों में इस यंत्र के द्वारा देखी जा सकती है। अर्थात् जहां खाद की उत्तमता या निकृष्टता का पता महीनों में लगता है, वहाँ इस यन्त्र के द्वारा यह बात मिनटों में ज्ञात हो सकती है। इस का यह उत्तम फल होगा कि जो बहुत धन आज कल तरह तरह की खादों के प्रयोगों में बरबाद होता है, वह बच जायगा। किस खाद के डालने से किसान को अधिक लाभ हो सकता है, यह बात इस यंत्र के द्वारा बड़ी आसानी से मालूम हो जायगी।

छठवां अनुवाक।

(पाचवां यन्त्र)

(High Magnification Crescograph)

अति उत्कृष्ट वृद्धि-सूचक यन्त्र

यह यन्त्र पौधे के बढ़न का वृत्तान्त तुर्त अङ्कित कर सकता है। एक सेकण्ड में पौधा कितना बढ़ता है?

ऐसी सूक्ष्म बातो को भी यह यन्त्र बतला सकता है।

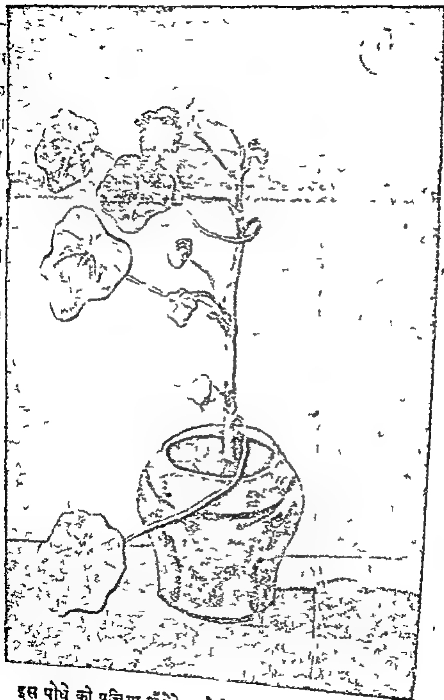
अच्छे से अच्छे प्रथम श्रेणी के सूक्ष्म-दर्शक यन्त्र में जितनी शक्ति है, उस से सौ-पचास गुनी नहीं, बल्कि हजारो गुनी अधिक शक्ति इस यन्त्र में है, कहा जाता है कि यह यन्त्र वैज्ञानिक ससार में अद्भुत क्रान्ति करेगा।

इस यन्त्र से देखने पर कोई भी पदार्थ अपने असली स्वरूप से दस-लाख गुना बडा दिखाई देता है।

जिन सूक्ष्म से भी सूक्ष्म जन्तुओ का पता आधुनिक सूक्ष्म-दर्शक यंत्र नहीं लगा सके थे, उन का पता इस यन्त्र के द्वारा सहज ही में लग जायगा।



पुष्ट में जीव हैं



इस पौधे की पत्तियां अँधेरे कमरे में खिड़की से आते हुये प्रकाश की ओर फिरी हुई हैं।

बीसवां अध्याय

म० जगदीश चन्द्र जी की जांच पड़ताल ।

पहिला अनुवाक ।

— o —

हम इस अध्याय में महात्मा वसु के कुछ अद्भुत कार्यों वर्णन किये देते हैं —

१—स्वत प्रवृत्त लेखनी द्वारा पौधों से ही वन के हालात खवा दिये।

२—शान्तअवस्था में वनस्पति जीवन का गुप्त इतिहास ना होता है, यह यत्र द्वारा दर्शाया गया।

३—आँधी, पानी (अति वृष्टि), धूप, छाँह, गरमी, ाड़ा आदि वृक्षों पर कैसे कैसे निर्दय व्यवहार करते हैं, र वे बेचारे सब सहन करते हैं, यह दर्शाया गया।

४—पौधों के आन्तरिक जीवन वृत्तान्तों को उन्हीं से यत्र की सहायता से) लिखवाया गया।

५—यह बात सिद्ध कर दी गई कि क्षुद्र से क्षुद्र वन-ति भी सँज्ञा ग्राहक (Sensitive) है।

६—पौधों में भी मज्जा तन्तु जाल प्रकट किया गया।

७—पौधों पर जब बाहरी उत्तेजना* पहुंचाई जाती है तो वे इस से प्रभावित होते हैं।

८—सरदी से वे जकड़ जाते हैं।

१०—मादक वस्तुओं से उन पर नशे का असर होता है।

११—खराब हवा से उन का दम घुटता है।

१२—ज्यादा काम † से उन्हें थकावट होती है।

१३—बेहोश करने वाली औषधियों से वे बेहोश हो जाते हैं।

१४—बिजली के प्रवाह से वे उत्तेजित हो उठते हैं।

१५—विष देने से वे मर जाते हैं।

१६—पौधों की आकृति भी अन्य जीवधारियों के समान

*अर्थात् जब हम उस की डाली पकड़ कर खींचते या तोड़ते हैं (मङ्ग०)।

† वे कौन से काम करते होंगे ? पथरीली जमीनों से रस खींचने में उन्हें भारी पुरुषार्थ करना पड़ता है। शिकारी पौधों को शिकार फँसाने आदि में बड़ा ... पड़ता है। खाद्य पदार्थों को ग्रहण कर लेने पर उन्हें पचा कर डाली, पत्ती, फल, फूल उपजाने में भी मिहनत पड़ती ही है इत्यादि (मङ्ग०)।

बदलती रहती है।

१७—वृक्ष के पत्ते कभी प्रकाश पाने के लिये लाला-यित होते हैं और कभी सूर्य की तीक्ष्ण-गरमी न सह सकने के कारण-कहीं छिपने की चेष्टा करते हैं।

१८—एक पौधे का गमला अँधेरे कमरे मे रख दिया गया और छेद यद खिड़की के एक छोटे छेद से प्रकाश की एक छोटी रेखा कमरे मे डाली गई। दूसरे दिन उस पौधे की सब पत्तिया उस क्षीण प्रकाश की ओर झुक गई।

१९—लाजवन्ती पर भी यह परीक्षा की गई, उस की सब पत्तिया प्रकाश की ओर झुक गई।

२०—एक यह परीक्षा की गई कि उसी गमले को उलटा दिया गया कि पौधे पर प्रकाश न पडे। परन्तु देर मे सब पत्तिया घूम कर प्रकाश की ओर फैल गई। और बडा अचरज यह कि वे पत्तिया कोई दाहिनी ओर और कोई बाईं ओर घूम गई।

जैसे हम लड़के, जवान, बूढे होते हैं, इसी प्रकार वृक्ष-शरीर मे भी परिवर्तन होते रहते हैं। या जैसे हमारी प्रकृति दुःख, सुख, चिन्ता, विचार आदि स बदलती है इसी प्रकार उन की दशा भी मुरझाने, कुम्हलाने आदि रूप में बदलती है (मद्य०)।

२१—यह पता लगा है कि लाजवन्ती की जड़ों में चार भिन्न २ "पेशियां" (विभाग) रहती हैं, पेशी के द्वारा पत्तियां ऊपर उठती हैं, दूसरी उन्हें करती हैं, तीसरी दाहिनी ओर और चौथी बाईं ओ घुमाती हैं।*

दूसरा अनुवाक

महात्मा बसु का व्याख्यान।

पौधों में नाड़ियां।

बम्बई क्रानिकल ता० २१ जनवरी १९२० ईसवी के अ में महात्मा वसु का वह व्याख्यान छपा है जो उन्हों इण्डिया आफिस लन्दन में दिया था। इस के प्रधा मिस्टर बालफोर महामन्त्री हुये थे, जिन्होंने महात्मा की बड़ी प्रशंसा करते हुये जनता को परिचय कराया।

महात्मा जी ने अपना कार्य यन्त्रों द्वारा दर्शाया प प्रकट किया कि पौधों की बाढ़ बहुत ही धीमी चाल में हो

* यह लेख स० १६ से २१ तक श्री रमेश प्रसाद जी एम० सी० के लेख से जो माधुरी (लखनऊ) पूर्ण संख्या छपा था, लिया गया है (सङ्क०)।

घोंघे (Snail) की चाल अत्यन्त धीमी है। तथापि वह
की वृद्धि की गति से छ हजार गुणा अधिक है। पौधों
ाढ, प्रति सेकण्ड एक इञ्च का एक लाखवा भाग मात्र
. पौधों की वृद्धि का अनुसन्धान-सँसार
भारी लाभ देवेगा, क्यों कि खेती में अधिक खाद्य
ों की उपज इसी विद्या पर निर्भर है।

Treatment of Plants

पौधों से बर्ताव।

आपने अपने यन्त्र क्रेस्कोग्राफ़ द्वारा यह दर्शाया कि
ा में अगर कोई तेज़ वस्तु डाली जाती है, तो उस का
ाव पूरा २ पड़ता है। वह अगर नियत परिमाण से
क डाली जायगी तो हानिकारक भी सिद्ध होगी। पौधे
जड़ पर विष डाल दिया गया, और वह मृत्यु प्राय
गया। परन्तु उसी विष को बहुत थोड़ा २ डालने से
परिणाम हुआ कि वह (Stimulant) ताक़त की दवाई
काम देने लगा, अर्थात् पौधे की बाढ में उन्नति कर
गा, यहा तक कि वह फूल के समय से १५ दिनों पूर्व
अपने फूल देने लगा। और एक यह भी बड़ा लाभ
ा परीक्षा से हुआ कि ऐसे परीक्षा वाले पौधे उस ताकत
ली औषधि प्रयोग के प्रताप से उन रोगो से बच गये
इन मे अनेक कीड़ों (Insects) द्वारा उत्पन्न हो जाते हैं।

अत यह जाच पड़ताल कृषी-कार्य की उन्नति ... बहुत उपयोगी सिद्ध होगी।

फिर महात्मा वसु ने यह दर्शाया कि किस प्रकार ... में नाडियों की गति हो रही है। उन्होंने यह प्रकट कर दिया कि हमारे हृदय के धडकन सदृश उन में एक प्रकार की धड़कन विद्यमान है। और मनुष्य पशु आदि को ... दे देने से जो हालत दिल की धडकन का बढ जाना, बन्द हो जाना होती है, ठीक वही दशा इन की विष देने से हो जाती है।

महात्मा जी का कथन है कि पौधों के नस नाडियों का ज्ञान प्राप्त कर लेने का एक यह अद्भुत फल होगा कि पशुओं के नस नाडियों की गति को भी हम (Controle) वश मे कर सकेंगे।

आप ने यह भी कहा कि इस जाच पडताल से एक यह लाभ ससार को होगा कि जिन पौधों को एक जगह से उखाड़ कर दूसरी जगह पर लगा देना असम्भव था, वह अब निस्सन्देह सम्भव हो गया है। यह असम्भव क्यों था? क्यों कि जब पौधे को एक जगह से उखाडने लगते थे तो उसे धक्का (Shock) लगता था, जिस कष्ट से वह मर जाता था, परन्तु इस का अब यह उपाय कर लिया गया कि प्रथम उस मूर्च्छित (Unconscious) कर दिया गया तब उखा

से उसे दु ख प्रतीत न हुआ * और दूसरी जगह लगा
जने से वरावर हरा भरा बना रहा।

महात्मा जगदीश ने कहा कि—

"मेरा यह विश्वास है कि दोनों प्रकार की सृष्टि एक
लोगों की, दूसरी वृक्षों की एक दूसरे की सहायक
हो रही है।

महात्मा जी ने अनेक फूलों के पौधों पर अपनी परी-
यें कर के दर्शाया, और यह देखा गया कि वे सब एक
स दशा में या " टेम्परेचर " (Temperature) पर पहुँचाये
ने से मर गये। पत्तियों के जलाये जाने पर महात्मा जी का
थन है कि न केवल वे पत्तिया मरोड खातीं और ठिठर
ती हैं, बल्कि यह उन की मौत का दृश्य है। जो दृष्टा-
सर्वत्र (अन्य जीवधारियों में) दृष्टिगोचर हो रहा है।

---

* अब तो हमारे बड़े से बड़े कट्टर विरोधियोंको भी
न लेना चाहिये कि वृक्ष हमारे ही सदृश जीवधारी है,
यों कि क्लोराफार्म द्वारा जैसे हमें डाक्टर लोग मूर्च्छित
र के अङ्ग को काटते हैं, पर हमें दु ख नहीं प्रतीत होता
सी ही दशा वहा भी हो रही है (सम्पा०)।

इक्कीसवां अध्याय।

म० वसुका निर्णय

पहला अनुवाक



मासिक पत्रिका " मस्ताना योगी (उर्दू) फीरोजपुर के जिल्द ६ अङ्क सँख्या ८ अगस्त १९१९ के पृष्ठ ६३ पर एक लेख श्री युत जगदीश चन्द्र जी वसु के व्याख्यान के आधार पर

दरख्त भी जख्मी होते हैं।

इस शीर्षक में छपा है, उसे हम नीचे देते हैं (उर्दू शब्दों की हिन्दी कर दी है)।

श्रीमान् महात्मा जगदीश जी कहते हैं—

"हमारे सामने वृक्षों का एक विस्तृत सँसार फैला पड़ा है। हमारी तरह वे भी जीवन रूपी नाटक के ऐक्टर हैं। वे भी भाग्य या प्रारब्ध के हाथों के खिलौने हैं, उन की जिन्दगी में भी प्रकाश और अन्धकार, गर्मी और सर्दी वर्षा और धूप, वसन्त और पतझाड, जीवन और मृत्यु की खेंचातानी जारी है। अनेकों कष्ट इन्हें पहुचाये जाते हैं। और वे बेचारे उन के विरोध में " आह " तक भी नहीं

करते। मैं उन के जीवन-इतिहास के कुछ भाग पढ़ने का प्रयत्न करूंगा।

दूसरा अनुवाक।

गूंगा कष्टों को कैसे प्रकट करता है।

जिस समय किसी मनुष्य को कोई चोट, दुख या ज़ख़म पहुचे, तो इसका प्रतिवाद-रूपी पुकार (चीख़) हमें बतला देती है कि इसे कष्ट पहुचा है। परन्तु गूँगा कोई शब्द नहीं बोल सकता (हमारे सदृश दुखपीड़ा से चिल्ला कर अपना दुख नहीं प्रकट कर सकता)। इसके कष्टों का फिर हमें कैसे पता लगता है? हम इसकी दुख भरी दृष्टि को पहिचानते हैं। इसके अङ्गों की ऐंठन को जानते हैं और सहानुभूति हमें बतला देती है कि इसे दुख पहुचा है। जिस समय मेंढक को चोट पहुचाई जाती है तो वह टिर्राता नहीं, परन्तु उसके अङ्गों मे ऐंठन आरम्भ हो जाती है। बहुतेरे लोग यह कहेंगे कि मनुष्य और छोटे दर्जे के पशुओं में बड़ा भारी भेद है। केवल वही मनुष्य जो परमात्मा की सारी सृष्टि के साथ प्रेम रखने वाला हृदय रखता है और प्रत्येक जीवधारी के

दुःख का ख्याल रखता है, यह जान सकता है कि मेंढक को दुःख पहुंचा है। मानुषी सहानुभूति सदा ऊपर की ओर रहती है। कई दशाओं में यह बराबर वालों तक भी पहुंच जाती है, परन्तु नीचे दरजे की ओर इसका आकर्षित होना कठिन है। इसलिए बहुतेरे लोगों को इस बात में सन्देह है कि क्या पतित और नीचे दरजे वाले जन्तुओं में भी हर्ष शोक का अनुभव वैसा ही है जैसा हम लोगों में है; और यह ख्याल होता है कि क्या उनमें हमारे सदृश जुल्म और अत्याचारों से मुक़ाबिला करने की इच्छा भी विद्यमान होगी।

मानुषी प्रकृति जब स्वयं अपने अन्दर उन तुच्छ जन्तुओं के बारे में ऐसे ख्यालात रखती है, तो उससे यह आशा करना कि वह मेंढक के कष्टों की ओर आकर्षित होगी, निस्सन्देह असम्भव है।

तीसरा अनुवाक।

पशुओं को कष्ट का अनुभव।

तथापि शायद यह स्वीकार कर लिया जाय कि मेंढक कष्ट या चोट की पीड़ा के कारण विरोध (Protest) प्रकट करने के लिये, अपने अङ्गों को सिकोड़ता

या मरोड़ता है। हमें इस मामले का विचार करने या अनुवर्तन करने में भी होशियार रहना चाहिए, क्योंकि एक सुविख्यात पशु विद्या का विद्वान इस बात पर ज़ोर देता है कि पशुओं को कष्टों का अनुभव ही नहीं होता। उसका कथन है कि जब कस्तूरे को ज़िन्दा निगल जाता है तो उसको कुछ कष्ट नहीं होता, बल्कि उसको हरारत (गर्मी) का आनन्ददायक अनुभव प्राप्त होता है। निस्सन्देह इस प्रश्न का निर्णय होना असम्भव है, क्योंकि आज तक कोई व्यक्ति सिंह के पेट से जीवित निकल कर नहीं आया, जो इस आनन्द युक्त अनुभव का पता द सके।*



चौथा अनुवाक।

ज़िन्दगी का सबूत।

यत विरोध प्रकट करने वाली गतियां जीवन की कसौटी हैं, इसलिए हम एक ऐसा पैमाना नियत करने की

* शायद यूरोपियनों की यह बात वैसी ही है जैसी कि हमारे हिन्दू मांसाहारी लोग बकरे आदि का देवी के मन्दिरों में बलिदान करते हुए, यह कहते हैं कि उन पशुओं के जीवात्मा को देवी जी स्वर्ग में भेज देंगी इत्यादि।

कोशिश करेंगे कि जिससे जीवन काल का अन्दाजा लगाया जा सके।

अब विचारणीय प्रश्न यह है कि जिन्दा और मुर्दा में क्या भेद है ? यही कि जिन्दा व्यक्ति बाहरी कष्टों, पीड़ाओं का विरोध करता है, (अर्थात् कष्टो को प्रकट करने की चेष्टा करता है) जिसमें जितनी अधिक शक्ति होगी उसका विरोध उतना ही अधिक जोरदार होगा, किन्तु कमजोर व्यक्तिओं का विरोध कमजोर और हलका होगा। और मुर्दा (निर्जीव) कुछ भी विरोध नही कर सकेगा। अत जीवन का अनुमान बाहरी कष्टो, पीड़ाओं से लगाया जा सकता है। इस प्रकार "विरोध" की तेजी या कमजोरी मानो शक्तिशाली होने न होने की परीक्षा है।



पांचवा अनुवाक।

दशाओं से शरीरो मे परिवर्त्तन।

—०—

शक्ति सम्पन्न जीवन का विरोध जोरदार होगा, और कमजोर व्यक्ति केवल साधारण विरोध करेगा, ऐसी विरोधी क्रियाओं का अन्दाजा विशेष प्रकार के उपकरणों (आलात) से लग सकता है। अगर जीवित अङ्ग एक जैसे रहें तो

समान प्रकार के कष्टों का विरोध सदा एक समान होगा। परन्तु जीवित अवयव सदा परिवर्तन की दशा में रहते हैं, क्योंकि दशायें सदा शरीरों में नवीन नवीन परिवर्त्तन करती चली जाती हैं। और हम लोग प्रति दिन बदलते रहते हैं। यही कारण है, कि किसी दिन हम बहुत प्रसन्नता की दशा में रहते हैं, परन्तु किसी दिन निराशा के समुद्र में गोते खाने लगते हैं। इन दोनों दशाओं में भी हमारे अन्दर कई परिवर्तन होते हैं, और न केवल वर्तमान समय में ही, बल्कि भूत काल के संस्कारों के प्रभाव के अनुसार भी परिवर्तन होता रहता है।

ये सारी बातें मिल कर एक व्यक्ति का दूसरे से भेद प्रकट करती हैं। रुपये की जाच करने के लिए हम उसे पत्थर पर दे मारते हैं, और उसकी प्रतिध्वनि से उस के खरा खोटा होने का ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं। इसी प्रकार कदाचित जीवनों के भीतरी इतिहासों का अनुमान भी उनके कष्टों, पीड़ाओं आदि के विरोध से लग सकता है।



छठवा अनुवाक।

पौधो पर जखम का प्रभाव।

—:o—

पौधों पर जखमों के प्रभाव होने के बारे मे तीन प्रकार की जाचें हुई हैं — एक यह कि जखम वाले स्थान पर कष्ट पीडा का होना — इससे प्राय उस अङ्ग की वृद्धि रुक जाती है। दूसरे पत्ते के कटे हुए किनारों से मौत के लक्षण फैलने लगते हैं, और वे धड़कने वाली नसो तक जा पहुचते हैं, जो जीवन की समाप्ति पर बिल्कुल शान्त हो जाते हैं। मृत्यु की इस तेजी को रोकने के लिए अनुभव किये गये हैं, और कटा हुआ पत्ता, जो २४ घन्टों में मृत्यु का शिकार हो जाया करता था, अब एक सप्ताह से अधिक समय तक जीवित रक्खा जा सकता है।

सातवां अनुवाक।

गति का नष्ट हो जाना।

—o—

गति या प्राण के बारे में ... पड़ताल ... है। भारी जखमों के इस ... वे

ऐसे अनुभव किये गये हैं, कि जिनसे गति बिलकुल नष्ट हो जाती है । इस प्रकार की जाच पड़ताल के निमित्त लाजवन्ती का पत्ता पौधे से काट लिया गया । जखमी पौधे और इन के कटे हुए अवयव की दशायें विचित्र प्रकार एक दूसरे से भिन्न पाई गई । पत्ते को काटने से उस पौधे को बहुत भारी कष्ट प्राप्त हुआ, और इसके दूर २ तक के अङ्गों में एक भारी थकसाहट फैल गई । कई घण्टे तक सारी पत्तिया चुप चाप (सन्नाटे की सी दशा में) और मृत्युप्राय रही ।*



आठवां अनुवाक ।

बनावटी जिन्दगी ।

इस दशा से धीरे-२ पौधा फिर तैयार होने लगता है । और पत्तियों में फिर सञ्चालन शक्ति का चक्कर लगने लगता है । कटी हुई पत्ती, जिसका कटा हुआ भाग प्रभाव

*ठीक जिस प्रकार अगर हमारा कोई अङ्ग (हाथ पाव आदि) काट लिया जाय, तो उस जखम की पीड़ा से हम बहुत दुखी हो जाते हैं—प्राय मूर्च्छित तक भी हो जाते हैं ,(मङ्गलानन्द) ।

शाली औषधि में रख दिया गया शीघ्र ही अपनी असली दशा में आ जाता है, और इस प्रकार अपना सिर उठाता है कि मानो मुकाबिला करने को धमकी दे रहा हो। इस के विरोध बहुत जोरदार शक्ति को प्रकट करते हैं। २४ घण्टे तक यही दशा जारी रहती है, जिसके पश्चात् एक विचित्र प्रकार का परिवर्तन पाया जाता है। इसके विरोध की तेजी अब शीघ्रतापूर्वक नष्ट होने लग जाती है। पत्ती, जो इस समय तक खड़ी थी, अब गिर पड़ती है, यही इसकी मौत है।"

नवा अनुवाक।

खण्ड की समाप्ति।

—०—

पाठक गण! क्या अब इससे भी बढ़ कर और कोई युक्ति हो सकती है? यह केवल युक्ति मात्र (जबानी जमा खर्च) नहीं, बरन् प्रत्यक्ष प्रमाण से सिद्ध कर दिया गया है, जिसका विवरण म० जगदीशचन्द्र जी की पुस्तकें पढ़ने से ज्ञात होगा।

इस प्रकार हमने यथा सम्भव युक्तियों अर्थात् विज्ञान (साइन्स) आदि की पुस्तकों के लेखों से यह सिद्ध कर

दिया है कि वृक्षों में जीव हैं। इस विषय में संक्षेप से इतना कहा गया, किन्तु अधिक छान बीन करने की इच्छा रखने वाले महाशय गण विज्ञान तथा वनस्पति विद्या Botany की अनेकों पुस्तकें पढ कर लाभ उठा सकते हैं।

युक्तियो का उल्लेख करते हुए हमने अभी तक पूर्व पक्ष के उत्तर नहीं दिये, क्योंकि उनके लिए एक पृथक खण्ड रख दिया गया है, अत पाठक वहा भी अनेक युक्तिया पायेंगे।

अब हम प्रत्यक्ष* अनुमान और उपमान प्रमाणों के द्वारा अपने विषय को सिद्ध कर चुकने के पश्चात् चौथे आप्त या शब्द प्रमाण की पूर्ति निमित्त अगला खण्ड **'वेदादि के प्रमाण'** आरम्भ करते हैं।

---

* महात्मा जगदीशचन्द्र जी के यन्त्रों द्वारा वृक्षों का जीवधारी होना "प्रत्यक्ष प्रमाण" है।

लाजवन्ती आदि के गतिओं आदि से "अनुमान-प्रमाण" की सिद्धि हो गई।

खाना पीना, सोना, श्वास लेना, सन्तान छोड़ना, आदि में वृक्षों की मनुष्यों, पशु, पक्षियों के साथ समानता द्वारा "उपमान-प्रमाण" समझा जायगा।

उक्त वाक्य से जाना जाता है कि श्री स्वामी
" वृक्ष " को अन्य जीवधारियों में गिनाते हुए यही मान
कि वृक्ष जीवधारी है।

दूसरा अनुवाक।

फिर सत्यार्थ प्रकाश अष्टम समुल्लास पृष्ठ २
देखो —

" वह ईश्वर के उत्पन्न किये हुए बीज, अ
जलादि के संयोग से घास वृक्ष और कृमि आदि उत्प
होते हैं ।"

यहां पर श्री स्वामी जी ने "वृक्ष" और "कृमि
इन दोनों की उत्पत्ति साथ ही साथ एक सदृश कही
अत अगर कृमि (कीडे मकोडे) जीवधारी हैं, तो निस्सन्दे
वृक्ष भी जीवधारी हैं।

तीसरा अनुवाक।

अब और प्रमाण सुनिये—

श्री स्वामी जी ने सत्यार्थ प्रकाश के नवम समुल्लास
पृ० २६४ पर कहा है.—

" देखो मनुस्मृति में पाप और पुण्य की बहुत प्रकार की गति—"

ऐसा लिख कर १५ श्लोक मनु० के उद्धत किये हैं, जिन मे एक (शरीरजैः ०) मनु० १२।९ ध्यान देने योग्य है।

इसी प्रकार पृ० २६७ पर कहा है कि—

" अब जिस जिस गुण से जिस जिस गति को जीव प्राप्त होता है, उस को आगे लिखते हैं"—इस से आगे भी मनु के ११ श्लोक नकल किये गये हैं, जिन मे से (स्थावरा) मनु० १२।४२ पर पाठकों को ध्यान देना चाहिये। हम ने इन दोनों श्लोकों को आगे "स्मृति" अध्याय में रख दिया है, पाठक वहीं देख लें और विचार करें कि इन श्लोकों को उद्धृत कर के अवश्य ही स्वामी जी यह अपना मन्तव्य प्रकट कर रहे हैं कि वे इन मनु-वाक्यों से सहमत हैं कि पाप कर्मों के कारण मनुष्य का जीवात्मा उन (वृक्ष) योनियो में भी जाता है।

प्रश्न—यह मिलावटी इबारत है। क्योंकि सत्यार्थ प्रकाश के कई समुल्लास स्वामी जी की मृत्यु के पश्चात् छपाये गये हैं?

उक्त वाक्य से जाना ज
" वृक्ष " को अन्य जीवधारियों
कि वृक्ष जीवधारी है।

दूसरा अनु

फिर सत्यार्थ प्रकाश अष्टम
देखो —

" वह ईश्वर के उत्पन्न कि
जलादि के संयोग से घास वृक्ष
होते हैं ।"

यहा पर श्री स्वामी जी ने "वृ
इन दोनो की उत्पत्ति साथ ही साथ
अत अगर कृमि (कीडे मकोडे) जीवधा
वृक्ष भी जीवधारी हैं।

तीसरा अनुवाक।

अब और प्रमाण सुनिये—

श्री स्वामी जी ने सत्यार्थ प्रकाश के न
पृ० २६४ पर कहा है.—

को उद्धृत करने से पूर्व स्वामी जी अपने शब्दों में यह कह रहे हैं कि —

" अब जिस जिस गुण से जिस जिस गति को जीव प्राप्त होता है, उस उस को आगे लिखते हैं।"

अगर ये मनु वाक्य स्वामी जी को अभिमत न होते तो वे उक्त वाक्य अपनी ओर से कह कर उद्धृत न करते, बल्कि यों कथन कर देते कि "मनु ने ऐसा माना है, पर मेरी सम्मति ऐसी नहीं है।"

पाठकों को ज्ञात हो कि इन मनु वाक्यों को आर्य सामाजिक मनु टीकाकारों (प० तुलसीराम जी, प० आर्य मुनि जी आदि) ने भी ठीक माना है, क्षेपक नहीं माना अतः ऐसे आक्षेप निर्मूल हैं।

चौथा अनुवाक।

— ० —

और भी देखो श्री स्वामी जी सत्यार्थ प्रकाश एकादश समुल्लास (ब्राह्म-समाज, प्रार्थना समाज प्रकरण में) पृ० ३९८ पर यों कथन कर रहे हैं—

प्रश्न—" जाति भेद ईश्वर कृत है वा मनुष्य कृत ? (उत्तर यह था कि दोनो, फिर प्रश्न हुआ कि कौन कौन

उत्तर—ये बातें वृथा हैं। स्वामी जी के हस्त-लिखित कागजात अब तक वैदिक यन्त्रालय में सुरक्षित हैं, और कार्य-कर्ता गण बड़ी सावधानी के साथ सब लेखों को मूल से मिला कर छपवाते है, इसलिए यह आक्षेप व्यर्थ है।

प्रश्न—जो श्लोक मनु के स्वामी जी ने सत्यार्थ प्रकाश में उद्धृत किये हैं, उन से उन्हें केवल यह दर्शाना अभीष्ट था कि मनु० में अमुक अमुक बातें इस प्रकार लिखी हुई हैं। एक दृष्टान्त सुनिये—

सत्यार्थ० दूसरा समुल्लास पृ० २५ पर—

"गुरो॰ प्रेतस्य शिष्यस्तु पितृ मेध समाचरन्।"

इस मनुवाक्य को स्वामी जी यद्यपि नहीं मानते (क्यों कि वे भूत प्रेत से इनकारी हैं) पर तौ भी इसे अपनी पुस्तक में सिर्फ "भूत प्रेत" का अर्थ समझाने के लिये लिखा है।

इसी प्रकार समझ लो कि स्वामी जी ने नवें समुल्लास में इन दो मनु वाक्यों को रख दिया है। स्वामी जी ने ऐसा विज्ञापन भी दे दिया था कि हम ने जिन श्लोकों को उद्धृत किया है उन सब को प्रामाणिक नहीं मानते।

उत्तर—ऐसा विज्ञापन अन्य स्थलों के लिये होगा। क्यों कि इन दोनों श्लोकों का स्वामी जी द्वारा प्रामाणिक मान लिया जाना इसलिए भी स्पष्ट हो रहा है कि मनु के श्लोकों

को उद्धृत करने से पूर्व स्वामी जी अपने शब्दों में यह कह रहे हैं कि —

" अब जिस जिस गुण से जिस जिस गति को जीव प्राप्त होता है, उस उस को आगे लिखते हैं।"

अगर ये मनु वाक्य स्वामी जी को अभिमत न होते तो वे उक्त वाक्य अपनी ओर से कह कर उद्धृत न करते, बल्कि यों कथन कर देते कि "मनु ने ऐसा माना है, पर मेरी सम्मति ऐसी नहीं है।"

पाठकों को ज्ञात हो कि इन मनु वाक्यों को आर्य सामाजिक मनु टीकाकारों (प० तुलसीराम जी, प० आर्य मुनि जी आदि) ने भी ठीक माना है, क्षेपक नहीं माना अत ऐसे आक्षेप निर्मूल हैं।

चौथा अनुवाक।

—०—

और भी देखो श्री स्वामी जी सत्यार्थ प्रकाश एकादश समुल्लास (ब्राह्म-समाज, प्रार्थना समाज प्रकरण में) पृ० २९८ पर यों कथन कर रहे हैं—

प्रश्न—" जाति भेद ईश्वर कृत है वा मनुष्य कृत ? (उत्तर यह था कि दोनों, फिर प्रश्न हुआ कि कौन कौन

ईश्वर कृत और कौन कौन मनुष्य कृत हैं। इस का उत्तर स्वामी जी के शब्दों में सुनो) —

"उत्तर—मनुष्य, पशु, पक्षी, वृक्ष, जल जन्तु आदि जातियां परमेश्वर कृत हैं, जैसे पशुओं में गौ, अश्व, हस्ति आदि जातिया। वृक्षों में पीपल, वट, आम्र आदि, पक्षियों में हंस, काक, बक आदि, जल जन्तुओं में मत्स्य, मकर आदि।"

अब विचारने का स्थान है कि यहा पर स्वामी जी जीवधारी योनियों की जातियों का ही वर्णन कर रहे हैं, मनुष्य, पशु, पक्षी आदि के साथ साथ वृक्षों का वर्णन करने से यही निश्चय होता है कि स्वामी जी वृक्षों को भी पशु पक्षियों के सदृश जीवधारी मानते थे। अवश्य ही जातिया केवल जीवधारी योनियों ही में मानी जा सकती हैं, निर्जीव पदार्थों में नहीं।

अत स्वामी जी के कथनानुसार वृक्षों मे जीवो की विद्यमानता सिद्ध है।

— o —

पाचवां अनुवाक।

— o —

सत्यार्थ प्रकाश १२ वा पृ० ४७८—
"जैनियों" के प्रश्नोत्तर

स्थावर शरीर वाले जीवो को सुख वा दुख प्राप्त नहीं हो सकता।

इस से स्पष्ट है कि स्थावर याने वृक्षों में जीवो का होना स्वामी जी के शब्दों में सिद्ध है।

छठवां अनुवाक।

—०—

देखो सत्यार्थ प्रकाश १२ वा समुल्लास पृ० ४७९

" जब कन्द का अन्त हम देखते हैं, तो उसमें रहने वाले जीवो का अन्त क्यों नहीं।"

यहां स्वामी जी स्पष्ट रीति से कन्द में जीवों की विद्यमानता को स्वीकार कर रहे हैं, अत वृक्ष का जीवित होना स्वामी दयानन्द के शब्दों में सिद्ध हो रहा है।

सातवां अनुवाक।

—०—

'ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन' नाम की पुस्तक द्वितीय भाग (श्री प० भगवद्दत्त जी बी० ए० रिसर्च स्कालर दयानन्द कालिज लाहौर द्वारा सम्पादित) पृष्ठ ६८ पंक्ति १० पर यों छपा है—

"(पृष्ठ ४। प्रश्नोत्तर ३०) एक वृक्ष में एक ही जीव होता है न अनेक "।

(समीक्षा)* जो एक वृक्ष मे एक जीव होता तो प्रत्येक जीव (वृक्ष) में पृथक पृथक जीव कहा से आते और किसी वृक्ष की डाली काट कर लगाने से जम जाती है, उस में जीव कहा से आया, इस लिए एक वृक्ष में अनेक* जीव होते हैं। "

इस वाक्य से ज्ञात हुआ कि श्री स्वामी जी वृक्षा को स्पष्ट शब्दों में जीवधारी मानते थे।

---

* यह समीक्षा श्री स्वामी दयानन्द महाराज की ओर से है (मङ्ग०)।

प्रत्येक वृक्ष में एक अभिमानी जीवात्मा और अन्य कई अनुशयी जीव रहते हैं, ऐसा मानना ठीक होगा। यही व्यवस्था मनुष्य शरीर की भी है, कि उसमें एक अभिमानी जीव है और उस के वीर्य में अनेकों अनुशयी जीव (भविष्य सन्तान उपजाने के लिए) आ बैठते हैं। इस विषय को हम तीसरे खण्ड की १,२ अध्यायों मे वर्णन करेंगे। (मङ्गलानन्द)।

आठवां अनुवाक ।

—०:—

श्री स्वामी जी महाराज "आर्य्योद्देश्य रत्न माला" पुस्तक के पृष्ठ ३८ में यों कथन कर रहे हैं—

"३८—जाति-जो जन्म से लेकर मरण पर्यन्त बनी रहे जो अनेक व्यक्तियों में एक रूप से प्राप्त हो, जो ईश्वर कृत अर्थात् मनुष्य, गाय, अश्व, और वृक्षादि समूह हैं, वे जाति शब्दार्थ से लिए जाते हैं।

यहां भी स्वामी जी ने गाय, अश्व आदि जीवधारियों के साथ वृक्ष को गिना कर यह दर्शा दिया है कि वे इसे भी जीवधारी ही मानते हैं।

नवां अनुवाक ।

—०—

अब इस अध्याय के अन्त में हम उपसंहार की रीति से एक बहुत ही स्पष्ट प्रमाण स्वामी जी के मन्तव्य होने का उपस्थित किए देते हैं।—

स्वामी जी के जीवनचरित्र में यों छपा है —

" जीवेभ्य का अर्थ प्राण धारण करने वालों और स्थावरी (वृक्ष) शरीर वालों का है " ।

इस प्रमाण से यह स्पष्ट सिद्ध हो रहा है कि स्वामी जी वेद के इस शब्द " जीवेभ्य " से वृक्षों के जीवों का भी अभिप्राय ले रहे हैं।

दूसरा अनुवाक

—'०'—

अब ऋग्वेद का प्रमाण देखिये :—

'आपः प्रणीत भेषज वरूथं तन्वे ३
मम । ज्योक् च सूर्यं दृशे ॥ २१ ॥

{ (ऋ० म० १ सूक्त २३ म० २१)
(ऋ० दयानंद भाष्य पृष्ठ ३६४) }

इस मन्त्र का भावार्थ स्वामी जी ने इस प्रकार लिखा है :—

भावार्थ—नैव प्राणं विना कश्चित् प्राणी वृक्षादयश्च शरीरं धारयितुं शक्नुवन्ति ।

भावार्थ*—(हिन्दी) कोई प्राणी या वृक्षादि प्राणों के विना अपने शरीरों को धारण नहीं कर सकते ॥ २१ ॥

---

*भावार्थ की हिन्दी वेद-भाष्य में नहीं है, अत यह मेरा अनुवाद है (मं०) ।

यहां श्री स्वामी जी ने वृक्षों को प्राणी के साथ दर्शाते हुये "शरीरधारी" भी मान लिया है, अतः कोई सन्देह नहीं हो सक्ता कि स्वामी जी वृक्ष को जीवधारी मानते थे।

तीसरा अनुवाक।

—०—

एक और ऋग्वेद का प्रमाण देखिये —

समाग्ने वर्चसा सृज सप्रजया समायुषा।
विद्युर्मे अस्य देवा इन्द्रो विद्यात् सहऋषिभिः।
(ऋग्वेद मण्डल १। सूक्त २३। मन्त्र २४)

इस मन्त्र के एक शब्द 'मे' का भाष्य स्वामी जी यों लिखते हैं —

(मे) मम जीवस्य। अस्य मनुष्य पशु वृक्षादिस्थस्य।

*अर्थात्—मुझ जीवात्मा का, याने इस मनुष्य, पशु, वृक्षादि में रहने वाले (जीवात्मा) का—

---

*स्वामी जी के हिन्दी अनुवादक ने इन शब्दों का न जाने क्यों भाषार्थ नहीं किया, अतः यह हिन्दी मेरी है (मग०।)

पाठक देखिये अब तो तनिक भी सन्देह इस बात का नहीं रह गया कि स्वामी जो वृक्षों को चेतन ही मानते थे, क्योंकि यहा पर वे स्पष्ट ही " वृक्षादिस्थस्य जोवस्य " (वृक्षादिकों में रहने वाले जीवों का) ऐसा कह रहे हैं, इतने पर भी जो लोग न मानें और स्वामी दयानन्द को भी वृक्ष जड़ पदार्थ मानने वाला ही कहते चले जाय, उन की इस हठ-धर्मीपन का क्या इलाज है+

——(.) o(:)——

तीसरा अध्याय।



दयानन्द निर्णय पर शङ्का समाधान।

पाहिला अनुवाक।



ऊपरी दो अध्यायों मे हमने श्री स्वामी जी के वाक्यों को उद्धृत कर के यह प्रकट किया है, कि स्वामी जी वृक्षों को जीवधारी मान रहे हैं। अब विपक्षियों की शङ्काओं पर विचार करते हैं—

प्रश्न—स्वामी जी सत्यार्थ प्रकाश पृ० १९४ पर कहते हैं कि—

"देखो सृष्टि के बीच में जितने प्राणी अथवा अप्राणी हैं, वे सब अपने अपने कर्म और यत्न करते ही रहते हैं, जैसे पिपीलिका आदि प्रयत्न करते, पृथ्वी आदि सदा घूमते और वृक्ष आदि बढते घटते रहते हैं।

इस से पाया गया कि स्वामी जी वृक्षों को जड़ मानते थे, क्यों कि यहा पर "अप्राणी" के दृष्टान्त में वृक्षों को गिनाया है।

उत्तर—यह कोई ठीक युक्ति नहीं है। जब कि हम

और जीव के आधीन है।"

प्रश्न—इस पूरी इबारत को पढ लेने से भी हमारा प्रश्न तो ज्यों का त्यों ही है?

उत्तर—स्वामी जी यहां पर नियमपूर्वक रचना का परमेश्वर और जीव के आधीन होना वर्णन कर रहे हैं। अभिप्राय यह है कि बीज का वृक्षाकार होना उस के जीवात्मा के आधीन ही है। अत बीज का जीवात्मा उसका अँखुवा फोड कर वृक्षाकार बनाता है।

प्रश्न—परन्तु हमारे स्वामी दर्शनानन्द जी ने तो यह कहा था कि जड बीज से उत्पन्न होने के कारण वृक्ष भी जड़ है। इसका क्या उत्तर आप के पास है?

उत्तर—अगर यह बात मान ली जाय तो फिर पशु, पक्षी, मनुष्य आदि को भी जड ही मानना पडेगा। क्योंकि यहा भी वही बात लागू होती है कि माता पिता के रजवीर्य से बच्चे का शरीर बनता है, यत रजवीर्य जड हैं, इसलिए उन से बना हुआ शरीर भी जड़ ही तो हुआ।

प्रश्न—रजवीर्य को जड़ कैसे कहते हो?

उत्तर—वह इस भौतिक शरीर का ही तो भाग है। हमारा यह शरीर जो पञ्चतत्वों का बना हुआ है जड़ है, इसलिए उस के अँश या भाग रज, वीर्य भी तो जड़ ही हुए।

निदान जिस प्रकार जड बीज से पैदा होने वाला वृक्ष जड़ हो गा, उसी प्रकार मनुष्य के जड़ रजवीर्य से पैदा होने वाला बालक शरीर भी जड़ होगा।

प्रश्न—इस (मानुषी शरीर) में तो जीवात्मा आ कर बैठ जाता है, इस लिए वह चेतन या जीवधारी कहलाता है?

उत्तर—इसी प्रकार बीज में भी जीवात्मा प्रवेश करता है और वृक्ष को जीवधारी बनाता है।

इस विषय में आगे तीसरे खण्ड की कई अध्यायों में पूरा विचार किया जायगा।

निदान यह आक्षेप निर्मूल है और स्वामी दयानन्द के लेख से वृक्ष का जड़ होना सिद्ध नहीं हो सकता।

चौथा अध्याय ।

विद्वानों की सम्मतियां ।



पहला अनुवाक

श्री स्वामी दयानन्द महाराज का निर्णय सुना देने के पश्चात् अब हम यह भी देखना चाहते हैं कि उन के समय से आज तक अच्छे अच्छे संस्कृतज्ञ आर्य-सामाजिक तथा अन्य विद्वानों ने क्या निर्णय किया है—

१—स्वर्गवासी पं० तुलसीराम जी सामवेद के भाष्यकार आर्य समाजों के माननीय विद्वान् थे। उन्होंने वृक्ष में जीव माना है, जो उन के किये सांख्य भाष्य से प्रकट है, जिसे हम सांख्य अध्याय में उद्धृत करेंगे।

२—श्री प० आर्य मुनि जी प्रोफेसर संस्कृत फिला फी दयानन्द कालिज लाहौर भी वृक्षों में जीव मानते हैं, जो उन के वेदान्त-भाष्य से प्रकट है जिसे हम उसी अध्याय में लिखेंगे ।

३—श्री प० शिवशङ्कर काव्य तीर्थ जी वेदों के एक भारी विद्वान हैं। उन का मत भी ऐसा ही है, जो उन के छान्दोग्य भाष्य से जाना जाता है। हम उसे उपनिषद् अध्याय में दर्शायेंगे।

४—स्वर्गवासी प० गुरुदत्त जी विद्यार्थी एम० ए० आर्य-समाज के मुख्य विद्वानों में थे। आप की सम्मति आप के वैदिक टेक्स्ट न० १ में जो (Vedic Text No 1—Atmosphere) Life & Works of Pdt Guru Dutta के पृ० २१४ पर छपी है, यही है कि वृक्ष जीवधारी हैं।

५—आर्य समाज के एक और सुविख्यात महात्मा श्रीमान् नारायण स्वामी जी भी वृक्षों को जीवधारी ही मानते हैं। देखो पुस्तक " आत्म दर्शन के उपोद्घात पृष्ठ ५७ पर आप यों कह रहे हैं—

"... देखा यह जाता है कि क्षुद्र से क्षुद्र जन्तु भी अपनी रक्षा और आहार आदि की चिन्ता रखते हैं। विज्ञानरत्न सर जगदीश चन्द्र वसु के अन्वेषण और परीक्षणानुसार तो पौधों में भी ये गुण पाये जाते हैं तो फिर यह ज्ञान इन जन्तुओं में आत्मा की सत्ता के बिना कहा से आया।"

दूसरा अनुवाक ।

—'०'—

अब हम आर्यसमाज के सिवाय अन्य विद्वानों की सम्मतिया प्रकट, करते हैं —

१—श्रीमान् लाला लाजपतिराय जी जहा आर्य-समाजो के पूजा-पात्र रहे हैं, वहा भारी भारतीय जनता के भी मान्य हैं । आप की पुस्तक " दि आर्यसमाज " के पृष्ठ २५७ पर हम पढते हैं —

". For centuries have the Hindus believed that plants were essentially as much to be regarded as living things as were animals"

(The Arya Samaj page 257-58)

अर्थ—"शताब्दिया बीत गई कि हिन्दू लोगों का यही विश्वास रहा है, कि पौधे भी वैसे ही जीवित वस्तुयें माने जाने योग्य हैं, जैसे कि पशु आदि-" ।

२—स्वर्गवासी 'लोकमान्य श्री प० बालगङ्गाधर तिलक महाराज एक भारी 'आर्य विद्वान् माने गये हैं, आप की सम्मति निम्न प्रकार हैं —

" इसके अतिरिक्त वे लोग इस बात का भी यथ-

चित निर्णय नहीं कर सकते कि वृत्त, पशु, मनुष्य इत्यादि सचेतन प्राणियो को वढो चढो हुई श्रेणिया कैसे बनीं और अचेतन को सचेतनता कैसे प्राप्त हुई ."।

(देखा भगवद्गीता रहस्य पृष्ठ १५१ प० २० "कापिल साख्य शास्त्र अथवा क्षराक्षर विचार सातवा प्रकरण")



तीसरा अनुवाक ।

अथ हम यह भा दिखलाते हैं कि सस्कृत पुस्तकों के ज्ञाता यूरोपियन लोग भी वृत्त में जीव का होना ही मान रहे हैं ।

१—प्रो० मैक्समूलर साहब ने लिखा है—

" Besides, as we say ourselves, there is life in the tree, while the beam is dead—The ancient people felt the same, and how should they express it, except by saying that the tree lives By saying thus, they did not go so far as to ascribe to the tree a warm breath or a beating heart, but they certainly admitted in the tree that was spring-

ing up before their eyes, that was growing, putting forth branches, leaves, blossoms and fruits, shedding its foliage in winter, and that at last was cut down or killed—" (See Origin and Growth of Religions P 175)

भावार्थ—"और हम लोग कहा करते हैं कि वृक्षों में जीवन है, यद्यपि उसका शरीर मुरदा है। यही बात प्राचीन काल के लोग भी मानते थे। वे वृक्षों को जीवित कहने पर कुछ ऐसी भावना तो न करते थे कि वे श्वास भी लेते होंगे या उनमें हृदय भी मौजूद होगा इत्यादि, किन्तु निस्सन्देह वे यह स्वीकार करते थे कि वृक्ष सरीहन हमारी आखों के सामने उपजता (जन्म लेता) है, बढता है, शाखायें, फल उत्पन्न करता है, शीतकाल में ठिठुर जाता और अन्त समय मर भी जाता है।"

यह है सम्मति एक ऐसे विद्वान की, जिसने संस्कृत पुस्तकों मे ही १०० वर्ष का भारी जीवन लगाया था। अत पाठक समझ सकते हैं कि कोई पक्षपात रहित विचार करने वाला सस्कृत पुस्तकों के आधार पर सिवाय उक्त निर्णय के और क्या कह सकता है।

सस्कृत की प्राचीन पुस्तकों (वेदादि) से वृक्षों में जीव का होना पाया जाता है, तभी तो मोक्षमूलर साहब

ने भी उक्त सम्मति प्रकाशित की, नहीं तो उन्हें ऐसा कहने का क्या सरोकार था ।

अत यूरोपियन निष्पक्ष संस्कृतज्ञ विद्वान के निर्णय से भी यही सिद्ध हुआ कि वृक्षों में जीव मौजूद है ।

२—और भी देखिये कि प्रोफ़ेसर मेकडानल साहब क्या कहते हैं—यूरोपियनों ने शोर मचाया था कि वेदों में आवागमन का कोई भी प्रमाण नहीं मिलता, अत हमारे प्रोफ़ेसर सा० उन्हें ललकार कर उत्तर दे रहे हैं कि —

" One passage of the Rigveda, however, in which the soul is spoken of as departing *to the waters or the plants* may contain the germs of the theory "—

अर्थ—" (कम से कम) एक वाक्य तो ऋग्वेद में ऐसा आया है जिसमें जीवात्मा के पानी , या "वृक्षों" में जाने (आवागमन) का वर्णन है । "

यहां जीव के अन्य जन्मों में वृक्षों में प्रवेश करने पर संकेत है । वह मन्त्र (सूर्यं चक्षुर्गच्छतु०) आगे "वेद" प्रकरण में आवेगा ।



चौथा अनुवाक ।

—०—

आर्य, सनातनी, यूरोपियन संस्कृतज्ञों के निर्णयों को सुन लेने के पश्चात् अब एक मुसलमान धुरन्धर विद्वान की बात पर भी कान दीजिए ।

अकबर बादशाह के सुविख्यात प्रधान मंत्री मौलाना अब्दुल फज़ल साहब ने अपनी पुस्तक "आईने-अकबरी" में हिन्दू धर्म का वर्णन करते हुए यों कहा है कि—

"Jewa Atma, that which belongs to animals and vegetables"—

(See Ayeen Akbery translated into) English by Mr F Gladwin vol II Page 389)

अर्थ—"जीवात्मा वह है जो पशुओं और वनस्पतियों में विद्यमान रहता है"।

पांचवां अनुवाक ।

—०—

अब हम अन्त में उपसंहार की रीति से संसार के एक बड़े भारी सुविख्यात महात्मा की सम्मति सुनाते हैं.—

पाठकों ने यूनान देश के अरस्तू Aristotle तत्ववेत्ता का नाम अवश्य सुना होगा। इन्होंने भी अपनी पुस्तक "पशु वर्णन" में यों कहा है—

" Plants have souls but no sensation"–

अर्थात् "पौधों में जीव तो हैं, परन्तु अनुभव-ज्ञान नहीं है"।

इस उद्धरण से पता लगता है कि सारे यूरोप का गुरु यूनान देश आज से २५०० वर्ष पूर्व काल में उसी निर्णय पर पहुंचा था, जो भारत में उससे बहुत पूर्व प्रचलित था।

एक बात यहां यह स्मरण रखने योग्य है कि अरस्तु महाराज का कथन वही था, जो हाल में श्री स्वामी दयानन्द महाराज ने प्रकट किया है कि वृक्षों की दशा हमारे सुषुप्ति सदृश है कि वे दुःख आदि का अनुभव नहीं कर सकते।*

इन सारे ही विद्वानों की सम्मतियां पढ़ कर हमें आशा है कि विचार-शील पाठक गण वृक्षों में जीवों के होने से इनकारी न रहेंगे।

---

*विज्ञान-वादियों का निर्णय उक्त सम्मति से विरुद्ध यह है कि वृक्ष हमारे सदृश दुःखी सुखी भी होते हैं।" (मङ्क०)

पाचवां अध्याय

पुराण।

—०—

पहला अनुवाक।

—०—

अब पुराणो के प्रमाण सुनिये—

आर्य समाज यद्यपि पुराणों को प्रामाणिक नहीं मानता, परन्तु साथ ही यह मन्तव्य रखता है कि सत्य वेदानुकूल बातें जहा कहीं भी होगी ग्रहण कर ली जायँगी, इसलिये हमारे आर्य सामाजिक महाशयो को पुराणों पर भी कान दे देना चाहिये—

स्थावरं विंशतेर्लक्षं जलजं पंचलक्षकम्।
कूर्माश्च नव लक्षं च दश लक्षं च पक्षिणः ॥१॥
त्रिंशल्लक्षं पशूनां च दश लक्षं च वानराः।
ततो मनुष्यतां प्राप्य ततः कर्माणि साधयेत् ॥२॥

(वृहद्विष्णु पुराण-अध्यायादि ज्ञात नहीं हो सका, पाठक तलाश करें)

ये वृहद्विष्णु पुराण के श्लोक हैं, इन में ८४ लक्ष योनियो की सूची दी गई है, जो इस प्रकार है कि—

(१) २० लाख स्थावर (वृक्ष आदि) योनिया हैं।
(२) ५ „ जल में उत्पन्न होनेवाली „ „
(३) ९ „ कूर्म (जल स्थल दोनो में रहनेवाले) हैं।
(४) १० „ पक्षी—(पक्ष से उड़नेवाले) हैं।
(५) ३० „ पशु हैं।
(६) १० „ वानर हैं।

८४ चौरासी लक्ष योनिया हुई । इन सब में चक्कर काट लेने पर मानुषी योनि प्राप्त होती है, इसलिये अच्छे कर्म करें।

इस प्रमाण से ज्ञात होगा कि पुराणों में जो ८४ लाख प्रकार की योनिया लिखी हैं कि जिनमें हम मनुष्यों के जीवात्मा कर्मानुसार घुमाये जाते है उन्हीं में वृक्ष भी हैं और कुछ थोड़े भी नहीं वरन् बीस लक्ष प्रकार के।

दूसरा प्रमाण श्रीमद्भागवत का सुनिये—

सप्तमो मुख्य सर्गस्तु षट्विधस्तस्थुषाञ्च ॥ १८ ॥
वनस्पत्योषधि, लता, त्वक् सारा, वीरुधो द्रुमा ।
उत्स्रोतसस्तम. प्राया अत स्पर्शा विशेषिण ॥ १९ ॥
(भा० ३। १०।१८, १९)

(इन श्लोकों का आशय मनु के प्रमाण में आ गया है)



छठा अध्याय

महाभारत।

पहिला अनुवाक

—०—

महाभारत शांति पर्व (मोक्षधर्म) १८९* अध्याय में यही प्रश्न उठाया गया है कि वृक्षों में जीव कैसे हो सकता है? अत हम उस अध्याय को अर्थ सहित नीचे उद्धृत किये देते हैं —

"चेष्टा वायु खमाकाश मूष्माऽग्नि सलिल द्रव।
पृथिवी चात्र सघात. शरीर पाञ्च भौतिकम्॥ ४॥
इत्येत पञ्चभिर्भू त र्युक्त स्थावर जङ्गमम्।

---

* यह सन १९०७ में निर्णयसागर यन्त्रालय बम्बई के छपे महाभारत के शान्ति पर्व पृ० २६१ पर मुद्रित है परन्तु कलकत्ता (कालिज मैशिन प्रेस ११७।१ बाहूबाजार स्ट्रीट) के छपे हिन्दी महाभारत में इन श्लोकों को हम १८४ अध्याय में पाते है इसी प्रकार एक दूसरी म० भा० में १८३ अध्याय में देखे गये, अत पाठकगण ध्यान रक्खें।

श्रोत्र घ्राण रसः स्पर्शो दृष्टिश्चेन्द्रिय संज्ञिता ॥५॥

भरद्वाज उवाच

पञ्चभिर्यदि भूतैस्तु युक्ताः स्थावर जङ्गमा।
स्थावराणा न दृश्यन्ते शरीरे पञ्च धातवः॥६॥
अनूष्माणामचेष्टानां घनानां चैव तत्त्वत।
वृक्षाणां नोप लभ्यन्ते शरीरे पञ्च धातव॥७॥
न शृण्वन्ति न पश्यन्ति न गन्ध रस वेदिन।
न च स्पर्शं विजानन्ति ते कथ पाञ्च भौतिकाः॥८॥
अद्रवत्वादनग्नित्वादभूमित्वादवायुत।
आकाशस्याप्रमेयत्वाद्वृक्षाणा नास्ति भौतिकम्॥९॥

भृगुरुवाच

घनानामपि वृक्षाणामाकाशोऽस्ति न संशय।
तेषां पुष्प फल व्यक्ति नित्य समुप पद्यते॥१०॥
ऊष्मतो म्लायते वर्णं त्वक् फल पुष्पमेव च।
म्लायते शीर्यते चापि स्पर्शस्तेनात्र विद्यते॥११॥
वाय्वग्न्यशनि निष्पेषै फल पुष्प विशीयते।
श्रोत्रेण गृह्यते शब्दस्तस्माच्छृण्वन्ति पादपा॥१२॥
वल्ली वेष्टयते वृक्ष सर्वतश्चैव गच्छति।
नह्यदृष्टेश्च मार्गोऽस्ति तस्मात् पश्यन्ति पादपाः॥१३॥
पुण्या पुण्यैस्तथा गन्धैर्धूपैश्च विविधैरपि।

स्वाद ले सकते हैं, और न स्पर्श ज्ञान (छू कर ठंढा गरम, कठिनता, कोमलता को जानना) ही रखते हैं, अतः १ कान २ आंख ३ नाक ४ जिह्वा ५ त्वचा—इन पाचों ज्ञान इन्द्रियों में से इन में एक भी नहीं है, फिर भला उनमें पञ्च भूतों का होना क्योंकर माना जाय ? ।८। वृक्षों में जल, अग्नि, भूमि, वायु और आकाश के गुण न पाये जाने से उन्हें हम पञ्च भौतिक नहीं कह सकते ॥९॥

तीसरा अनुवाक।

भृगुजी का उत्तर।

— o —

यद्यपि वृक्ष ठोस हैं, पर उन मे आकाश भी रहता है, जो अनुमान से जाना जाता है। क्योंकि यह आकाश का ही गुण है कि उनके भीतर से फल और फूल निकलते रहते हैं, विना आकाश के किसी ठोस पदार्थ से यह बात नहीं पैदा हो सकती ॥ १० ॥

वृक्षों में अग्नि तत्व की गरमी भी है, क्योंकि उनमे रङ्ग *बदलता है और छाल, फल फूल पकते हैं। वृक्षों मे वायु-

---

*जैसे आम कच्चे तो हरे रंग के होते हैं पर गरमी पाकर पकने पर पीला रङ्ग ग्रहण करते हैं। (मग०)।

तत्व (स्पर्श ज्ञान या त्वचा इन्द्रिय) भी है, क्योंकि वे कुम्हलाते, टूटते और गिरते हैं ॥११॥

हम देखते हैं कि आंधी चलने, अग्नि की लपटों और बिजली की तड़प से फल फूल गिर जाते हैं,* अत मानना पड़ेगा कि वृक्षों में शब्द सुनने का ज्ञान है ॥ १० ॥

लतायें अर्थात् वेल (वल्ली) वृक्षों या किसी आधार को देखकर उसकी ओर बढ़ जाती हैं और इच्छानुसार चलकर वृक्ष पर लपट जाती हैं । यह मार्ग विना देखे हुये नहीं । सूझता, इसलिये मानना पडता है कि वृक्ष जरूर देखते भी हैं ॥१३॥

यह देखा जाता है कि विविध प्रकार के सुगन्ध

---

*बन्दूक की धमक से पक्षियों का मूर्छित होकर गिर पडना या मर जाना और तोप की आवाज से गर्भवती स्त्रियो के गर्भपात तक हो जाना देखा जाता है, अत जिस प्रकार शब्दो का प्रभाव हम मनुष्यो, पशु पक्षियो पर पड़ता है उसी प्रकार वृक्षो पर भी होना उनके हमारे सदृश जीवधारी होने का प्रबल प्रमाण है ।
(मङ्गलानन्द) ।

। देखने की यही युक्ति यूरोपियन वैज्ञानिकों ने भी प्रकट की है, जिसे हम प्रथम खण्ड में दर्शा आये हैं (मग०) ।

*दुर्गन्ध—धूप इत्यादि से वृक्षों के रोग दूर हो जाते हैं, और वे अच्छी प्रकार फूलने फलने लगते हैं, इसलिये मानना पड़ेगा कि वृक्षों में नासिका इन्द्रिय है और वे सूँघते भी हैं ॥१४॥

यह देखा जाता है कि वृक्ष अपने पावों† से पानी पी

*जैसे अनेक प्रकार के खादों द्वारा वृक्ष पुष्ट होते हैं, वैसे ही भिन्न २ प्रकार वाले सुगन्ध दुर्गंध के प्रभाव से भी वे प्रभावित होते ही हैं—कहा जाता है कि लौकी आदि के नये पौधों पर यदि मनुष्य पेशाब करे तो वह जल जायगा। अर्थात हमारे मूत्र की दुर्गन्धि को सहन करने के लिये वह तैयार नहीं है।

नीम के वृक्ष के समीप छोटे पौधे नष्ट हो जाते हैं, क्योंकि शायद नीम का गन्ध (क्षाररूप में) उन्हें सहन नहीं होता। केलों के पौधे जहां लगाये जाते हैं अपने समीप वाले पौधों के लिए अत्यन्त लाभप्रद सिद्ध होते हैं, अत केले का सुगन्धि को ग्रहण करते हैं। इसी प्रकार अगर जांच की जाय तो वनस्पति-शास्त्र वेत्ताओं द्वारा पता लगेगा कि धूप आदि से किन किन वृक्षों के कौन कौन से रोग निवृत्त हो सकते हैं। (मङ्ग०)।

† संस्कृत में वृक्ष को "पादप" =पाद से पीने वाला कहा गया है। वृक्ष की जड़ उस का मुख तथा मस्तिष्क है, परन्तु वह नीचे होने के कारण हमारी दृष्टि में पाद-स्थानीय है (मङ्ग०)।

लेता है, उस में (खराब खाद डालने से) रोगों की *उत्पत्ति भी हो जाती है और (अच्छे खाद तथा औषधि आदि के प्रयोग से) रोगों की निवृत्ति होती है, इसलिये मानना पड़ता है कि वृक्ष में रसना-इन्द्रिय भी है ॥ १५ ॥

देखो, जसे नल के द्वारा पानी ऊपर को उठाया जाता है, उसी प्रकार वृक्ष अपने मुख रूपी नल द्वारा पानी को ग्रहण कर लेता है। और वृक्ष अपने पावों से (पानी को पवन † सहित पी लेता है (इसलिए उस में रसना इन्द्रिय अवश्य है) ॥ १६ ॥

वृक्षों में सुख दुःख‡ का ग्रहण करना पाये जाने से,

* जिस प्रकार देखा जाता है कि हम मनुष्य लोग जब कभी अधिक भोजन खा लेते हैं, तो शरीर रोगी हो जाता है, उसी प्रकार वृक्ष की भी दशा है, कि वह अपनी आवश्यकता (भूख) से जब कभी अधिक खा लेता है (वर्षा आदि में अधिक पानी सोख लेता है) तो रोगग्रसित हो जाता है (सङ्क०)।

†पवन अर्थात् नाइट्रोजिन आक्सीजन आदि।

‡ जब कि पाचों ज्ञानेन्द्रिया वृक्षों में ऊपर बतला दी गईं तो उन का सुखी दुखी होना सिद्ध ही है। हम मनुष्यों में भी तो यही पात हैं कि अपने इन्द्रियों के द्वारा विषयों का आनन्द प्राप्त करते हुए सुखी तथा अभाव में दुखी होते हैं, यही दशा वृक्षों में भी समझना उचित है।

और काट देने पर फिर से उत्पन्न* हो जाने से, वृक्षों में हम "जीव" को देखते हैं, अत वे अचेतन्य नहीं हैं ॥ १७ ॥

वह (वृक्ष) जल को खाता है और अग्नि वायु से जीर्ण होता (दुबला या मोटा बनता) है, और आहार के †परिणाम से उस मे स्नेह (चिकनाहट या चरबी) की वृद्धि भी होती है ॥ १८ ॥

अगर वृक्ष को जड़ छोड़ कर बीच से काट डालें, तो वह फिर से पूर्ववत् हरा भरा हो जायगा। अत. ज्ञात होता है कि उस की जड़ में जीवात्मा मौजूद रहता है, क्यों कि अगर उस में जीव न रहता तो फिर से फलफना असम्भव था। ठीक जिस प्रकार हम मनुष्यों के हाथ पाव आदि कट जाने पर भी हम जीवित रहते हैं, परन्तु शिर के पृथक हो जाने पर शरीर छोड़ कर जीव चला जाता है, इसी प्रकार वृक्षों में भी मुख्य स्थान उस का जड़ है, जिसे उखाड़ डालने पर वह भी मर ही जाता है। मनुष्य का उलटा वृक्ष है, हमारा जीव शिर में रहता है, तो उलटा होने से उस के जीव का पाव मे रहना ठीक ही है।

† जैसे हम लोग जो खाना खाते हैं, वह पेट मे जाकर नियम पूर्वक परिवर्तन हो कर रुधिर, मास, मज्जा (चरबी) आदि बन जाता है। उसी प्रकार वृक्षों में उन के खाद्य द्रव्य (जल, वायु, अग्नि) अनेकों प्रकार के परिणामों को प्राप्त होते हुए डाली, पत्ते, फल, फूल, रस (रुधिर स्थानीय) गुदा (मास स्थानीय) स्नेह (मज्जा या मेद स्थानीय) बन जाते हैं इत्यादि।

चौथा अनुवाक।

पाठक गण ! आप ने देख लिया कि किस उत्तमता पूर्वक महाभारत में यह विषय स्पष्ट कर दिया गया है, और जो पाच ज्ञानेन्द्रिया मनुष्यों तथा पशु पक्षियों मे पाई जाती हैं (किन्तु किसी किसी जीव जन्तु में पाच से कम भी हैं) वे सब भली प्रकार वृक्ष में दर्शा दी गयी हैं। अब जो लोग इतने युक्ति युक्त प्रमाणों को भी, न मानें उन का क्या इलाज है ॥

प्रश्न—हम महाभारत को नहीं मानते, क्योंकि मूल में केवल दश हजार श्लोक थे पर आज वह एक लाख से भी ऊपर जा रहा है। अत उस में इतनी अधिक मिलावट हुई है कि यह पता नहीं लगता कि कौन से भाग खास व्यास जी के कहे हुए हैं इसलिए अब इस का प्रमाण नहीं ?

उत्तर—यदि मान लो कि वृक्ष में जीव होने की उपरोक्त वार्ता व्यास जी से पीछे ही की रचना महाभारत मे मिलाई गई हो, तौ भी युक्ति युक्त बात के मानने से इन्कार क्यों किया जाय।

सातवां अध्याय।

जैन बौद्ध मतों की साक्षी।

पहिला अनुवाक।

जैन और बौद्ध सम्प्रदायो की उत्पत्ति इसी भारतवर्ष में हुई थी, और उनके साहित्य दो सहस्र वर्षों से पूर्व समय का परिचय दे देते हैं, अत देखना चाहिये कि प्राचीन काल से जो सिद्धांत परम्परागत आते रहे हैं, वे उनके ग्रन्थों में किस रूप में सुरक्षित हैं।—

हमें इस तात्पर्य की पूर्ति के निमित्त एक पुस्तक अंग्रेजी में मिल गई, जिसका नाम the positive sciences of the ancient Hindoos अर्थात् "प्राचीन हिन्दुओ का यथार्थ ज्ञान" है। इस को श्रीयुत ब्रजेन्द्रनाथ जी एम०ए० डाक्टर अफफिलासफी कलकत्ता विश्वविद्यालय ने रचा है। इस के पृष्ठ १७२ आदि से हम कुछ बातें (अंगरेज़ी से भापार्थ कर के) प्रकाशित करते हैं —

"स्वाप. रात्रौ पत्र-सङ्कोच . .. ...

. . वृक्षादय प्रति नियत भोक्तृयधिष्ठिता जीवन मरण

स्वप्न जागरण रोग भेषज प्रयोग बीज सजातीयानुबन्धानकूलो पगम प्रतिकूलापगमादिभ्य प्रसिद्ध शरीर वत्* । (उदयन पृथिवी निरूपणम्)

भावार्थ—(अंगरेजी का)

बुद्ध धर्म की पुस्तक धर्मोत्तरा की न्यायबिन्दु टीका में कई वृक्षों के रात्रि समय में शयन करने और पत्तियों के संकुचित हो जाने की बात कही गई है।

उदयन ने पौधों में जीवन, मृत्यु सोना, जागना, रोग, दवाई करते रहना, गर्भ† की दशा में खास २ प्रकार के स्वभावों का पड़ जाना, अपने अनुकूल वस्तुओं को ग्रहण करना और प्रतिकूल से दूर हट जाने की चेष्टा करना—इन सब बातों को देखा है।

---

*यह मूलपाठ उसी अंगरेजी पुस्तक में था।

†वृक्षों के गर्भ की दशा यह है, कि जब बीज भूमि में बो दिए जाने पर अँखुआ फोडने के प्रयत्न में [उसका जीवात्मा] प्रवृत्त रहता है। जैसे मनुष्य का बालक गर्भ में माता के कार्यों, गतियों, विचारों आदि से प्रभावित होकर वैसे ही स्वभाव वाला बन जाता है, उसी प्रकार यहां कहते हैं कि वे वृक्ष के बच्चे भी पृथिवी रूपी माता के अन्दर गर्भ धारण करते हुए जिसी न्यूनाधिक सरदी गरमी आदि में रक्खे जाते हैं, वैसे ही बन जाते हैं (भगवानद)

दूसरा अनुवाक

उसी पुस्तक में और भी यों लिखा है— *

जैन मतावलम्वी लेखक श्री गुण रत्न जी षट्दर्शन समुच्चय के भाष्य में (सिर्का Circa १३५० में प्रकाशित हुआ है) ऐसा वर्णन करते हैं — कि

वृक्षों के जीवन-स्वभाव निम्न प्रकार के हैं—

१—बाल्यावस्था, युवा० वृद्धा०।

२—विधि पूर्वक वृद्धि का होते रहना।

३—बहुतेरे प्रकार की गतियें या कार्य ऐसे होते रहते हैं कि जिन से उन में सोना जागना और स्पर्श के प्रभाव से विस्तार (फैल जाना) सङ्कोच (सिकुड़ जाना) प्राप्त कर लेना और इतने पर भी किसी खम्भे या सहारे की ओर झुकने की चेष्टा का पाया जाना देखा जाता है।

४—ज़खमों का सूख जाना या अङ्गों का शिथिल हो जाना।

५—पृथिवी के स्वभाव अनुसार खाद्य पदार्थों का ग्रहण करना।

---

*जो वृक्ष जहां आ जाता है उसी देश के जल, वायु, पृथिवी के प्रभाव से इतना प्रभावित रहता है, कि तदनुकूल

६ वृक्ष के रोगों तथा इलाजों का जहां वर्णन आया है उस से पता लगता है कि उन का बढना या घटना अनुकूल या प्रतिकूल भोजन के आधार पर निर्भर है।

७—रोगी होना।

८—रोगों का निवारण होना, या औषधियों के लगाने से जख़मों का पुर जाना।

ही खाद्य को ग्रहण करेगा। आम का पेड भारत जैसे ग्रीष्म प्रधान देश में हरा भरा रहता है, पर वही काबुल काशमीर या लन्दन, पेरिस आदि शीत प्रधान देशों में मर जायगा। इस से विरुद्ध द्राक्ष (अगूर) काबुल आदि मे जन्मता है पर लखनऊ आगरा आदि की गरमी को सहन नहीं कर सकता। हम मनुष्यों की भी तो यही दशा है—यूरोपियनों को को भारत जैसे गरम देश में खास प्रबन्ध से रहने पर भी कष्ट होता है। हिमालय की तराई बदरिकाश्रम आदि में हम लोग शीतकाल में नहीं रह सकते इसी कारण सरकार ने यात्रा केवल गरमी में रक्खी है (मङ्गल०)।

---

* पूरी अनुकूलता का खास प्रबन्ध करके तो लन्दन नगर की वाटिका में भी "आम" के पेड़ को सुरक्षित जीवित रक्खा जा सका है, या भारत में द्राक्ष (अगूर) को भी उपजा लेते हैं, परन्तु इस निमित्त उन्हें अनुकूल गरमी सरदी देने के लिये कितना बहु मूल्य प्रबन्ध किया गया होगा यह विचार सकते हैं (मङ्ग०)।

६—वृक्षों के अन्तर्गत रसों का सूख जाना या बढ जाना, जैसा कि मनुष्यों पशुओ में रुधिर की न्यूनाधिकता से उनका मोटे या दुबले हो जाना देखा जाता है।

१०—गर्भ की दशा में खास प्रकार के खाद पदार्थों की आवश्यकता का होना।

मूल श्लोकये हैं—

बिशिष्ट दौ ह्रदादि मत्व विशिष्ट
स्त्री शरीर वत् यथा स्त्री शरीरस्य
तथा बिध दौ ह्रदे पूरणात् पु
ष्पादि प्रसवनं तथा वनस्पति श
रीरास्यापि तत् पूरणात् पुष्प फलादि प्रसवन।

और भी लिखा है कि वनस्पति (जिस में फूल तो न हो परन्तु फल उत्पन्न हो जाय) में फूल भी फुलाये जा सकते है ?*

(देखो पुस्तक " वृक्षों की पोषण विधि जो श्री बराह

* इस से स्पष्ट है कि प्राचीन भारत विज्ञान की उस उन्नति-शिखर पर,पहुच चुका था, जहा अभी तक यूरोप न जा सका, क्योंकि गलर आदि वनस्पति वृक्ष मे प्राचीन आर्य कृत्रिम पुष्प उपजा सके थे, जो वर्तमा[illegible] के लिए अभी असम्भव सदृश है।

मिहिर की रची हुई है। गुण रत्न तर्क रहस्य दीपिका जैन मत श्लोक ४६ के अनुसार)।

—:o:—

तीसरा अनुवाक।

—o—

'इमी गुण रत्न जी की पुस्तक में एक सूची ऐसे पौधों की दी हुई है ,जिन मे' सोने जागने के स्पष्ट चिह्न दृष्टि-गोचर होते हैं ।

इस ग्रन्थ कर्त्ता ने यह भी ज्ञात किया है कि पौधों में प्रभावोत्पादक स्पर्श ज्ञान विद्यमान है, जैसे कि लज्जावती लता में है। जो छूते ही झट अपने अवयवों (पत्तियों) को सकुचित कर लेती है। यहां मूल पाठ प्राकृतिक भाषा का निम्न प्रकार दिया हुआ है —

"समी प्रपुन्नाट सिद्धे सरका सन्दक वप्पूलागस्त्या मलकी कति प्रभृतीना स्वाप विबोधत ।

लज्जालु प्रभृतीनां हस्तादि संसर्गात् यत्र सङ्कोचादिका परिस्फुट क्रिया उपलभ्यते

इस का आशय ऊपर आ चुका है ।



चौथा अनुवाक ।

—.o.—

ज्ञान (VI Consciousness)

उसी पुस्तक में और भी कहा गया है कि—

"भानुमती पुस्तक में चक्रपाणि जी कहते हैं कि—वृक्षास्तु चेतनावन्तोऽपि तमश्छन्न ज्ञानतया शास्त्रोपदेश विषया एव" ।

अर्थ—वृक्ष चेतन होने पर भी "तम" से भरे हुए ज्ञान वाले हैं, यह विषय शास्त्र के उपदेश से ही ज्ञात हो सकता है । और उदयन का भी यही कथन है कि वृक्षों की दशा एक प्रकार की अन्धकार मय, मोह युक्त चेतनता वाली है, जो बहुत अधिक प्रमाद युक्त है ।

पाचवां अनुवाक ।

—:o:—

आचाराङ्ग सूत्र नामक जैनियों का एक प्राचीन ग्रन्थ है । इस में एक जगह वनस्पति और मनुष्य की तुलना की गई है । इसमें कहा है कि—

"जन्म लेना और बूढ़ा होना मनुष्य के लिए प्रकृति सिद्ध है । बनस्पतियों की भी यही दशा है । जैसे

मनुष्यो में चित्त है, वैसे ही वह वनस्पतियो में भी है। आघात पहुचाने से जैसे मनुष्य पीड़ित होता है, वैसे ही वनस्पतिया भी होती हैं। जैसे मनुष्य अमर नहीं है, वैसे ही वनस्पतिया भी नहीं हैं। जैसे मनुष्य छीजता है, वैसे ये भी कुम्हलाती हैं। जैसे मनुष्य की वृद्धि होती है, वैसे इनकी भी होती है। जैसे मनुष्य में परिवर्तन होता है, वैसे इन में भी होता रहता है।"

(देखो पुस्तक डाक्टर सर जगदीशचन्द्र वसु और उनके आविष्कार पृष्ठ २९-३०)।

इन उद्धरणों से स्पष्ट सिद्ध हो रहा है कि विद्या प्रेमी अन्वेषण-कर्ता, सत्यग्राही जैन तथा बौद्ध विद्वानो ने भी यही सीखा और सिखाया था कि वृक्षों में हमीं लोगो के सदृश सब बातें हैं, अतः वे जीवधारी हैं।



अन्दर से होने लगता है, यहां तक कि अगर दवा इलाज कराया जाय तो भी कुछ दिनों में उस घाव की पूर्ति होजानी सम्भव है। लेकिन मुर्दा शरीर में ऐसा न होगा, इस लिए मानना पड़ता है कि जिन्दा मनुष्य के रोगी और आरोग्य होजाने की सादृश्यता वृक्षों मे पाई जाती है, अतः वे जीवधारी हैं।

तीसरा अनुवाक ।

—०—

उक्त डाक्टर ब्रजेन्द्र नाथ जी उसी पुस्तक में और भी कहते हैं —

" वृक्षों में पुरुष स्त्री होने के चिह्नों की व्याख्या विचित्र प्रकार की की गई है, जो (चिह्न) स्पष्ट नहीं हैं। पुकेसर (पुल्लिङ्ग) को रजस, पुष्प, प्रसून " नाम दिया गया है । ये ही नाम मानवी स्त्रियों के रजो धर्म पर भी बोले जाते हैं । और अमर कोष ने स्पष्ट ही वर्णन कर दिया है, कि स्त्रियों और पुष्पों के निमित्त एक ही प्रकार के शब्द प्रचलित हैं, उसका वाक्य यों है —

" स्त्रीणां सुमनसां पुष्प प्रसूनं समम् " । (अमर)

...... फिर राजनिघण्टु (नामी सुविख्यात वैद्यक ग्रन्थ) में लिखा है कि—

"अनूपादि प्रथमो वर्ग, स्त्री पुं नपुंसकत्वेन त्रै विध्यं स्थावरेष्वपि।"

अर्थात् स्थावरों (वृक्षों) में भी स्त्री पुरुष नपुंसक ये तीन भेद (जैसे मनुष्यों आदि में हैं) होते हैं।

चौथा अनुवाक।

वैद्यक के अत्यन्त प्राचीन ग्रन्थ चरक में वृक्षों के पुरुष स्त्री होने का वर्णन आया है, जो इस प्रकार है.—

स्त्री, पुरुष भेद।

बृहत् फल श्वेत पुष्प स्निग्ध पत्र. पुमान् भवेत्।
श्यामा चारुण पुष्पी स्त्री फल वृन्तैस्तथाणुभि ॥३॥

अर्थ (जिस कुटज वृक्ष में बड़ी बड़ी लम्बी फलियें हों और फूल सफेद हों तथा पत्र चिकने हो, उसे पुरुष जाति का कुटज (कूडा) वृक्ष जानना। और जिस में फूल काले या लाल वर्ण के हों, फली और डंडी छोटी हो, उसको स्त्री जाति की कूडा जानना ॥३॥

नवां अध्याय ।

" न्याय दर्शन "

पहिला अनुवाक

पुराण, महाभारत आदि से ऊंचा दरजा संस्कृत साहित्य में षट्-दर्शनों का माना जाता है, जिन में प्रथम स्थान " न्याय दर्शन " का है । इस लिए अब हम उसी को खोलते हैं, देखें वहां क्या मिलता है—

यहां ४ थी अध्याय के प्रथम आन्हिक के १४ से १८ सूत्र तक एक ऐसा विवाद चलाया गया है कि जिसमें वृक्ष का चैतन्य होना सिद्ध हो जाता है, अत सुनिये —

अभावाद्भावोत्पत्तिर्नानुपमृद्य प्रादुर्भावात् ॥ (न्याय ४।१।१४)

अर्थ – (प प्रभुदयाल जी का)

" बिना उपमर्दन से (उपमर्दन करि के) नष्ट किये उत्पन्न न होने से, अभाव से भाव की उत्पत्ति होती है १४॥

(भाष्य) अभाव से भाव की उत्पत्ति होती है, यह पक्ष है, अभाव से भाव उत्पन्न होने में हेतु यह है

कि बीज का बिना उपमर्दन (तोड़ कर नाश) किया अङ्कुर उत्पन्न नहीं होता। जब उपमर्दन से बीज का नाश हो जाता है, उसके पश्चात् बीज के अभाव से अङ्कुर की उत्पत्ति होती है, इस से अभाव से भाव की उत्पत्ति होना सिद्ध होता है। इस से कोई सजातीय वा विजातीय कारण मानने की आवश्यकता नहीं है, अब इसका उत्तर वर्णन करते हैं ॥१४।

इस सूत्र में भाव अभाव (हस्ती नेस्ती) का वर्णन है, परन्तु प्रसङ्ग वश वृत्त का वर्णन आ गया है, कि क्या बीज के अभाव (नाश) कर दिये जाने से वृत्त की उत्पत्ति होती है, या इसके विपरीत, अगले सूत्र में उत्तर देखिये—

दूसरा अनुवाक।

—०—

व्याघातादप्रयोग ॥१५।

व्याघात से प्रयोग नहीं है (प्रयोग युक्त नहीं है) ॥१५॥

(भाष्य)—यह कहना कि बीज का नाश करिके

अङ्कुर उत्पन्न होता है, असङ्गत है, क्योंकि यह कहने में व्याघात दोष है, अर्थात् कहने में विरोध है। विरोध यह है कि जो **मर्दन करता है वह जब विद्यमान होगा तब मर्दन करेगा,** इससे यह कहना कि मर्दन करिके अर्थात् बीज को मर्दन से नष्ट करिके पीछे उत्पन्न होता है, असंगत है। क्योंकि जो पीछे उत्पन्न होता है, बीज के नाश करने के समय में नहीं है, उसके विद्यमान न होने से उपमर्दन (नाश) होना अर्थात् उसका नाश करने वाला होना असम्भव है" ॥१५॥

"इसका आशय यों है—

अगर यह माना जाय कि बीज के भीतर जो कुछ था उसका नाश कर डाला गया, और तब पौधा उगा तो यह इसलिए ठीक नहीं हो सक्ता कि बीज के भीतर जो कुछ था उसी से तो पौधा बनता है और उसी वस्तु (जो कुछ था) को तो उपमर्दन (नाश) किया गया ("नाश" शब्द से यहा रूप बदलना समझो)। सो उप मर्दन क्रिया का करने वाला भी वहा मौजूद रहना चाहिए, अगर उस उपमर्दन कर्ता को विद्यमानता न मानोगे, तो उस क्रिया का ही अभाव मानना पड़ेगा, और ऐसा होने पर तो पौधे की उत्पत्तिही [illegible] हो जायगी। इसलिए बीज में "[illegible] है" [illegible] द्वारा अभाव मानना [illegible] । ([illegible]

पाठकगण ! हमने जिन शब्दों का मोटा कर दिया है, उन्हें ध्यान से पढ़िये, और देखिये कि यहा यह कहा गया है कि बीज में जो शक्ति उसका मर्दन करती है (याने उस में से अँखुवा फाडती है) वह उसमें अगर, मौजूद न रहे, तो मर्दन कैसे हो सके । अत जानना चाहिए कि यहा पर "बीज में उपमर्दन करने वाली "— एक शक्ति मानी गई है, अत ,उसे ही "जीव" समझना चाहिए ।

तीसरा अनुवाक ।

—०—

इस (अभावात्०) वें १४ सूत्र को श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती महाराज ने भी सत्यार्थ प्रकाश अष्टम समुल्लास पृष्ठ २२६-७ पर उठाया है, और प्रश्न कर्ता की ओर से १४ वें सूत्र को रख कर आगे उत्तर अपने शब्दों में यों दिया है कि.—

" उत्तर– जो बीज का उपमर्दन करता है, वह प्रथम ही बीज में था, जो न होता तो उपमर्दन कौन करता, और उत्पन्न कभी नहीं होता ॥३॥ "

इस से भी हमारी ऊपरी बात की पुष्टि होती है, कि "जो बीज का उपमर्दन करता है, वह जीवात्मा है, जो उस बीज में बैठ कर अपना कार्य (प्रयत्न) कर रहा है, अतः न्याय दर्शन से भी वृक्ष में जीव का होना सिद्ध हो रहा है"

—०—

चौथा अनुवाक।

—:०:—

प्रश्न– वाह ! न्याय दर्शन मे तो कहीं स्पष्ट ऐसा नहीं कहा गया, और बीज का उपमर्दन करने वाली शक्ति वहा हम परमात्मा को मान सकते हैं, क्योंकि वह सर्वव्यापक होने से बीज में भी तो विराजमान है ?

उत्तर– दर्शनों में सूत्र रूप अर्थात् अत्यन्त संक्षेप में विषय को कहा जाता है। इस प्रमाण से बीज में उपमर्दन करने वाली शक्ति का सङ्केत है, अतः वही शक्ति चेतन जीवात्मा कहलायेगी। क्योंकि अगर जीव न मानें, तो जड़ बीज के अवयव या अणु अथवा परमाणु चेतन का काम (उपमर्दन करना) नहीं कर सकता, रही परमात्मा की बात, कि वह वहा बैठा हुआ उस बीज में से पेड़ उगाने का

प्रयत्न कर रहा होगा ! सा ऐसा नहीं हो सकता, क्योंकि परमात्मा तो हवा, पानी, मट्टी आदि सभी वस्तुओं में व्यापक हैं, फिर उनमें भी चेतनता के लक्षण क्यों न पाये जाय, । क्या यह कहोगे कि परमात्मा एक जगह पर तो व्यापक होता हुआ स्वयं प्रयत्न भी कर रहा है, और दूसरी जगहों पर चुपचाप बैठा हुआ है, वाह ! ऐसा क्योंकर हो सकता है ॥ ।

पांचवां अनुवाक ।

एक प्रमाण और भी सुनिये—

न्याय दर्शन पर श्री वात्स्यायन मुनि जी का भाष्य प्रामाणिक माना जाता है, इस में हम एक सूत्र क भाष्य में या पढते हैं :—

" नियमानियमौ तु तद्विशेषकौ ॥ [न्या० ३।२।४०]

भाष्य.. ." अन्यत्रापि च तत्र स्थावर शरीरेषु तदवयव व्यूह लिङ्ग प्रवृत्ति विशेषो भूतानामन्य गुण निमित्त इति स च गुणःप्रयत्न समानाश्रय सस्कारो धर्माऽधर्म समाख्यातं सर्वार्थ पुरुषा र्थाराधनाय प्रयोजकीभूतानाप्रयत्नवंदिति ॥ प्रवृत्ति निवृत्ती च प्रत्यगात्मनि दृष्टे परत्र लिङ्गम् इति वै०(वै० ३।१।२०)

अर्थ—(यहाँ जीवात्मा के लक्षणों-इच्छा द्वेष प्रयत्न आदि)

का प्रबन्ध चल रहा है) ....
.. .. और भी दूसरी जगहों में यों है कि जङ्गम और स्थावर के शरीरों में उनके अवयवों की रचना का चिह्न, जो विशेष प्रकार की प्रवृत्ति है, भूतों के अन्य गुणों की निमित्त सिद्ध हो रही हैं। और वे गुण प्रयत्न का आश्रय रखने वाले, धर्म अधर्म के संस्कारों वाले सर्व प्रकार के अर्थों वाले, पुरुषार्थों का आराधन कराने वाले, निदान भूतों को प्रयत्न में ही तत्पर कराने वाले होते हैं, और वैशेषिक ३।१। २० में भी कहा गया है कि अपने आत्मा जैसा सब को जान।"

इस में खास बात विचारणीय यह है कि यहां जो जीवधारियों के पुरुषार्थी और प्रयत्न वाले होने का वर्णन किया गया है, यह दोनों प्रकार वालों अर्थात् जंगम और स्थावर (याने चलने फिरने वाले और स्थिर रहने वाले= वृक्षों) के शरीरों के लिए कहा गया है।

पाठक ऊपर स्थावर शब्द के साथ "शरीर" शब्द ध्यान से पढ़ लें, और विचार करें कि श्री वात्स्यायन मुनि जी का अभिप्राय वृक्षों को चेतन प्रकट करने के सिवाय यहां दूसरा और क्या हो सकता है? कुछ नहीं।

——(॰)०(॰)——

दसवां अध्याय।

वैशेषिक दर्शन।

—०—

पहिला अनुवाक।

—०—

हमारे प्रति पक्षी लोग बड़ा शोर मचा रहे हैं, कि वैशेषिक दर्शन वृक्षों में जीव नहीं मानता, नहा मानता इत्यादि, अच्छा आइये पाठक गण! देखें उनकी यह बात कहा तक ठीक जचती है—

स्वामी दर्शनानन्द जी का उर्दू वैशेषिक पढते हुये (पृष्ठ १५८ पर)हमने देखा कि "जो लाग दरख्तों के बढने में जीव को सबब मान कर वृक्षों में वृक्ष का अभिमानी जीव तस्लीम करते हैं, उन्हें वैशेषिक के इस सूत्र को गौर से पढ़ना चाहिये।"

इस आदेश के अनुसार हमने उस सूत्र को बड़े ध्यान पूर्वक पढा, तो आश्चर्य्य हुआ कि जिस सूत्र से खास हमारे पक्ष की पुष्टि हो रहा है, उस ही को क्योंकर स्वामी दर्शनानन्द जी अपनी ओर खींच रहे हैं। वाह! वाह!!!

वाह जी वाह ! आप वृक्ष को जड़ सिद्ध करने में ऐसे उन्मत्त हुए कि मनुष्य को ही जड़ बना डाला, धन्य है ॥

चौथा अनुवाक ।

—०—

प्रश्न—अच्छा कोई ऐसी टीका इस सूत्र की सुनाइये, जिसमें साफ साफ वृक्ष में जीव का होना आया हो ?

उत्तर—सुनिये —

श्री प० चन्द्रकान्त तर्कालङ्कार जी का संस्कृत भाष्य सन् १८८७ ई० का छपा हुआ इलाहाबाद की पब्लिक लायब्रेरी D E 8) में मौजूद है, उस में यों छपा है—

वृक्षाभि० ॥७॥

वृक्षा मूले निषिक्ता. खलु आपो वृक्षमभित. सर्पन्ति ततो हि वृक्षस्य पुष्टिर्भवति । यच्चैतदपां वृक्षाभिसर्पणं तत् खलु अद्र ष्टेन शक्ति विशेषेण कार्य्यते । मूलमारभ्य यावदग्र : वृक्ष निविष्टः शिरा सन्तानः शक्ति विशेषादपां पार्थिव रसानाञ्चाकर्षण करोति । वृक्ष. खलु एव जीवतीति ॥७॥

अर्थ—वृक्ष के मूल में जो पानी डाला जाता है वह निस्सन्देह ऊपर को चढ जाता है, उसी से वृक्ष की पुष्टि होती है। वह जो वृक्ष में पानी का ऊपर चढ़ना रूपी क्रिया है वह अवश्य ही एक अदृष्ट (न दीखने वाली विशेष शक्ति से हो रही है, मूल से लेकर आगे जो वृक्ष की शिरायें (नस नाड़ियें) आदि हैं, वे ही शक्ति विशेष (ख़ास ताक़त) से जल को भी और अन्य भी पृथ्वी के रसों (क्षार, मिठास, चूना, स्टार्च इत्यादि) को ऊपर की ओर खींचती (आकर्षण करती) हैं। इस लिए यह निश्चय है कि वृक्ष जीवित वस्तु है।

पांचवा अनुवाक।

—०—

अब एक और टीका भी देखिये। प० स्वामी हरि प्रसाद जी की पुस्तक "वैशेषिक सूत्र वैदिक वृत्ति" के पृष्ठ ११२ पर यह सूत्र आया है, और यही अभिप्राय दर्शाया गया है हम वहा से केवल एक शब्द नीचे उद्धृत करते हैं—

तेनैव स वृक्ष जीवित नान्यथा जीवेत·····

(अर्थात् उस ही से वह वृक्ष जीवित रहता है, नहीं तो न जीवित रह सकता)।

छठवां अनुवाक।

—०—

प्रश्न—वृक्ष की जड़ से पानी का ऊपर चढ़ जाना, उसके जीवात्मा का प्रयत्न नहीं सिद्ध करता। देखो सूर्य की किरणें पानी को ऊपर खींच लेती हैं, तो क्या उन्हें भी जीव-धारी मानोगे ?

उत्तर—सूर्य की गरमी से पानी भाफ बन कर ऊपर जाता है, फिर बादल बन कर समय पर बरस पड़ता है, निदान उस दशा में वह पानी का पानी ही रहता है, भाफ, बादल, बरफ, पानी ये सब एक ही वस्तु के अवान्तर भेद हैं। परन्तु यहां तो पानी से फल फूल डाली, पत्तियां आदि उत्पन्न होती हैं।

सातवां अनुवाक।

—०—

अब हम इसी वैशेषिक का एक प्रमाण और भी उपस्थित करते हैं, सुनिये—

तत्र शरीरं द्विविधं योनिजम ऽ यो निज च ॥
(वै० ४। २। ६)

अर्थ—(प० तुलसीराम जी का)

(तत्र) उन में (शरीर) शरीर (योनिज) योनि से उत्पन्न होने वाला (च) और (अयोनिज) बिना योनि के उत्पन्न होने वाला (विविध) दो प्रकार का है।

पिछले पाच सूत्रों में जो पृथिवी आदि द्रव्यों को १ शरीर २ इन्द्रिय और ३ विषय नाम से तीन प्रकार का बताया गया है, उन तीना में से शरीर दो प्रकार का होता है १ योनिज,२ अयोनिज।

जल, अग्नि और वायु से उत्पन्न शरीर अयोनिज हैं और पृथिवी से उत्पन्न शरीर योनिज तथा अयोनिज भी होते हैं, यह प्रशस्त पाद आचार्य का मत है। योनिज दो प्रकार के होते हैं १ जरायुज और २ अराडज। अयोनिज शरीर चार प्रकार के होते हैं १ साङ्कल्पिक २ सासिद्धिक ३ स्वेदज और ४ उद्भिज्ज। आगे प० तुलसीराम जी ने ४ थे "उद्भिज"—का अर्थ यों लिखा है।

"४—वृक्ष, वनस्पति, गुल्म, वीरुध, लता, घास फूस आदि जो पृथिवी को फोड कर उपजते हैं उनके शरीर उद्भिज्ज कहाते हैं।

इस प्रमाण से वृक्ष का अन्य जीव धारियों की योनियों में गणना होने से चैतन्य होना सिद्ध हो रहा है। स्वेदज (पसीने या मैल से पैदा होने वालों) को भी इसी श्रेणी (अयोनिज) में माना गया है। क्योंकि वे (जूय, चोलर खटमल, सूड़े आदि भी बिना मा बाप के ही पैदा हो जाते हैं।

पाठक! आपने देख लिया कि जिस वैशेषिक के बारे में हमारे विपक्षी शोर मचा रहे थे कि वह वृक्षों के जीवधारी होने से इनकारी है, वही दर्शन हमारे पक्ष में एक नहीं बल्कि दो प्रमाण बड़े मार्के के उपस्थित कर रहा है, अत अब वृक्षों मे जीव होने से किसी को इनकार नहीं करना चाहिए।

ग्यारहवां अध्याय
वेदान्त दर्शन

—— ० ——

पहिला अनुवाक

— ० —

न्याय, वैशेषिक के पश्चात् अब हम वेदान्त दर्शन को खोलते हैं —

दर्शनाच्च ॥

(ब्रह्म सूत्र ३।१।२०)

शङ्कर भाष्य :—

" अपि च चतुर्विधे भूतग्रामे जरायुज स्वेदजोद्भिज्ज लक्षणो स्वेदजोद्भिज्जयोरन्तरेणैव ग्राम्य धर्ममुत्पत्ति दर्शना दाहुति सङ्ख्यानादरो भवति । एवमन्यत्रापि भविष्यति ॥२०॥

अर्थ—और भी जो चार प्रकार की सृष्टि भूतों की है—१ जरायुज, २ स्वेदज, ३ उद्भिज्ज—इनके लक्षण में स्वेदज और उद्भिज्ज के अन्तर (भेद) से ही ग्राम्य धर्म की उत्पत्ति के देखे जाने से (पञ्च) आहुतियों की सङ्ख्या का अनादर हो जाता है, ऐसा ही अन्यत्र भी होगा।

अस्तु, हमारे प्रस्तुत विषय से इस का केवल इतना

मात्र सम्बन्ध है कि जीव-धारियों की ४ प्रकार की सृष्टि में से एक उद्भिज्ज भी है। अत वेदान्त के इस प्रमाण से वृक्ष का जीवधारी होना सिद्ध है।



दूसरा अनुवाक।

—०:—

एक और प्रमाण भी हम सुनाते हैं—

तृतीय शब्दावरोधः संशोकजस्य ॥

(ब्रह्म सू० ३।१।२१)

शाङ्कर भाष्य :—

आण्डजं जीवजमुद्भिज्जम्' (छा० ६।३।१) इत्यत्र तृतीयेनोद्भिज्ज शब्देनैव स्वेदजोपसंग्रहः कृत इति प्रत्येतव्यः। उभयोरपि स्वेदजोद्भिज्जयोर्भूम्युदकोद्भेद प्रभवत्वस्य तुल्यत्वात्। स्थावरोद्भेदात्तु विलक्षण [illegible] इत्यन्यत्र स्वे [illegible] द्भिज्जयोर्भेद वाद इत्यविरोध [illegible]

अर्थ-जो कि छान्दोग्य६।३। [illegible] ६([illegible]
जीवज, [illegible] है, सो [illegible] उ [illegible]
से स्वेदज [illegible] ले [illegible] है,

इन दोनों प्रकारों की उत्पत्ति (माता के गर्भ से न हो कर) पृथिवी और जल को तोड़ फोड़* कर उस से ही हुआ करती है। इसी लिए दोनों की तुल्यता है। और स्थावर से जङ्गम की उत्पत्ति का विलक्षण होना अन्य दशाओं (जरायुज अराडज) में ठीक माना जा सकता है, परन्तु स्वेदज के साथ तो उद्भिज (स्थावर) के भेद का अविरोध है, (क्योंकि दोनों विना माता पिता के उत्पन्न हो जाते हैं)"।

इस प्रकार वेदान्त दर्शन ने भी यह साक्षी दी कि वृक्षों की गणना स्वेदजादि जीवधारियों के साथ ही हो सकती है।

---:o:---

*१ वृक्षों का भूमि फोड कर उपजना] तो प्रत्यक्ष ही है, और स्वेदज (जूये, चीलर, खटमल, मच्छड़, फलों के अन्दर पड जाने वाले कीड़ों आदि) की भी उत्पत्ति पसीने, मैल, सड़ाइन्ध आदि के परमाणुओं से होने के कारण उसका शरीर भी पृथ्वी या जल के परमाणुओं के विकारा से बन जाता है, अत स्वेदज और उद्भिज्ज... में समानता हो गई (मङ्गला०।)

का जन्म, वाणी से किये पाप कर्मों से पक्षी और मृगादि तथा मन से किये दुष्ट कर्मों से चाडाल आदि का शरीर मिलता है"।

यहां यह बतलाया गया कि मनुष्य का जीवात्मा अमुक २ पाप कर्म के फल भोगने के लिए वृक्षों की योनि में प्रवेश करता है।

स्थावरा कृमि कीटाश्च, मत्स्या सर्पाश्च कच्छपा ।
पशवश्च मृगाश्चैव, जघन्या तामसी गति ॥ म० १२।४२

अर्थ—तामसी प्रकृति वालों की (मरने पर) यह गति होती है, कि वे स्थावर, कृमि, कीट, मत्स्य, सर्प, कच्छप, पशु और मृगा आदि की योनियां में जाते हैं।

यहां अन्य जीवधारियों के साथ साथ स्थावर को भी गिनाया गया है।

तीसरा अनुवाक ।

—०—

अब हम एक और प्रमाण उपस्थित करते हैं, जहां पाप के फल में हमें वृक्ष–योनि में जाना लिखा है —

तृण गुल्म लतानां च क्रव्यादां दंष्ट्रिणामपि ।
क्रूर कर्मकृतां चैव शतशो गुरुतल्पगः ॥
(मनु १२।५८)

अर्थ—गुरु पत्नी गामी पुरुष, सैकड़ों बार तृण, गुल्म, लता, क्रव्याद (मांसाहारी), डाढो वाले और क्रूर कर्मी देहों का प्राप्त होता है।

इस प्रमाण से भी प्रकट है कि हम मनुष्यों के जीव पाप कर्मों को करने पर वृक्ष शरीर को पाते हैं।

चौथा अनुवाक।

—०—

प्रश्न—हम मनुस्मृति में क्षेपक मानते हैं, इस लिए उक्त श्लोकों को मिलावटी समझना चाहिए?

उत्तर—जब आर्यसमाज के अन्य कोई जिम्मेवार विद्वान् गण **इन श्लोकों** को क्षेपक नहीं मानते, तो फिर केवल आपका ऐसा मानना क्या पक्षपात न कहलायेगा? ॥

प्रश्न—जो मनुस्मृति इस समय मिलती है, यह मनु महाराज के समय की नहीं है, किन्तु यह वाममार्गियों के समय की होगी, क्योंकि इस में मांस विधायक श्लोक मिलते हैं?

उत्तर—उतने भाग को आप अवश्य क्षेपक मान लें, बाकी सारे शास्त्र का त्याग क्यों करते हैं? देखिये इसी

मनुस्मृति के दो श्लोक वाल्मीकीय रामायण किष्किन्धा काड में उद्धृत किये गये हैं (जहा श्री रामचन्द्र जी के वालि को वध करने की कथा है) इससे मानना पडेगा कि मनुस्मृति वा० रामायण से भी पुरानी है। अत वृक्षों में जीव होने के ख्यालात आर्य जाति में अति प्राचीन काल से चले आते हैं, ऐसा ही मानना पड़ेगा।

परन्तु यदि यही मान ले कि वर्तमान सारी की सारी मनुस्मृति वाममार्गियों के ही समय में रची गई हो, तो भी वह ३००० वर्ष से अधिक पुरानी अवश्य ठहरती है, क्योंकि ढाई सहस्र वर्ष तो श्री बुद्ध महाराज को ही बीत चुके हैं, जिन्होंने वाममार्ग के किले की बुनियाद में डायनामाइट भर कर उसे चकनाचूर कर देने पर कमर कसी थी। अत प्रत्यक्ष है कि ढाई हजार वर्ष से बहुत पूर्वकाल में वाममार्गी लोगों का चक्र चला होगा, इसलिये ऐसा मानने पर भी यह स्पष्ट है कि ३००० वर्ष से पूर्व वाले हमारे बुजुर्गों का निर्णय यही था कि वृक्षों में जीव है।

पाठक! क्या यह आश्चर्य न होगा कि जिस सचाई का आज से ३००० वर्ष पूर्व वैसा ही माना जाता रहा हो, जैसा कि वर्तमान समय के विज्ञानवत्ता मान रहे हैं, उस से कुछ आर्य सामाजिक महाशय इन्कार कर दें।

—०—

चौदहवां अध्याय ।

उपनिषद् ।

पहला अनुवाक ।

—०—

अब संस्कृत साहित्य में वेदों के सिवाय सर्वोच्च स्थान रखने वाले, अत्यन्त प्राचीन ग्रन्थ उपनिषदों का निर्णय सुनिये'—
देखो कठ उपनिषद् में लिखा है—

हन्त त इदं प्रवक्ष्यामि गुह्यं ब्रह्म सनातनम् ।
यथा च मरणं प्राप्य आत्मा भवति गौतम ।६।
॥योनिमन्ये प्रपद्यन्ते शरीरत्वाय देहिनः ॥

स्थाणुमन्ये ऽनुसंयन्ति यथा कर्म यथा श्रुतम् ।७।
(कठो० २। ।६,)

अर्थ— अब हम तुम से सनातन गुह्य ब्रह्म की बात' कहेंगे' हे गोतम । और यह भी बतलायेंगे कि आत्मा (की दशा) मृत्यु प्राप्त करने पर क्या होती है । ६ ।

देह वाला (जीव) कर्मों और ज्ञान के अनसार शरीर धारण करने के लिए अन्य योनियों में जाता है, या कोई दूसरे लोग स्थाण (वृक्ष) में जाते हैं।७।

इस कठ उपनिषद्वाक्य में पुनर्जन्म का वर्णन है, और यह बतलाया गया है कि हम लोग अपने अच्छे बुरे कर्मो के अनुसार नीची ऊची योनिया पाते हैं। कोई पशु पक्षी का शरीर पाता है, तो कोई वृक्ष की योनि में प्रवेश करता है।

अत इस प्रमाण से वृक्षों का जीवधारी होना सिद्ध है॥

—०—

दूसरा अनुवाक

—०—

अब बृहदारण्यक उपनिषद् का प्रमाण सुनिये —

" तान् हैतैं श्लोकैः प्रपच्छ —

यथा वृक्षो वनस्पतिस्तथैव पुरुषो ऽमृषा, तस्य लोमानि पर्णानि त्वगस्योत्पाटिका वहि ॥ १॥

त्वच एवास्य रुधिर । प्रस्यन्दि त्वच उत्पटः ।
तस्मात्तदा तृण्ण त् प्रैति रसो वृक्षादि वाहतात् ॥२॥

मांसान्यस्य शकराणि कीनाटं स्नाव तत्स्थिरम् ।
अस्थीन्यन्तरतो दारूणि मज्जा मज्जोपमा कृता ॥३॥
(बृह० क ।९।२८। १-३)

अर्थ— इन तीन मन्त्रों में मानुषी शरीर के साथ वृक्ष की तुलना की गई है, इस लिये हम एक चक्र में इसे प्रकट करते हैं—

मानुषी शरीर—	वृक्ष शरीर
१ लोम (रोयें या बाल)—	पत्तिया।
२ त्वचा (खाल)—	छाल (छिलका)।
३ रुधिर—	रस।
४ त्वचा से रुधिर बहना—	छाल से गोंद निकलना।
५ जख्म से रुधिर निकलना—	वृक्ष को काटने से रस बहना।
६ मास—	वृक्ष छाल की तहें या नरम छिलके
७ नाड़ी नसे—	वृक्ष की शिरायें (रेशे)।
८ हड्डिया—	दारु या अन्दर के गाठ आदि।
९ मज्जा (चर्बी)—	लकड़ियों के अन्दर का गूदा।

तीसरा अनुवाक।



अब हम वह प्रमाण उपस्थित करते हैं, जिसका उल्लेख साङ्ख्यदर्शन के भाष्यकार श्री विज्ञान-भिक्षु जी ने भी

सांख्य।।१२' सूत्र के भाष्य में किया है, और जो बहुत ही स्पष्ट शब्दों में इस विषय को वर्णन कर देता है —

अस्य सौम्य महतो वृक्षस्य यो मूले ऽभ्याहन्याज्जीवन् स्रवेद्यो मध्येऽभ्याहन्याज्जीवन् स्रवेद्योऽग्रेऽभ्याहन्याज्जीवन् स्रवेत् स एष जीवेनात्मनानुप्रभूतः पेपीयमानो मोदमानस्तिष्ठति॥१॥

अस्य यदेकां शाखां जीवो जहाति अथ सा शुष्यति, द्वतीयां जहाति अथ सा शुष्यति, तृतीयां जहाति अथ सा शुष्यति, सर्वं जहाति सर्वः शुष्यति एवमेव खलु सौम्य विद्धि इति ह उवाच ॥२॥

(छान्दोग्य उ० ६।११।१,२।)

अर्थ—(प० शिवशंकर जो काव्य तीर्थ का), पदार्थ-(सौम्य) हे प्रिय पुत्र ! अन्य दृष्टान्त भी सुनो अङ्गुली निर्देश से दिखला कर कहते हैं (अस्य महतो वृक्षस्य) इस महान् वृक्ष की (मूले) जड़ में (य –अभ्याहन्यात्) यदि कोई कुल्हाड़ी आदि से एक बार प्रहार करे तो (जीवन्–स्रवेत) प्रहार करने से भी वह वृक्ष न सूख कर जीता ही हुआ स्रवित होगा। उसका दूध गिरता रहेगा, परन्तु सूखेगा नहीं। इसी प्रकार (य –मध्ये अभ्याहन्यात्) यदि वृक्ष के मध्य में प्रहार करे तो (जीवन् स्रवेत्) जीता हुआ स्रवित होगा, इसी प्रकार (य –अग्रे–

अभ्याहन्यात्) वृक्ष के अग्र भाग में कोई प्रहार करे तो (जीवन् स्रवेत) जीता हुआ स्रवित होगा, क्योंकि (स एष) सो यह वृक्ष (जीवेन आत्मना) जीवात्मा के साथ (अनुभूत) अनुव्याप्त होकर (पपीयमान) अपनी जड़ों से पृथ्वी के अभ्यन्तर से रस को चूसता हुआ (मोदमान-तिष्ठति) सहर्ष सदा रहता है ॥१॥

(दूसरे मन्त्र का अर्थ) —

(अस्य) इस महान् वृक्ष की (एकाम् शाखाम्) किसी एक शाखा को (यत्) जब (जीव. जहाति) (जीव त्याग) देता है (अथ सा शुष्यति) तब वह शाखा सूख जाती है (द्वितीयाम् जहाति) जब जीव द्वितीय शाखा को त्यागता है (अथ सा शु०) तो वह सूख जाती है (तृतीयाम् जहाति अथ सा शुष्यति) जब जीव तृतीय शाखा को त्यागता है तो वह सूख जाती है (सर्वम जहाति सर्व–शुष्यति) यदि वह जीव सम्पूर्ण वृक्ष को त्याग देता है, तो सम्पूर्ण वृक्ष सूख जाता है । (एवम् एव खलु) वैसे ही (सोम्य) हे सोम्य (विद्धि इति) शरीर की दशा जानो । इसको स्वयं आगे कहेंगे (इति ह उवाच) इस प्रकार पुत्र को शिक्षा दे पुन आरुणि बोले ।"

इससे अधिक खुले शब्द और क्या होंगे ? यहा तो स्पष्ट ही कह दिया गया है कि वृक्ष में जीवात्मा विद्यमान है।

चौथा अनुवाक।

— ०—

पाठक गण ! आपने देख लिया कि उपनिषदों जैसे अत्यन्त प्रामाणिक और प्राचीन ग्रन्थों में कैसे स्पष्ट शब्दों में वृक्षों का जीवधारी होना कहा गया है। जहा कठ उपनिषद् के प्रमाण से हम लोगों का पशुओं और वृक्ष-शरीरों में जन्म लेना सिद्ध है, वहा छान्दोग्य में स्पष्ट ही जीवात्मा का वृक्ष की एक एक शाखा को छोड़ते हुये इस मुरदा शरीर का त्याग देना आया है। फिर जहा एक प्रमाण से वृक्ष में जीव होना सिद्ध है, वहा दूसरे (बृहदारण्यक के) से मनुष्य के शरीर के अवयवों (मांस रुधिर) आदि की भी वृक्ष-शरीर से तुलना कर दी गई है इत्यादि २।

निदान उपनिषदों को सत्य-ज्ञान भण्डार मानने वाला वृक्षों के जीवधारी होने से कदापि इन्कारी नहीं हो सकता,

इतने पर भी जो लोग न मानें उनकी हठधर्मी पर आश्चर्य !!! ॥

* और भी कई प्रमाण उपनिषदों के इस विषय में हैं, जिन्हें हमने विस्तार-भय से नहीं लिखा- जो लोग चाहें निम्न प्रकार खोज कर पढ लें –

१- छान्दोग्य ३।२।१।
२- " ६।३।१।
३- बृहदारण्यक ८।४।१

3 Let the eye repair to the sun, the breath to the wind, go thou to the heaven or to the earth, according to thy merit, or go to the waters if it suits thee (to be there) or abide with thy members in the plants '—

इसका हिंदी अर्थ उपर्युक्त अनुसार ही है।



दूसरा अनुवाक ।

—.o—

प्रश्न—यहा " वृक्ष में तेरा निवास हो " ऐसा कहा है। इस से वृक्ष योनि में जन्म लेना सिद्ध नहीं होता, अलबत्ता इसका यह तात्पर्य्य निकलता है कि वह जीवात्मा किसी पक्षी आदि की योनि धारण करके उस वृक्ष को अपना घर बनाकर निवास करे ?

उत्तर—यहा पर वृक्ष योनि का अभिप्राय इस लिए है कि शरीर को छोड़ कर जीवात्मा अपने कर्मानुसार जैसे स्वर्ग में जाता है या पृथ्वी पर थलचर या जलचर बनता है, इसी प्रकार वृक्ष योनि में भी प्रवेश करता है।

२ प्रश्न—यह मन्त्र आवागमन विषयक नहीं है ?

उत्तर—इस मन्त्र में जीव के अन्य शरीर धारण करने का ही विषय है, यह बात यूरोपियन सस्कृतज्ञों के कथन से भी प्रत्यक्ष है सुनो :—

(क)-विलसन साहब एक टिप्पिणी में लिखते हैं :—

The scholiast no doubt understands here the doctrine of transmigration,

(ख)-फिर म्यूर साहब भी ऐसाही कह रहे हैं, देखो :-

" A funeral hymn addressed to Agni (X, 16) also contains some verses which illustrate the views of the writer regarding a future life

(See muir's original Sanskrit text volume V page 298)

(ग)—इसी प्रकार मेकडानेल Macdonell साहब कहते हैं —

One passage of the Rig veda however in which the soul is spoken of as departing to the waters or the plants may contain the germs of the theory"

"अहं गर्भमदधामोषधीष्वहं विश्वेषु भुवनेष्वन्तः ।
अहं प्रजा अजनयं पृथिव्यामहं जनिभ्यो अपरीषु पुत्रान् ॥
(ऋ० १० । १८३ । ३)

अर्थ (सायण-भाष्य का हिन्दी)

३—मैं (होता) औषधियों अर्थात् धान्य आदिकों में फलों (की उत्पत्ति) के लिये गर्भ धारण कराता हूं । और अन्य सभी भुवनों (उत्पन्न हुये भूतों अर्थात् प्राणियों) के मध्य में मैं ही गर्भ धारण कराता हू । तथा पृथिवी में प्रजाओं अर्थात् सब मनुष्यों को मैं पैदा करता हू । मै दूसरी स्त्रियों मे भी पुत्रो को पैदा करता हू । मैं सब की उत्पत्ति का हेतु हूं, क्योंकि मुझ से किये जाने वाले यज्ञ मे ही सब की उत्पत्ति होती है । ३ ।

प्रश्न—"औषधियों में गर्भ धारण कराता हू" इस वाक्य से वृक्ष का जीव धारी होना सिद्ध नहीं होता, यह एक अलंकारिक भाषा हो सकती है ?

उत्तर—लीजिये हमे अपने पक्ष की पुष्टि में एक बड़ा जबरदस्त प्रमाण प्रस्तुत किये देते हैं—

पुस्तक मानव गृह्य * सूत्र (वेद प्रकाश प्रेस इटावा की

---

* यह मूल पुस्तक रूस देश के सैण्ट पीटर्स वर्ग स्थान में छापी गई थी जो अजमेर के दयानन्द पुस्तकालय में विद्यमान है , इस में इसका पूरा नाम यों अंकित है—

छपी हुई) के पृष्ठ ३१ पर गर्भाधान प्रकरण में यों लिखा है कि इस मन्त्र (अहं गर्भ०) को पति समागम काल मे पढ़ें । इस प्रमाण से प्रकट हो रहा है कि मानव-गृह्य सूत्र जैसे प्राचीन ग्रन्थ के आचार्य ने भी वेद के इस मन्त्र का यही आशय समझा था कि इस मन्त्र के शब्द (अहं गर्भ-अदधाम) से सतान उत्पत्ति का ही अभिप्राय है। तभी तो उन्होंने गर्भाधान के निमित्त इस मन्त्र को जप करने का विधान किया था।

अब विचार का स्थान है कि जब इस मन्त्र में यह वर्णन भी आया है कि मैं ओषधी में गर्भ धारण करता हू तो इस से सिवाय इसके और क्या अर्थ हो सकता है कि जैसे पुरुष सतान उत्पत्ति के लिये गर्भ धारण करता है उसी प्रकार वृक्ष योनि की सतान के लिये भी उस में गर्भ धारण कराया जाता है ।

निदान इस प्रमाण से वृक्ष का जीव धारी होना अवश्य सिद्ध हो रहा है ।

मैत्रायणी शाखाया मानव गृह्य सूत्रम सन् १८९७ ई० में डाक्टर फ्रेडरिक कनर ने छपवाया (इसके पृष्ठ २४ पर यह प्रमाण १ । १४ । १६) आया है ।

(अथर्व का० ८ अ० ४। सू० ७। मं० ६)

सायणाचार्य ने इस मन्त्र का भाष्य नहीं किया।

श्री० प० क्षेमकरण दास त्रिवेदी जी का भाष्य (हिन्दी) इस प्रकार है —

(जीवलाम्) जीवन-देने वाली (नघारिषाम्) न कभी हानि करने वाली (जीवन्तीम्) जीवरखनेवाली। (अरुन्धतीम्) रोक न डालने वाली (उन्नयन्तीम्) उन्नति करने वाली-(पुष्पाम्) बहुत पुष्प वाली (मधुमतीम्) मधुर रस वाली (ओषधीम्) ताप नाशक (अन्न आदि ओषधि) को (इह) यहां (अस्मै) इस (पुरुष) को (अरिष्टतातये) शुभ करने के लिये (अहम्) मै (हुवे) बुलाता हू॥

(देखो उनका अथर्व पृष्ठ १८९७)

इस मन्त्र का अङ्गरेजा अनुवाद ग्रिफिथ साहब का इस प्रकार है।—

(Griffith)

The living plant that gives life, that driveth malady away, Arundhati, the rescuer strengthening, rich in sweets, I call to free this man from scath and harm

इस का हिन्दी अर्थ वही है जो ऊपर आ चुका है।

इस मन्त्र से औषधियों अर्थात् वृक्षों को स्पष्ट ही **जीवन्तीम्** अर्थात् जीवधारी कहा गया है, इसलिये इस प्रमाण से भी वृक्ष का जीवधारी होना सिद्ध है।

पाठक ! हमने वेदों में से भी पांच मन्त्रों को निकाल कर उपस्थित कर दिया है अतः वृक्षों का जीवधारी होना वैदिक धर्म के ग्रंथों से सिद्ध हो रहा है। इतने पर भी जो लोग हठधर्मी करें और न मानें उनके लिये क्या उपाय हो सकता है ॥

सोलहवां अध्याय ।

वेदों सम्बन्धी प्रश्नोत्तर

पहिला अनुवाक ।



हमने पिछले अध्याय में वेदों से ५ प्रमाण उपस्थित कर दिये हैं । अब इस अध्याय में उन वेद-मन्त्रों पर विचार करेंगे, जिन्हें विपक्षी लोग निषेधात्मक मान कर प्रस्तुत किया करते हैं ।

प्रश्न—वेदों में तो वृक्षों का जड़ होना पाया जाता है, देखो —

"द्वा सुपर्णा० ।

(ऋग्वेद १।१६४।४६)

(मुण्डक उ०३।१।१)

(श्वेताश्वतर उ०४।६)

अर्थ—दो पक्षी आपस में मिले हुए एक दूसरे के सखा एक ही वृक्ष पर बैठे हैं, उन में से एक उस पीपल के फल को खाता है और दूसरा न खाता हुआ (उसे) देखता है ।

यहां वृक्ष का दृष्टांत प्रकृति से दिया गया है। प्रकृति "जड़" है, इसलिए वृक्ष भी जड़ ही ठहरा। अगर वृक्ष को जड़ न मानते तो "प्रकृति" के लिए उस का दृष्टान्त क्यों दे देते।

(यह कथन स्वा० दर्शनानन्द जी का है)

उत्तर—यह कोई नियम नहीं है कि दृष्टान्त चेतन का जड़ से या जड़ का चेतन से न दिया जाय, देखो "चन्द्र मुखी" में मनुष्य "चेतन" का दृष्टान्त "जड़" चन्द्रमा से दिया गया है, फिर कमल नयनी, पद्मनाभ आदि में भी ऐसा ही है।

सब लोग भली प्रकार जानते हैं कि इस मन्त्र से वृक्षों के जड़ या चेतन होने का कोई भी सम्बन्ध नहीं है। इस मन्त्र में यह अलङ्कार है कि जैसे किसी वृक्ष पर दो पक्षी बैठे हों, वैसे इस शरीर रूपी वृक्ष पर जीव और ब्रह्म रूपी दो पक्षी बैठे हैं, बस इसका इतना ही मात्र आशय है, क्योंकि दृष्टान्त का केवल एक अंश लिया जाता है, सर्वांश में तो कोई दृष्टान्त कभी दार्ष्टान्त में घट ही नहीं सकता। *और इस मन्त्र में जो "वृक्ष" शब्द आया है, उस से "प्रकृति" का तात्पर्य लेना शास्त्र से प्रतिकूल है। देखो श्वेताश्वतर उपनिषत् में भी यह मन्त्र आया है जहां शङ्कर भाष्य में ऐसा लिखा है—

समानमेकं वृक्षं वृत्तमिवोच्छेद्य सामान्याद्वृक्षं शरीर

अर्थ—उस एक ही वृक्ष पर—वृक्ष के सदृश कट सकने वाले अर्थात् शरीर—

यहां स्पष्ट ही वृक्ष से दृष्टान्त शरीर का दिया जाना स्वामी शक० जी मानते हैं । और यह जो हमारे विपक्षी कहते हैं कि जड प्रकृति का दृष्टान्त जड़ वृक्ष से दिया गया है, तो लीजिए हम ऐसा वाक्य भी सुनाये देते हैं, जहां वृक्ष का दृष्टान्त जड़ प्रकृति से नहीं बल्कि चेतन से दिया गया है, सुनिये—

"ऊर्ध्वमूलमधः शाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययं ।
छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित ॥

(भगवद्गी० १५।१)

अर्थ—"एक ऐसा वृक्ष है जिस की जड़ ऊपर और शाखायें नीचें हैं, जो कभी नाश नहीं होता और न घटता बढ़ता है और वेद उसके पत्ते हैं, जो कोई उस (वृक्ष) को जान लेता है वही पूरा ज्ञानी माना जा सकता है—"

अवश्य ही यहा वृक्ष का दृष्टान्त परमात्मा के लिए आया है । अत विपक्षियों का दावा बेदलील ठहर गया, अब उन्हें उचित है कि पक्षपात छोड़ कर यह स्वीकार लें कि चेतन परमात्म का दृष्टान्त होने से वृक्ष भी चेतन ही है ।

दूसरा अनुवाक।

—०—

प्रश्न—देखो स्वामी जी ने एक मन्त्र के भाष्य में वृक्षों को जड़ मान लिया है, सुनों

" त्रिपादूर्ध्व उदैत् .साशनानशने अभि ॥

(यजु॰ ३१।४)

इस मन्त्र में जो "अशना"और "अनशना" शब्द आये हैं, उन में प्रथम का अर्थ "जङ्गम जीव चेतनादि" है और दूसरे का अर्थ "पृथिव्यादिक जड़ पदार्थ" है। यहां पर जो स्वामी जी ने "पृथिवी आदि" लिखा है सो "आदि" शब्द से पृथिवी के कार्य वृक्ष आदि भी पृथिवी के अन्तर्गत होने से जीव रहित हैं ? ॥

उत्तर—यह तो बिलकुल व्यर्थ का प्रलाप है। भला पृथिवी शब्द के साथ "आदि" लगने से क्यों न शेष चार तत्व "जल, वायु, अग्नि, आकाश" का अभिप्राय माना जाय ? अच्छा अगर आप "आदि" से पृथिवी कारण के कार्य रूप वृक्षों के शरीरों को मानते हुए उन्हें जड़ प्रकट करते हैं तो इसी न्याय से फिर आप का मानुषी शरीर भी पृथिवी का कार्य रूप होने से क्यों न जड़ ही मान लिया जाय ? वाह जी वाह !! आप के बुद्धि की बलिहारी है

यद्यपि संस्कृत का एक साधारण विद्यार्थी भी भली प्रकार यह जानता है कि संस्कृत मे जहाँ ४ चतुर्थी विभिक्त (सम्प्रदान) होती है, केवल वहाँ ही "के लिये" भाषा मे लाया जाता है परन्तु यहाँ पर श्री स्वामी जी ने दोनों में से एक जगह भी चतुर्थी विभक्ति नहीं लिखी — प्रथम में तृतीया और दूसरे जगह द्वितीया है। इस कारण निस्सन्देह इस स्थल पर ऋगवेदादि भाष्य भूमिका में जो भाषार्थ साथ छपा है उसी मे उक्त भूल हो गई थी जिस से धोखा खाकर हमारे पक्षियों ने जमीन आसमान एक कर डाला।

इस मन्त्र का आशय स्वामी जी के शब्दों में यो है कि संसार म दो प्रकार की रचनायें हैं, एक चेतन है जो खाने की चेष्टा करता है और दूसरा जड है जो उस के विरोध चेष्टा रहित है बतलाइये इस मे वृक्षों की क्या बात आई ? । स्वामी जी ने अपने विषय को स्पष्ट करने के लिये पृथिवी आदि और दूसरे जड पदार्थ यह भी कह दिया है किन्तु वृक्ष आदि तो नहीं कहा ।

सच तो यह है कि यह प्रमाण हमारे ही पक्ष की पुष्ट करता है क्योंकि यहाँ जीव धारी को यह परिभाषा बतलाई गई है कि जो भोजन करने की चेष्टा करता हो वह जीव-धारी है यत. वृक्षों मे हम लोगों के सदृश

कहीं स्थावर का अर्थ वृक्ष होगा। केवल वही चेतन कहलायेगा।

प्रश्न—पहाड़ और वृक्ष दोनों अर्थ "स्थावर" के होने से ही तो हम यह कहते हैं कि स्थावर जड़ है?

उत्तर—"स्थावर" शब्द का अर्थ तो जड़ नहीं है, उसके वाच्य दो हैं—एक वृक्ष दूसरा पर्वत, अतः इन दोनों में से एक चैतन्य और दूसरा जड़ है।

प्रश्न—हम ऐसा नहीं मान सकते, स्थावर शब्द से जो कुछ अर्थ होगा वह सब जड़ ही होगा?

उत्तर—देखो सैन्धव शब्द के भी दो अर्थ हैं, एक घोड़ा, दूसरा लवण (नमक), अब बतलाओ क्या इन दोनों को भी जड़ ही मान लोगे? वाह जी वाह!! अच्छा हमारी आपकी यही शर्त रही कि सैन्धव शब्द के वाच्य दोनों वस्तुओं (घोड़ा, नमक) को जिस दिन आप जड़ मान लेंगे, उसी दिन हम भी "स्थावर" शब्द के वाच्य दोनों वस्तुओं (वृक्ष, पर्वत) को जड़ मान लेंगे।

चौथा अनुवाक।

—०—

ऊपरी तीन अनुवाकों से पाठकों ने यह जान लिया होगा कि वेदों में वृक्ष जीव के निषेध के नाम से हमारे

"(जगतः) जङ्गमस्य (तस्थुषः-) स्थावरस्य (च) जीवानां समुच्चये ०।"

अर्थात् स्वामी जी ने जङ्गम और स्थावर दोनो के साथ **"जीवों का समुच्चय"** ऐसा वाक्य के अर्थ में निकाल कर लिख दिया है, जिससे यह निर्णय होता है, कि वे "स्थावर" को भी जीवों से युक्त वर्णन कर गये हैं।

प्रश्न—परन्तु "स्थावर" तो सब भाष्यकारों ने लिखा है और इसका आशय जड़ ही माना है ?"

उत्तर—"स्थावर" का शव्दार्थ स्थिर रहने वाला है। वृक्ष स्थिर है और पर्वत भी स्थिर है, इस लिये दोनों को स्थावर कहा जाता है। आप्टे के सस्कृत अगरेजी कोष पृ० ११४९ पर यह शब्द आया है और यही अर्थ (fixed to one spot) लिखा है। वहां "स्थावर" की व्युत्पत्ति [स्था वरच] से बतलाई गई है, इसके सिवाय एक शब्द के कई अर्थ होते हैं,जो प्रसगानुसार लगाये जाते हैं स्थावर का अर्थ जहा पर्वत होगा, वहा वह जड़ वाचक होगा और दूसरे अर्थ चैतन्य वृक्ष से सरोकार न रक्खेगा। देखोभगवद्गीता १०। २५ में **स्थावराणां हिमालयः** कहा गया है। अर्थात् पर्वतों में परमात्मा की विभूति हिमालय है। अवश्य ही यहा वृक्ष का अर्थ नहीं लग सकता। इस लिये जहा

कहीं स्थावर का अर्थ वृक्ष होगा। केवल वही चेतन कहलायेगा।

प्रश्न—पहाड़ और वृक्ष दोनों अर्थ "स्थावर" के होने से ही तो हम यह कहते हैं कि स्थावर जड़ है ?

उत्तर—"स्थावर" शब्द का अथ तो जड़ नहीं है, उसके वाच्य दो हैं—एक वृक्ष दूसरा पर्वत, अत. इन दोनों में से एक चैतन्य और दूसरा जड़ है।

प्रश्न—हम ऐसा नहीं मान सकते, स्थावर शब्द से जो कुछ अर्थ होगा वह सब जड ही होगा ?

उत्तर—देखो सैन्धव शब्द के भी दो अर्थ हैं, एक घोड़ा, दूसरा लवण (नमक), अब बतलाओ क्या इन दोनों को भी जड ही मान लोगे ? वाह जी वाह !! अच्छा हमारी आपकी यही शर्त रही कि सैन्धव शब्द के वाच्य दोनों वस्तुओं (घोडा, नमक) को जिस दिन आप जड़ मान लेंगे, उसी दिन हम भी "स्थावर" शब्द के वाच्य दोनों वस्तुओं (वृक्ष, पर्वत) को जड़ मान लेंगे।

चौथा अनुवाक।

—०—

ऊपरी तीन अनुवाकों से पाठकों ने यह जान लिया होगा कि वेदों में वृक्ष जीव के निषेध के नाम से हमारे

अब देखिये स्वामी दयानन्द महाराज ने क्या लिखा है–

ऋग्वेद (दयानन्द) भाष्य पृष्ट १७१६ पर यह मन्त्र आया है, जहा इन दोनों शब्दों के अर्थ इस प्रकार लिखे हैं—

(जगत.) जङ्गमस्य ॥
(प्राणत) प्राणतो जीवत. ॥

जगत का अर्थ "जङ्गम" लिखा है, और जङ्गम का आशय अन्यत्र (यजु ७।४२) "जङ्गम प्राणी" अर्थ लिखा है। और "प्राणत" का "जीवते जीव समूह"– अर्थ भाषा में लिखा है।

इस से स्पष्ट है कि स्वामी दयानन्द भी विशप्य विशेषण नहीं मानते।

अच्छा अब जरा अङ्गरेज विद्वान् की भी सुन लीजिये।

प्रोफेसर विलसन् साहब अपने प्रथम जिल्द (ऋग्वेद) के पृष्ठ २६१ पर इसका अर्थ यों करते हैं—

5 Who is the lord of all moving and breathing creatures–

यहां "जगत" का अर्थ moving चलने फिरने वाला किया है, और "प्राणत. का Breathing श्वासा लेने वाला परन्तु खास बात ध्यान देने योग्य यह है कि इन दोनों

शब्दों के बीच में एक शब्द And "और" भी लिख दिया है, जिससे यह स्पष्ट हो गया कि वस्तुत इन दोनों शब्द पृथक २ स्वतन्त्र ही हैं, अर्थात एक दूसरे का विशेषण नहीं है। क्योंकि व्याकरणज्ञ भली प्रकार यह जानते हैं कि कहीं भी विशेष्य-विशेषण के बीच मे " और " नहीं लाया जाता।

जैसे अगर हम कहें - " एक अच्छा लड़का ' तो ऐसा कोई नहीं लिख सकता कि " एक अच्छा और लड़का " हा अलबत्ता यों कह सकते हैं कि "एक लड़का और बूढ़ा " सो जहा प्रथम दशा में एक व्यक्ति (लडका अकेला) था, वहा इस दूसरे वाक्य में दो व्यक्ति होगये (लड़का और बूढा) अत सिद्ध हुआ कि इस मन्त्र में and और शब्द के आने से ये दोनों "जगत पाणत शब्द आपस में विशेष्य विशेषण (सिफ़त मौसूफ़) कदापि नहीं हैं। फिर क्या उनके मनमाने अर्थ को अनर्थ न कहा जाय, जिस के आधार पर वे अपना यह हवाई किला तैयार कर रहे हैं कि वेद वृक्षों के जीवधारी होने से इन्कारी है ?

प्रश्न—स्वामी दर्शनानन्द जी का इस में "अनर्थ" क्या है। यह माना कि दो शब्द पृथक पृथक थे, उन्होंने एक को दूसरे का विशेषण बतलाने में भाष्य कारों से

प्रतिकूलता की, परन्तु अनर्थ क्यो कहा जाय, क्या हानि हो गई ?

उत्तर—हानि वे यह करना चाहते थे कि घुमाय फिराय कर उलटा अर्थ करके वृक्षो को निर्जीव पदार्थ सिद्ध करने के निमित्त इतना हाथ पाव मारते रहे:—

आप की युक्ति तो देखिये कि मन्त्र के दो शब्दो को एक बना लिया कि "जो गतिमान होगा वही प्राण युक्त भी होगा" और अब अपने आप ही इसका उलटा वाक्य बनाते हैं कि "जो गतिमान न होगा वह प्राण युक्त भी न होगा"—और आप अब अपना अभिप्राय सिद्ध करने लगे कि "यत. वृक्ष गतिमान (चलने फिरने वाले) नहीं हैं, इसलिए वे प्राणधारी भी नहीं हैं"

भला पाठक देखें और विचार करें कि इस मन्त्र का वृक्षो से क्या सम्बन्ध हो सकता है ? कुछभी नहीं ।

प्रश्न—अच्छा अगर मन्त्र के दोनो शब्द पृथक ही रक्खे जाय (विशेष्य-विशेषण न माने जाय) तो क्या आशय निकलेगा

उत्तर—यहां मन्त्र का यह आशय है कि दो प्रकार की रचना है एक "जगत.", दूसरा "प्राणत." । अर्थात् एक चलने फिरने वाला, दूसरा प्राण (श्वासा) लेने वाला ।

और स्वामी दयानन्द के भाष्य अनुसार (जिसे ऊपर हम दे आये हैं) दोनो प्रकार जीवधारियों ही के हैं।

प्रश्न—तो वे दोनो कौन २ से प्रकार होंगे ?

उत्तर—१ चलने फिरने वालो में हम सब मनुष्य पशु, पक्षियों को समझो।

२—और दूसरा प्रकार वह होगा, जो प्राणधारी तो हो, पर चलने फिरने की शक्ति न रखता हो अत इसी में वृक्षों को समझिये।

प्रश्न—वृक्ष चलते फिरते नहीं हैं, यह तो ठीक है, परन्तु वे स्वास भी तो नहीं लेते ?

उत्तर—उनका प्राणधारी होना हमारे स्वामी दर्शनान्द जी तक को भी मानना ही पड़ा था, और विज्ञान को युक्तियां तो हम प्रथम खण्ड में कथन कर ही आये हैं कि वृक्ष सास खींचते और फेंकते हैं।

निदान इस मन्त्र से भी वृक्ष के जीवों का निषेध न न सिद्ध हो सका, बल्कि उलटा उनका जीवधारी होना ही पाया गया।

पांचवा अनुवाक ।

(खण्ड की समाप्ति) ।

— ०:—

पाठक गण ! आपने इस सारी (सोहलवीं) अध्याय को पढ़कर जान लिया कि वेद मन्त्रों से भी किसो तरह वृक्षों का जीव रहित होना नहीं सिद्ध हो सका । अत वृक्षों में जीव की विद्यमानता जहाँ युक्तियों से प्रथम "तर्कवाद" खण्ड मे सिद्ध की गई, वहा वेदादि के प्रमाणों से द्वितीय खण्ड सिद्ध करदी गई है, अब अगर इतने परभी हमारे विपक्षी महाशय न मानें और अपने हठ पर ही डटे रहें तो उनका क्या इलाज हो सकता है ?

पाठक वृन्द ! आप ने इस खण्ड में देख लिया कि पूराणों से लेकर वेदों तक के प्रमाणसारे के सा इस बात की पुष्टि कर रहे हैं कि वृक्षों में जीव हैं । और वेदान्त के भाष्य कार स्वामी शङ्कराचार्य आदि तथा वेद के भाष्य कार सायण, दयानन्द विल्सन, ग्रिफिथ आदि भी यही प्रकट कर रहे हैं, कि वेद वृक्षों में जीव होने का विधान करते हैं निषेध नहीं करते ।

इसलिये प्रथम खण्ड में युक्तियों (अच्छी दलीलों) और इस द्वितीय खण्ड मे प्रमाणों द्वारा अपना पक्ष उत्तमैत या

तीसरा खण्ड

आक्षेपों के उत्तर।

स्यावजानीमहे । भवत्वन्येषां जन्तूनामपुण्य सामर्थ्येन स्थावर भावमुपगतानामेतदुपभोग स्थानम् ।

अर्थ– हम स्थावर के उपभोगत्व की दशा से सरोकार नहीं रखते (याने अनुशयी स्थावरों में प्रवेश करने पर उनका उपभोग नहीं लेता)। भले ही पुण्य न होने से कोई जाकर स्थावर भाव को प्राप्त कर के उस के उपभोग को ग्रहण करे (पर अनुशयी ऐसा नहीं करता) इत्यादि।

इसका अभिप्राय यह है कि वृक्ष का अभिमानी जीव तो उसमें बैठा हुआ सुख दु खों को भोग रहा है, परन्तु अनुशयी जीवात्मायें आकर वृक्षों के बीजों में बैठ ता जाते हैं लेकिन सुखी दुःखी नहीं होते।

[illegible] बात स्वामी शङ्क० ने इसी सूत्र के भाष्य में कहा है, यथा—

न तत्र सुख दु ख भाजो भवन्ति । ... ... अपि च
[illegible] ([illegible] जन्मनि [illegible] लूयमानेषु [illegible]
[illegible] च तदभिमानिनोऽनुश[illegible]

खाने, चबाने आदि पर भी वे अनुशयी उन मे मौजूद ही रहते हैं, छोड़ कर चले नही जाते, अर्थात् शरीर का जीव उस शरीर के कूटे पीसे जाने (याने जख़मी होने आदि) पर दुखी होकर उसे छोड़ भागता है, पर अनुयी की भिन्न दशा है वह दुखी नही होता, अत छोड कर नहीं भागता।



तीसरा अनुवाक।

—॰—

प्रश्न—हमने अभिमानी और अनुशयी का भेद अच्छी तरह नहीं समझ पाया?

उत्तर—अच्छा सुनिये —

प्रथम मानुषो शरीर मे समझो—प्रत्येक शरीर का एक एक अभिमानी जीव है, जिसके निकल जाने से वह शरीर मुर्दा हो जायगा। और उसकी सन्तान बनने के लिए जो जीवात्मायें आकर उस पुरुष-शरीर में प्रवेश करते हैं (कि समागम काल में पिता के शरीर से माता के गर्भाशय में जायेंगे) वे अनुशयी ,कहलाते हैं। ये अनुशयी उस

(भावी पिता) के शरीर में निवास करते हुये भी इनके सुख दुःख से सुखी दुखी नहीं हुआ करते। यही दशा पशु पक्षियों में भी है और वृक्षों में भी यही सृष्टि-नियम वर्त रहा है।

प्रश्न—वे अनुशायी कहां से कैसे आया करते हैं?

उत्तर—हम इस बात को एक उपनिषद् के प्रमाण से सुनाते हैं —

तस्मिन् यावत् सम्पातमुषित्वाऽथतमेवाध्वानं पुनर्निवर्त्तन्ते। यथेतमाकाशमकाशाद्वायुं वायुर्भूत्वाधूमो भवति धूमो भूत्वभ्र भवति ॥ ५ ॥

अभ्र भूत्वा मेघो भवति, मेघो भूत्वा प्रवर्षति त इह व्रीहि यवा ओषधि वनस्पतयस् तिल माषा इति जायन्ते ऽतोवै खलु दुर्निष्प्रपतर यो योह्यन्नमत्ति यो रेतः सिञ्चति तद्भूय एव भवति ॥ ६ ॥

(छान्दोग्य उ० अ० ५, ख० १०, मन्त्र ५, ६)

यहां यह प्रसङ्ग चल रहा है कि वर्षा का जल पांचवीं आहुति में मनुष्य की वाणी हो जाता है। इस वाक्य में यह कहा गया है कि जीवात्मा (आवागमन अनुसार नया शरीर धारण करने के लिए) किस मार्ग से आता है।

अर्थ—(प० शिवशंकर काव्य तीर्थ जी का)

५—वहां कर्मों का जब तक क्षय नहीं हुआ है, तब तक निवास कर अनन्तर जिस मार्ग से आगमन होता है और जिससे गये थे उसी मार्ग के प्रति पुन लौटते हैं। आकाश को आते हैं। आकाश से वायु को प्राप्त होते हैं। वायु में से होकर धूम में आते हैं, धूम से होकर पर्जन्य (वर्षा) में आते हैं।

६—अभ्र में से हो कर मेघ को प्राप्त होता है मेघ हो फिर जब बरसता है। वे जीव व्रीहि, यव, औषधि, वनस्पति, तल, माष (उड़द) इत्यादि उपजते हैं। इस हेतु निश्चय उनसे निष्क्रमण होना दुष्कर है, क्योंकि जो जो अन्न खाता है और जो जो (स्त्रियों में) रेत सिञ्चन करता है तत्स्वरूप ही होता है।"

अब तो यह विषय स्पष्ट हो गया कि अभिमानी और अनुशयी दो प्रकार के जीव हैं। पहिला हमारे शरीर का मालिक है, दूसरा वीर्य में प्रवेश करके सन्तान बनने के लिए हमारे शरीर मे बैठा रहता है। वृक्षों में भी ये दोनों मौजूद हैं—सारे वृक्ष-शरीर में एक अभिमानी जीवात्मा रहता है और उसके बीजों मे अनुशयी जीवात्मायें प्रवेश करते हैं, जिस का विवरण अगली अध्याय स ज्ञात होगा।

—:o—

उत्तर—हां, वे अनुशयी हमारे वीर्य में प्रवेश कर लेंगे।

प्रश्न—और जो गेहू बोये जायँगे, उनके जीवों की क्या दशा होगी ?

उत्तर—उनके अनुशयी जीवात्मायें गेहू पौधों के गर्भ को ठहरा कर अनुशयी से अभिमानी बन जायँगे और तब वे पौधे उगेंगे।

प्रश्न—जो दाने न खाये जायँ और न बोये जायगे, उनके अनुशयियो की क्या दशा होगी ?

उत्तर—उनकी उपजाऊ शक्ति (घुन या कीडे पड जाने र) नष्ट हो जाने के कारण अनुशयी उन्ह छोड कर अन्यत्र चला जायगा।

प्रश्न—और क्या उन अनाजों फलादिकों में उन अनुशयियो को चिर काल तक बैठे हुये इस बात की इन्तिजारी करनी पडती है कि कोई उसका भावी पिता बनने वाला उस अनाज को खाय कि वह वहा जाकर सन्तान बन सके ?

उत्तर—नहीं, ऐसा नहीं होता, देखो शास्त्र क्या कहता है—
"तद्यथा तृण जलायुका तृणस्यान्तं गत्वा ऽन्यमाक्रममाक्रम्य आत्मानमुपसं हरत्येवमेवायमात्मेदं शरीरं निहत्या विद्यां गमयित्वा ऽन्यमाक्रममाक्रम्यात्मानमुपस हरति" ॥ ३ ॥
(बृहदारण्यक उप० ४।४।३)

अर्थ—सो वह आत्मा इस शरीर को त्याग कर के अविद्या (कर्म) को त्याग करके दूसरे (आक्रमम्) आधार को पकड़ करके तब अपने को उठाता है। जैसे तृण जला-युका नामी जन्तु (जोक) घास के अन्त तक जाकर जब अगले (घास) को पकड़ लेता है, तब पिछले को छोड़ता है।

इसका आशय यह निकला कि जीवात्मा तब अपना वर्तमान शरीर त्यागता है, कि जब अगले जन्म के लिए ठीक ठीक प्रबन्ध हो जाता है। दृष्टान्त जोक का देकर बात को स्पष्ट कर दिया गया है। या यों समझो कि जैसे हम लोग अपना अगला पाव जब आगे धर लेते हैं, तब पिछला उठाते हैं, इसी प्रकार जीव भी जब अगले जन्म वाले शरीर का सहारा पकड़ लेता है, तब इस वर्तमान शरीर से निकल कर जाता है। निदान यही बात ठीक है कि अनुशायी जीवात्मा उन पौधों में तब ही आता है कि जब आगे जाकर किसी गर्भस्थ बालक या पौधे के शरीर का अभिमानी जीवात्मा बन सके। इस लिए यही मानना होगा कि वह पौधा या अनाजों में चिर काल तक नहीं रहा करता। उसके मार्ग की एक मञ्जिल "पौधा" होने से वहां ठहरता हुआ आगे बढ़ जाता है।

—०—

चौथा अनुवाक ।

— ० —

हमारा अभिप्राय यह दर्शा देने का है कि जो प्रक्रिया सन्तान उत्पत्ति सम्बन्धी मनुष्यों पशु, पक्षियो में चल रही है, वही वृक्षो में भी कुछ थोडे भेद के साथ देखी जाती है। अर्थात् जिस प्रकार मनुष्यो की सन्तानें बीर्य द्वारा उत्पन्न होती हैं उसी प्रकार वृक्ष की सन्तान भी उनके बीजों द्वारा उत्पन्न होती हैं। और जिस प्रकार यहां मानुषी शरीर से सन्तान तब तक न उत्पन्न होगी जब तक कि कोई अनुशयी जीवात्मा इसका पुत्र बनने के लिये आकर बीर्य में न प्रवेश कर गया हो, उसी प्रकार वृक्षके बीजों में भी अनुशयी जीवात्मायें प्रविष्ट होकर उनकी सन्तान (नये पौधे) उपजाते हैं। अत यह सिद्ध हो रहा है कि दोनों जगह अनुशयो प्रवेश करके समय पर अभिमानी बन जाते हैं।

प्रश्न—हम ऐसा नहीं मानते कि कोई अनुशयी अवश्य बीर्य में प्रवेश करता ही होगा, क्या अगर वह न आयेगा तो गर्भ न ठहरेगा ?

उत्तर—नहीं।

प्रश्न—डाक्टर लोग तो कहते हैं कि मनुष्य के वीर्य में रेंगते हुये सैकड़ों जन्तु सूक्ष्म दर्शक यन्त्र द्वारा देखे जाते हैं जिन्हें वे लोगस्पर्मोटोज़ोआ Spermotozoa कहते हैं। वही मानुषी शरीर को उत्पन्न करने वाली शक्ति है। सो वह तो प्रत्येक शरीर में रहता ही है, फिर अनुशयी के आकर प्रवेश करने की क्या जरूरत है ?

उत्तर—डाक्टरी मत (बिज्ञान निर्णय) भी यही है कि वे सब स्पर्मोटोज़ोआयें जीवधारी होते हैं। अत शास्त्रों के साथ इस सिद्धान्त की सङ्गति लगाते हुये हम यह मान लेते हैं कि उन स्प० में ही वह अनुशयी बैठे रहते हैं। उन अनु० जीवों की सत्ता से ही वे जीव धारी दीखते हैं, और जब वीर्य में से वे अनु० निकल जाते हैं तब वह मुर्दा हो जाता है (स्पर्मो०की गति रेंगना आदि भी समाप्त होजाती है) यही बात हमारे शास्त्र में लिखा है सुनो —

भोक्तुरधिष्ठानाद्भोगायतन निर्माणमन्यथा पूति भाव प्रसङ्गात् ॥ (सांख्य ५।११४)

अर्थ-(प तुलसीराम जी का)।

भोक्ता (जीवात्मा) के अधिष्ठान से भोगायतन (देह) की रचना होती है, नहीं तो सड़ी राध का प्रसंग होने से

व्याख्याः- यदि देह के उपादान स्त्री के शोणित और पुरुष के वीर्य में जीव आकर अधिष्ठाता न बने, तो देह उत्पन्न नहीं हो सकता, प्रत्युत वे शुक्र शोणित सड़ जाते हैं, और पूति भाव (दुर्गन्धत्व) को प्राप्त होजाते हैं।

इसका अभिप्राय यही हुआ कि वीर्य और रज पुरुष स्त्री के शरीरों में उस शरीर के अभिमानी जीवात्माओं के सत्ता से स्थित हैं (जिस प्रकार शरीर के सब धातु—रुधिर मज्जा आदि अपने कामों में प्रवृत्त हैं, कोई सड़ नहीं जाते) और वीर्य शरीर से जब पृथक होता है तो अनुशयी जीवों की सत्ता से स्पर्मोंटो ० के रूप में जीवित रहता है। अनुशयी वीर्य के स्पर्मोटोज़ोआओं में बैठे हुए गर्भाशय में जाकर गर्भ के बालक शरीर का अभिमानी जीव बन जाता है। लेकिन जिस दशा में अनुशयी वीर्य से पृथक होजाता है, तो वीर्य शरीर से पृथक होने पर नष्ट होजाता है, क्योंकि उसको चेतनता देने वाला कोई जीव विद्यमान नहीं रहता। यही बात इस सांख्य-सूत्र में कीही गई है।

प्रश्न- इस सूत्र के भाष्य में "शोणित (स्त्री का रज) भी आया है। तो क्या अनुशयी जीवात्मा माता के शरीर में भी जा बैठा करता है?

उत्तर- नहीं, वस्तुतः बात यह है कि स्पर्मोटोजोआ रज के साथ साथ गर्भाशय में प्रवेश करता है, इस प्रकार रज और वीर्य दोनों का वर्णन आया है।

—०—

पांचवां अनुवाक ।

—०—

प्रश्न—अगर एक एक स्पर्मोटोजोआ में एक एक अनुशयी जीव मौजूद रहता है, तो (यत उनकी संख्या सैकड़ों में है) प्रत्येक मनुष्य के घर सैकड़ों हजारों संतानें उत्पन्न होनी चाहिए। इसी प्रकार वृक्ष के हजारों बीज उपजते हैं अतः उतने नये पौधे उगने चाहिए ?

उत्तर—इस प्रश्न का उत्तर हम वैद्यक के अति प्राचीन ग्रन्थ चरक से सुनाते हैं।

" गर्भ के कारण माता, पिता, आत्मा आदि (नहीं हैं)। एवम् परलोक से आकर सत्वसंज्ञक मन भी गर्भ को उत्पन्न नहीं कर सकता, यदि माता पिता ही गर्भ को उत्पन्न कर सकते तो बहुत से सन्तान की इच्छा वाले स्त्री पुरुष पुत्र की कामना से मैथुन धर्म में प्रवृत्त होकर बहुत से पुत्र उत्पन्न कर लेते और कन्या

की इच्छा वाले कन्या उत्पन्न कर लेते । और जगत में कोई स्त्री और पुरुष भी संतान रहित न रहता, सन्तान के लिए उनको किसी प्रकार के देव आदि के मनाने अथवा व्याकुल रहने की आवश्यकता न पड़ती। सपूर्ण जगत ही अपनी इच्छानुसार सतान वाला हो जाता ।"

(देखो चरक सं० भाषा टीका वेङ्कटेश्वर प्रथम भाग शारीर स्थान अ० ३ श्लो० ४५ पृष्ठ ६९३)

—:o:—

छठवां अनुवाक ।

अण्डे पर विचार ।

—'o'—

प्रश्न—हम वृक्ष के जीव को अण्डे सदृश मानते हैं । अण्डा जीवधारी नहीं है, और यत बीज की बनावट भी अण्डे के सदृश है (क्योंकि जहा अण्डे से बच्चा पैदा होता है, वहाँ बीज से अखुवा फूटता है) इस लिए बीज भी जीवधारी नहीं हो सकता ? फिर उस बीज से पैदा होने वाला वृक्ष तो भला कैसे जीवधारी होगा ?

उत्तर—अन्डे को निर्जीव कहना अपनी भारी भूल को प्रकट करना है। जिस प्रकार माता पिता के रज वीर्य से जरायुज (मनुष्य, पशु आदि) पैदा होवे हैं, उसी प्रकार इन अन्डज योनियों में माता के गर्भ से मिल्ली (जरायु) वाले बच्चे के स्थान में अन्डों वाले बच्चे पैदा होजाते हैं। अन्डे में से समय पाकर बच्चा निकलता है, अगर वह जड़ होता तो चेतन बच्चा कहां से आ जाता। वैदिक सिद्धांत यह है कि अभाव से भाव की उत्पत्ति नहीं हुआ करती, विज्ञान (साइन्स) का भी यही निर्णय है। अत अन्डे के भीतर एक चेतन शरीर-धारी सूक्ष्म रूप वाले बच्चे का भाव (अस्तित्व, हस्ति) है, तभी तो प्रकट में अन्डे में से बच्चा पैदा हो जाता है। इस लिए अन्डे के जड़ न होने से आपकी बात कट गई। परन्तु यह दृष्टांत हमारे पक्ष की पुष्टि करता है। कैसे ? सुनो कि जिस प्रकार जीवधारी अन्डे में से चेतन बच्चा पैदा होता है, उसी प्रकार अनुशयी जीव युक्त बीज से चेतन वृक्ष उत्पन्न हो जाता है। निदान अन्डा भी चेतन है और वृक्ष तथा बीज भी चेतन हैं। केवल यूरोपियन लोग अन्डा खाने की लालच से उसे निर्जीव होने की बहाने-बाज़ी करते हैं

की इच्छा वाले कन्या उत्पन्न कर लेते । और जगत में कोई स्त्री और पुरुष भी संतान रहित न रहता, सन्तान के लिए उनको किसी प्रकार के देव आदि के मनाने अथवा व्याकुल रहने की आवश्यकता न पड़ती । सपूर्ण जगत ही अपनी इच्छानुसार सतान वाला हो जाता ।"

(देखो चरक सं० भाषा टीका वेङ्कटेश्वर प्रथम भाग शारीर स्थान अ० ३ श्लो० ४५ पृष्ठ ६९३)

—:o:—

छठवां अनुवाक ।

अण्डे पर विचार ।

—:o:—

प्रश्न—हम वृक्ष के जीव को अण्डे सदृश मानते हैं । अण्डा जीवधारी नहीं है, और यत बीज की बनावट भी अण्डे के सदृश है (क्योकि जहां अण्डे से बच्चा पैदा होता है, वहाँ बीज से अखुवा फूटता है) इस लिए बीज भी जीवधारी नहीं हो सकता ? फिर उस बीज से पैदा होने वाला वृक्ष तो भला कैसे जीवधारी होगा ?

तीसरा अध्याय।

चावल आदि में जीव नहीं है।

—०—

पहिला अनुवाक।

—०—

इस बात पर विचार किया जाता है कि बीजों में किन २ दशाओं मे अनुशयी जीव नहीं रहा करता।

प्रश्न—धान बोने से उपजता है, इस लिये हम मान सकते हैं कि उसमें अनुशयी जीवात्मा बैठा होगा, परन्तु देखा जाता है कि अगर उसका छिलका (तुष) पृथक करदें और तब उस चावल को बोया जाय तो न उगेगा। इस लिये यहां प्रश्न यह है कि वह अनुशयी धान के तुष में रहता है या चावल में?

उत्तर—अनुशयी धान में रहता है। उस का तुष पृथक कर देना मानो उस धान का अङ्ग भग कर देना है, अत ऐसे भङ्ग किये हुये वस्तु में पौधा उपजाने की शक्ति नहीं रह जाती और तब उस मे अनुशयी नहीं रहा करता।

ओर युरोप में जो लोग निरामिष भोजी (वेजिटेरियन) जाते हैं वे भी अन्डा खाना नहीं त्यागते। अवश्य उनकी भारी भूल है।



दूसरा अनुवाक।

—:o:—

प्रश्न—बालक बूढ़े आदि के शरीर में अनुशयी जीव नहीं आते या आकर चले जाते हैं, इस बारे में प्रमाण क्या है?

उत्तर—वेदांत ३।१।२६ के भाष्य में स्वामी शङ्कराचार्य महाराज का एक वाक्य यों है—

"चिर जातो हि प्राप्त यौवनो रेत. सिग्भवति ॥"

अर्थात् बालकों के शरीर में वे अनुशयी जीवात्मायें नहीं प्रवेश करते, बल्कि (चिर जात) बड़ी आयु वाल (प्राप्त यौवन) जवान पुरुष के शरीरों में प्रवेश कर के वहां से माता के गर्भाशय में जाते हैं।

तीसरा अनुवाक।

—o—

प्रश्न- सांख्य-दर्शन में हम एक सूत्र (पटवत् बीज वच्चात्) पढ़ते हैं कि "बीज को भ ज डालने पर यद्यपि उसकी उत्पादन शक्ति नष्ट हो जाती है, परन्तु फिर औषधियों

प्रश्न—फिर वह क्या करता है ?

उत्तर—वह अपना आगे का मार्ग देखता है । वहां से निकलकर अन्य किसी दाने में घुसेगा ।

प्रश्न—क्या चावल के सिवाय और भी अन्य अनाजों में से वह निकल भागता है ?

उत्तर—बेशक, जिन बीजों को इसी प्रकार तोड़ फोड़ा डाला जाता है कि उनकी उत्पादन शक्ति मारी जाय जैसे पिस्ता, बादाम, अखरोट, चिरोंजी, नारियल आदि में से अनुशयी जीव चला जाता है । जिन अनाजों को कीडे खा लेते हैं या जो सड़ गल जाते हैं, उन सबकी यही दशा होती है अर्थात् उन में से वे अनुशयी निकल जाते हैं ।

प्रश्न—क्या कच्चे फलों, दानों में अनुशयी रहते हैं ?

उत्तर—नहीं, वे इन में तब प्रवेश करते हैं जब वे पके पकाये तैयार हो जाते हैं कि बोये जा सकें ।

प्रश्न—और क्या मनुष्य शरीरों में भी इन अनुशयियों की यही दशा होती है ?

उत्तर—अवश्य, यहां भी जिन का वीर्य सड़ गया, खराब हो गया या जो नपुंसक हो कर सन्तान उत्पत्ति के अयोग्य बन गये, वृद्ध या जन्म रोगी होगये इत्यादि, उनके वीर्य में आया हुआ अनुशयी चला जाता

कैसे जाते होंगे ? निदान यही मानना उचित है कि परमात्मा के नियमानुसार अनुशयी जीवात्मायें आकाशादि से आकर इन सन्तान बनने वाले (मानवों और पशु पक्षियों के वीर्य, वृक्षों के बीजों, या अनाज के दानों, और स्वेदज-शरीरों में) प्रवेश करते हैं ।

द्वारा वह प्राप्त भी हो सकती है"। अब बतलाइये कि बीज को भूँनने पर जब कि उसका अनुशयी चला गया तो फिर वह बीज (औषधि प्रयोग पर) बिना अनुशयी के कैसे उग सकता है ?

उत्तर—बीज को भून डालने पर उस शक्ति के नष्ट हो जाने के कारण उस में रहने वाला अनुशयी जीवात्मा उससे पृथक हो जाता है।

फिर, औषधि प्रयोगों से जिन बीजों की उत्पादन शक्ति ठीक हो जाता है, उन में अन्य अनुशयी जीवों का प्रवेश कर लेना सम्भव है।

प्रश्न—वह नया प्रवेश करने वाला कहाँ से आ जाता है, क्या ये अनुशयी आकाश में भरे पड़े हैं कि झट प्रवेश कर लेते हैं ?

उत्तर—हाँ आकाश भी उनके मार्ग में है (पढ़ो छान्दोग्य ५।१०।५।७ जो ऊपर आ चुका है) और इसमें आप को इतना आश्चर्य क्यों है । क्या यह नहीं देख रहे हो कि स्वेदज-शरीर (जुयें, चीलर, सूड़े, कीड़े आदि) बिना माता पिता के उत्पन्न होते हैं और उनमें ये अनुशयी जा बैठते ही हैं। बतलाओ उन शरीरों में ये कहाँ से,

कि मनुष्य के जीव का निवास मात्र अँगुली में ही नहीं है, परन्तु मनुष्य की कटी हुई अँगुली जीवित नहीं रहती किन्तु वृक्षों का कटा हुआ टुकड़ा जीवित रहता है, इस से ज्ञात होता है कि उस टुकड़े में (उस कटे हुए स्थान में) उस वृक्ष का जीव नहीं बल्कि अन्य वृक्ष पैदा करने वाला बीज मौजूद है।

वृक्ष का बीज जिस स्थान में नहीं होता, उस स्थान का काट कर लगाने से वृक्ष नहीं पैदा होता, आलू की डाली से वृक्ष न होगा, पर गुलाब की डाली ही बीज का काम देती है। मानों आलू की जड़ में और गुलाब की डाली में ही बीज है—यही कारण है कि आलू की डाली में नहीं किन्तु जड़ में उपजने की शक्ति है।

इतना होने पर भी प्रत्येक जन्तु, प्रत्येक प्राणी, प्रत्येक वनस्पति अपने शरीर के किसी न किसी विशेष स्थान के आघात से मर जाता है। वह अपने मर्म स्थान में चोट लगने से सूख जाता है। इस से ज्ञात होता है कि उसका निज का जीव भी अलग है। कोई डाल काटने पर या जड़ टूटने पर भी नहीं मरता। जिन स्थानों के आघात से नहीं मरता वे उसके बीज स्थान हैं, जीवन स्थान नहीं। और जिनके आघात से मरता है

चौथा अध्याय ।

कलम लगाने पर विचार ।

पहिला अनुवाक ।

—:०.—

प्रश्न—कई पौधों में बीज नहीं होते बल्कि उन का डाली या पत्ती की कलम लगाने से नया पौधा उगता है । बतलाइये क्या वैसे पौधों की डाली २ और पत्ती पत्ती में अनुशायी जीवात्मा भरे पड़े हैं या क्या बात है ?

उत्तर—इस बारे में श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती महाराज की सम्मति हम दूसरे खण्ड की प्रथमाध्याय में प्रकट कर आये हैं कि पौधे में अनेक जीव रहते है ।

कलम लगाने के बारे में एक उत्तम लेख नीचे उद्धत करते हैं.—

श्रीमान् पं० रघुनन्दन शर्म्मा जी अपने पुस्तक "अक्षर-विज्ञान पृ० १९ पर लिख रहे हैं—

"वृक्ष भी उसी जगह के काटने पर जीता रहता है जहा उसका निज का जीवात्मा न हो । जैसे अँगुली या पैर कटने पर मनुष्य जीता रहता है, इससे मालूम होता है

कि मनुष्य के जीव का निवास मात्र अँगुली में ही नहीं है। परन्तु मनुष्य की कटी हुई अँगुली जीवित नहीं रहती किन्तु वृक्षों का कटा हुआ टुकड़ा जीवित रहता है, इससे ज्ञात होता है कि उस टुकड़े में (उस कटे हुए स्थान में) उस वृक्ष का जीव नहीं बल्कि अन्य वृक्ष पैदा करने वाला बीज मौजूद है।

वृक्ष का बीज जिस स्थान में नहीं होता, उस स्थान का काट कर लगाने से वृक्ष नहीं पैदा होता, आलू की डाली से वृक्ष न होगा, पर गुलाब की डाली ही बीज का काम देती है। मानों आलू की जड़ में और गुलाब की डाली में ही बीज है—यही कारण है कि आलू की डाली में नहीं किन्तु जड़ में उपजने की शक्ति है।

इतना होने पर भी प्रत्येक जन्तु, प्रत्येक प्राणी, प्रत्येक वनस्पति अपने शरीर के किसी न किसी विशेष स्थान के आघात से मर जाता है। वह अपने मर्म स्थान में चोट लगने से सूख जाता है। इस से ज्ञात होता है कि उसका निज का जीव भी अलग है। कोई डाल काटने पर या जड़ टूटने पर भी नहीं मरता। जिन स्थानों के आघात से नहीं मरता वे उसके बीज स्थान हैं, जीवन स्थान नहीं। और जिनके आघात से मरता है

समय मरने *का लक्षण दर्शाते हैं, तो प्रश्न यह है कि गोभी का जीव कब पृथक होता है। उसको उबालते समय, या उस से पूर्व ?

उत्तर— गोभी के अङ्गो को छिन्न भिन्न करते समय मानो उसका जीवात्मा शरीर मे पृथक हो रहा है।

जैसे किसी जीवधारी (मनुष्य, पशु, पक्षी) के अङ्ग भंग करने वक्त उसे (शरीर से जीव के पृथक होते समय) दुःख पीड़ा होती है (मछली को जब पानी से निकाल कर सूखे पर डाल देते हैं तो वह कैसी छटपटाती है) उसी प्रकार गोभी का शरीर उबाल जाने से उसका जीव निकल रहा होगा।

—०—

चौथा अनुवाक।

—०—

प्रश्न— अगर गोभी को साबूत न उबालें बल्कि काट कर टुकड़े २ करके उबालें, तो उसका जीवात्मा क्या प्रत्येक टुकड़े में बट जाता है ?

उत्तर— नहीं, वह जड़ मे रहता है। जड़ को नष्ट करने से वह निकल कर चला जाता है।

*इसे पढ़ कर जिन्हे हिन्सा का भय हो वे घबरायें नहीं, अगले खन्ड में उस पर पूरा विचार होगा।

प्रश्न—तो फिर उन टुकड़ो की दशा जो उबालते समय मृत्युप्राय होती है। (जैसा कि म० जग० ने कहा है) वैसी क्यों होती है, वे टुकड़े तो मुर्दा शरीर के अवयव हैं तो फिर उनका छटपटाना कैसा ?

उत्तर—किसी जीवित मनुष्य, पशु, पक्षी के शरीर का कोई अङ्ग काट डालो तो वहां भी कुछ देर यही दशा रहेगी। साप को मारे जाते हुये आप ने देखा होगा। सिर कुचल डाला गया (अत वह मर चुका) तब भी यह देखा गया है कि उसका शरीर दस पाच मिनटों तक हिलता, डोलता मरोड़ खाता और जीवन के जैसे लक्षण प्रकट करता है। यही दशा अन्यों में भी है। रावण का सिर कट गया तब भी वह हाथो से बाण फेंकता रहा था। यह बात शायद कवियो की बनावट कही जाय परन्तु एक ऐतिहासिक घटना सुन लो कि महाराजा जयचन्द (कन्नौजाधिपति) युद्ध में मारा गया। सिर कट जाने पर भी हाथ से तलवार चलती रही (मरने पर भी कइयो को मार दिया होगा) इसी कारण उसको "कबन्ध" की पदवी दी गई, जो आज तक उसके वंशजों में प्रचलित है।

इत्यादि दृष्टांतो से ज्ञात होगा कि शरीर से जीव के निकल जाने पर भी पञ्च तत्व के इस पुतले में कुछ

गति बनी रहती है। इस गति का प्रत्यक्ष दृष्टान्त रेल है। जिस प्रकार अग्नि, पानी, वायु के संयोग से एक प्रकार की गति पाई जाती है, वसी ही गति यहां भी समझो। आपने यह देखा होगा कि जब रेल खूब तेजी के साथ दौड़ी जा रही हो, उस समय अगर कुछ डब्बे पृथक कर दिये जांय तो वे (बिना इन्जिन के) एक दो मील दौड़े चले जायगे, ऐसा क्यों होता है? क्योंकि, इन्जिन की शक्ति जो उसमें भर रही थी वह अपना प्रभाव दर्शाती है। इसी प्रकार समझो कि जीवात्मा की जो भारी शक्ति उस (साँप, या लैचन्द आदि) में भरी था, वह उसके पृथक होजाने पर भी कुछ देरी तक अपना प्रभाव रखती है यही बात यहां गोभी के टुकड़ो पर भी लगा लो। हमारा अभिप्राय यह दर्शाने का है कि जो दशा मनुष्य, पशु पक्षी की है, वही और बिल्कुल वही वृक्षों में भी देखी जाती है।

— o —

पाचवां अध्याय।

वृक्ष में इच्छा पूर्वक प्रवृति है।

—०—

पहिला अनुवाक।

—०—

प्रश्न—वृक्षों में हर्कते इरादी (इच्छा पूर्व प्रवृत्ति) नहीं है, अत वे जड हैं। उन में केवल हर्कते इन्तिज़ामी हैं; अर्थात् उनके उत्पन्न होने, बढने, और फल फूल के उपज कर सूख जाने का जेसा नियम बाधा गया है, उसी के अनुसार उनकी अवस्थाये बदल २ कर रह जाती हैं। अत वे जीवधारी नही हैं?

उत्तर—अगर नियम बद्ध होना, अचेतनता की निशानी हो, तो हम कहते हैं कि पशु पक्षी भी तो वैसे ही नियम बद्ध हैं—उनकी भी तो इच्छा पूर्वक प्रवृत्ति नहीं है, तो क्या वे भी जड़ हैं? देखो जिस प्रकार वृक्षों का समय पर फूलना फलना आदि नियत कर्म हैं, वैसे ही पशुओं में भी देखा जाता है फिर उन की स्वाभाविक बुद्धि Instinct लाखों साल बीतने पर भी वैसी की वेसी ही है—अगर गाय घास खाने मे और सिंह मांस खाने मे प्रवृत कर दिया गया तो लाखों

वर्ष में भी कुछ परिवर्तन न हो सका। फिर देखो गर्भाधान की जो ऋतु इन पशुओं मे नियत है, उसी अनुसार वे करते हैं। जन्म, मृत्यु, बच्चों से प्रेम इत्यादि उन में नियत ही हैं, जिनके विपरीत वे कदापि नहीं कर सकते, अत इस अश में, वृक्षों की पशुओं से समानता है।

फिर वृक्षों में इच्छा पूर्वक प्रवृति का होना ,प्रथम खण्ड में हम भलीप्रकार दर्शा आये हैं — मक्खियों को पकड़ने के लिए पौधे की सब पत्तियों का एक होजाना, लाजवन्ती का सिकुड़ जाना और सब से बढ़ कर मैडेगास्करो द्वीप वाले "लड़की खाने वाले वृक्ष" का वृत्तान्त पाठकों को स्मरण होगा। अत. यह आक्षेप निर्मूल है।

दूसरा अनुवाक।

—०:—

प्रश्न—वृक्ष चलते फिरते नहीं हैं, इस लिए हम उन्हें जड मानते हैं ?

उत्तर—कई पशु भी ऐसे हैं, जो नहीं चलते फिरते पर उनके जीवधारी होने में कोई शङ्का नही की जाती, ऐस कई जन्तुओं का वर्णन हम प्रथम खण्ड में कर आये

, परन्तु यहां भी प्रसङ्ग वश थोड़ा सा वर्णन किये ते हैं।

उर्दू मासिक पत्र "इन्द्र" नामी पूर्वकाल में लाहौर से प्रकाशित होता था, म० धर्मपाल जी बी०ए० (भूत पूर्व ोलवी अब्दुल गफूर) इसके सम्पादक थे। इसके अङ्क ास मई १८०७ में "क्या वृक्षों में जीव है?" लेख छपा ै जिसमें हम पढते हैं कि —

"अगर वृक्षों को इस कारण जड कहा जाता है कि वे स्थावर हैं याने चलते फिरते नहीं हैं, तो ज्ञात रहे कि कई जन्तु भी ससार में ऐसे पाये जाते हैं, जो नहीं चलते फिरते जैसे मूगा, स्पञ्ज, हाइड्रा Hydra, जेली फिश Jelly fish, ऐसे जन्तु जो Calentrata कहलाते हैं। Sea one man, sea urchin, star fish, sea cucumber अर्थात् दरियाई करेला आदि, ये ऐसे जन्तु हैं कि विद्वान् लोग हैरान हैं-न इन्हे पशु कह सकते हैं, न वनस्पति। एक ऐसे जन्तु का नाम समुद्री बोतल Sea squirt है, और इसका वृतान्त यों है कि यह जन्तु बिलकुल नहीं हिलता, डोलता क्योंकि इसकी जड़ पत्थरों घोंघों आदि में जमी हुई होती है, इसके शरीर में दो छेद रहते हैं, एक से वह खाता और दूसरे से मल त्याग करता है। वह सास लेता है जिस निमित्त उसके शरीर में एक थैला होता है। उस के गले से होकर पानी उसके मेंदे (पेट) में आता है। मेदे में

छठवां अनुवाक ।

—०—

इन्द्रियां ।

प्रश्न—अगर वृक्ष जीवधारी होते तो उनमें हमारे सदृश इन्द्रियां होतीं, पर नहीं हैं, इस कारण हम उनको जड़ मानते हैं ?

उत्तर—हम प्रथम खण्ड में वृक्षों का देखना, सुनना, सूंघना आदि दर्शा आये हैं। फिर दूसरे खण्ड में महाभारत वाले अध्याय मे सब इन्द्रियों का उत्तम प्रकार वर्णन हो चुका है । इसलिए यहा उन बाता को दुहराना उचित नही है । हा इतना और भी सुन लो कि साप के शरीर में पाव नहीं हैं, वह इस इन्द्रिय बिना ही " जीवित है और अपने सारे भोग भागता है" । घोंघा, सीपा, शंख इत्यादि में शायद केवल एक दो इन्द्रिया मात्र होंगी। परन्तु ये सब जीवित रहते हुए अपन सब आवश्यक कार्य पूरा कर लेते हैं । और डाक्टरों के कथनानुसार एक जन्तु पेट में होता है, जिसको टेप वार्म (Tape Worm) (कद्दू-दाना) कहते हैं । इस में भी कोई इन्द्रिया नहीं होतीं या एकाधी मात्र होंगी । इसी प्रकार मैलेरिया के कीड़े (Parasite) का वृत्तान्त भी सुनाते हैं। तो जब

इन जन्तुओं में भी सब इन्द्रिया नहीं हैं पर वे जीवधारी हैं, तो फिर वृक्ष को भी क्यों न ऐसा ही माना जाय?

प्रश्न—वृक्ष में मन या बुद्धि तो कदापि नहीं हो सकता, क्योंकि उसमें विचार करना और चिन्ता करना आदि नहीं पाया जाता?

उत्तर—प्रथम खण्ड में हम वृक्ष में ज्ञान का होना दर्शा आये हैं और दूसरे खण्ड में महाभारत, साङ्ख्य तथा मन के प्रमाणों से भी यह बात प्रकट कर आये हैं। इसलिए यह आक्षेप भी वृथा ही है, निदान वृक्ष के जीवधारी होने में शङ्का नहीं हो सकती।

सातवा अनुवाक।

जागृति आदि।

प्रश्न—वृक्ष को हम चेतन नहीं मानते क्योंकि उसमें जागृति, स्वप्न आदि दशायें नहीं देखी जातीं?

उत्तर—हम प्रथम खण्ड में वृक्षों का सोना, जागना प्रकट कर आये हैं, और दूसरे खण्ड में स्वामी दयानन्द के शब्दों में वृक्षों का सुषुप्ति दशा में होना दर्शा आये हैं। इसलिए अब यहा कुछ कहना पिसे को पीसना

होगा, अब इतना ही कहते हैं कि युक्ति प्रमाण से वृक्षों में जागृति आदि का होना सिद्ध है ।

प्रश्न—क्या वृक्ष स्वप्न देखते हैं ?

उत्तर—हम मनुष्यों को यह भी तो ज्ञात नहीं है कि पशु, पक्षी, स्वप्न देखते हैं या नही ।। अत यों मानना चाहिए कि अगर पशु पक्षी स्वप्न देखते होंगे तो वृक्ष भी देखते होंगे ।



छठवां अध्याय।

— ० —

वृक्ष भोक्ता है।

पहिला अनुवाक।

— ०—

प्रश्न—वृक्ष हमारा भोग्य है, अर्थात् हम लोग उसके फल, फूल, डाली, पत्ती और जड़ तक को खा लेते (भोगते) हैं। वशेषिक में कहा गया है कि भाग्य वस्तु जड़ हुआ करता है, इसलिए वृक्ष हमारा भोग्य होने से जड़ है?

उत्तर— अगर यही निर्णय है तो अनेक पशु, पक्षी और मनुष्य तक को जड मानना पड़ेगा। कैसे? वृक्ष हमारे खाद्य होने से जड हैं तो बकरा आदि को मांसाहारी मनुष्य तथा सिंहादि पशु खा लेते हैं, अत वे भी जड़ हुये। फिर मनुष्य तक को मार कर सिंह खा लेता है, अत वह भी आप के निर्णयानुसार जड़ ही होगा। वाह जी वाह! अच्छा निर्णय किया कि वृक्ष को जड़ बनाने के धुन में पशु, पक्षी, मनुष्य तक को जड़ बना डाला, धन्य धन्य!!

रही वैशेषिक की बात, सो उस का आशय तो यह

है कि "जड़ वस्तु भोग्य होते हैं," अर्थात् चेतन जीवात्मा किसी का भोग्य नहीं हो सकता। बकरे आदि पशुओं को खाने वाले भी उनके जड़ शरीरों को खा सकते हैं, उनके चेतन जीवात्माओं को तो कदापि नहीं खा सकते, इसी प्रकार वृक्षों के शरीरों को हम लोग खा सकते हैं, उनके जीवात्माओं को नहीं खा सकते। इस प्रकार वैशेषिक से हमारे पक्ष में कोई विरोध नहीं है।

दूसरा अनुवाक।

— o —

हम अपने इसी बात की पुष्टि सांख्य के एक सूत्र से करते हैं, और स्वयं स्वामी दर्शनानन्द जीका भाष्य उपस्थित किये देते हैं.—

"चिदवसानो भोग"

(सांख्य १।१०४)

*अर्थ—"चैतन्यता का जो अवसान अर्थात् अभाव है उसे भोग कहते हैं, यहा पर महर्षि भोक्ता और भोग को

---

* स्वामी दर्शनानन्द जी के उर्दू सांख्य के हिन्दी अनुवाद पृष्ठ ४३ से

पृथक २ करते हैं, क्योंकि जड़ पदार्थ भोग होते और चैतन्य भोक्ता होता है। तथा भोग सदा परिणामी होता है और भोक्ता एक रस और चैतन्य होता है।"

यहां भोग पदार्थ को परिणामी कहा गया है अत जानना चाहिये कि जैसे वृक्ष शरीर परिणामी है वैसे ही पशु, पक्षी और मनुष्य शरीर भी परिणामी है, इसलिए ये सब "भोग" में ही हैं और इन सब के जीवात्मायें भोक्ता और चैतन्य हैं।

सिंह आदि मांसाहारी जन्तुओं के भोग्य मृगादि तथा मनुष्य-शरीर हैं। और मनुष्यों के भोग्य वृक्ष-शरीर और मृगादि के घास पात आदि हैं।

इस प्रकार सिद्ध हुआ कि वृक्ष भी भोक्ता हैं, अतः इस अंश में भी हम से उन की समानता है।



सातवां अध्याय।

वृक्ष उद्भिज्ज है।

—०—

प्रश्न– चार प्रकार की सृष्टि में जो उद्भिज्ज प्रकार की चौथी सृष्टि है उसी से आप लोग वृक्षों का अभिप्राय ले रहे हैं, परन्तु इस शब्द का आशय वह नहीं है बल्कि इस से मेंढक बीरबहूटी आदि का अभिप्राय है, देखो प्रमाण-

इन्द्र गोप मण्डूकयादय. उद्भिज्जा.॥ (सुश्रुत०)

अर्थात् इन्द्रगोप (बीर बहूटी) और मेंढक आदि उद्भिज्ज कहलाते हैं, क्योंकि वे जमीन फोड़ कर उपजते हैं।

उत्तर— उद्भिज्ज शब्द का शब्दार्थ "भूमि फोड़ कर उपजने वाला" है। इस कारण जहां यह शब्द पृथ्वी से अखुवा फोड़ कर उगने वाले पौधों पर लागू होता है, वहां मेंढक, केंचुवे, बीरबहूटी आदि जन्तुओं पर भी इस लिए लागू हो जाता है कि वे भी भूमि फोड़ कर उत्पन्न होते हैं। अत· इस शब्द से एक का तातपर्य लेना और दूसरे का न लेना सरासर अनुचित और अन्याय है। रही प्रमाण की बात— सो हम आपके इस वैद्यक ग्रन्थ की अपेक्षा बहुत उच्च कक्षा वाले शास्त्रों— वेदान्त,

साक्ष्य छान्दोग्य से दे आये हैं, फिर स्वामी शङ्कराचार्य और विज्ञानभिक्षु जैसे सुविख्यात भाष्य-कारों की साक्षी भी उपस्थित कर आये हैं कि उद्भिज्ज से पौधों का अभिप्राय है न कि मेंढकादिकों का।

इतने पर भी जो लोग न माने और हठधर्मी ही करते चले जाय उनका कोई इलाज नहीं है।



आठवां अध्याय।

—०—

व्याकरण इनकारी नहीं है।

पहिला अनुवाक।

—०—

प्रश्न—देखो व्याकरण के मुख्य ग्रन्थ अष्टाध्यायी में भी वृक्षों में जीव होने से इनकार पाया जाता है, वह प्रमाण यों है —

"नागोऽप्राणिषु अन्यतरस्याम् ॥

(अष्टाध्यायी, ६।३।७७)

पदच्छेद—नग, इत्यत्र, नञ, प्रकृत्या, वामवति अप्राणिषु।

अर्थ—"प्राणि भिन्न हो तो '**नग**' "का नञ" "विकल्प करके प्रकृति से रहे। नगो वृक्षः। नगा. पर्वताः ॥

(यह अर्थ वेदप्रकाश प्रेस इटावा की छपी अष्टाध्यायी में हैं) सो यहां '**नग**' का अ° '**वृक्ष**' कहा गया है, और उसे "अप्राणि"=प्राणरहित कहा है। अत. वृक्ष जड़ पदार्थ है?

उत्तर—अष्टाध्यायी के मूल सूत्र (६।३।७७) में तो "वृक्ष" शब्द कहा ही नहीं गया। वहा तो यह बतलाया है कि "अप्राणि वाचक शब्दों में यह प्रयोग हो"—रहा यह कि "नागा" का अर्थ "वृक्षा" होता है, सो जानना चाहिये कि धात्वर्थ (=यौगिक) तो "नगा" का वृक्षा नहीं है, किन्तु इसी सूत्र के भाष्य (काशिका) में

" न गच्छन्तीति नगाः "

लिखा है, याने "जो न चल सकता हो उसे नगा" कहते हैं इसीलिए "पर्वतों" को "नगा" कहा गया है। और यत वृक्ष भी एक जगह खड़े रहते हैं, चलते फिरते नहीं हैं, इसलिए उनको भी "नगा" के अर्थ में कोई कोई ले लेते हैं, इसी जहा काशिका वाले ने नगा. से "पर्वत तथा वृक्ष" दोनों का आशय लिया है वहा सिद्धान्तकौमुदी वाले ने—

" नगाः अगाः पर्वताः "

ही मात्र लिया है। अत यह स्पष्ट जाना गया कि नगा का शब्दार्थ वृक्षा नहीं है, किन्तु "पर्वता" है। हा भावार्थ में वृक्ष को भी मान सकते हैं।

इसलिए यह आक्षेप भी निर्मूल ही है, क्योंकि "नगा" से "वृक्षा" अर्थ करनेवालों की भूल के हम जिम्मेवार नहीं हो सकते।



इसलिए व्याकरण के भी इनकारी न होने से यही निर्णय रहा कि वृक्षों में जीव मौजूद है।

तीसरा अनुवाक।

—०—

व्याकरण से हमारे विपक्षियों को तो कोई आक्षेप मिला नहीं, परन्तु हम एक बात अपनी पुष्टि में अलबत्ता पा रहे हैं जिसे इस अध्याय के उपसंहार रूप प्रस्तुत करते हैं—

व्याकरण ने वृक्ष के नाम "पादप" की व्युत्पत्ति यों बतलाई है कि—

पादेन पिबति य स पादप।

अर्थात् "वृक्षों को पादप इसलिए कहा जाता है कि वे पाव से पानी पीते हैं।"

अब विचार का स्थान है कि "पाव" का होना, और पानी का पीना ऐसी बातें हैं जो जीवधारी में ही होनी सम्भव हैं। इसलिए व्याकरण इनकारी तो नहीं, बल्कि वृक्षों के जीवधारी होने का इकरारी बन रहा है। कहिये विपक्षी महाशय! अब आप क्या करेंगे? जिस व्याकरण का सहारा लिया था, वह तो आप का पोषक न होकर हमारा पोषक बन गया।



नवां अध्याय ।

वैशेषिक भी इनकारी नहीं है।

पहिला अनुवाक ।

प्रश्न—प० भीमसेन शर्मा ने अपने ब्राह्मण-सर्वस्व भाग १ अ० ३ पृ० १०२ पर लिखा है कि वृक्षों का जीवधारी होना (साइन्स) Science से सिद्ध है, परन्तु यह नहीं बतलाया कि उनका अभिप्राय अङ्गरेजी साइन्स से है या संस्कृत विज्ञान से। अगरेजी साइन्स से अभिप्राय है, तो वे स्वयं अङ्गरेजी पढ़े नहीं हैं, और संस्कृत साइन्स "वैशेषिक" तो वृक्षों में जीव नहीं मानते ? (यह लेख स्वा० दर्शनानन्द जी का है।)

उत्तर—अङ्गरेजी साइन्स की बातें हम ने प्रथम खण्ड मे प्रकट कर दी हैं और संस्कृत पुस्तकों के प्रमाणों की भरमार भी दूसरे खण्ड में कर चुके हैं। फिर वैशेषिक में क्या है, यह भी यहीं दर्शा आये हैं।

प्रश्न—वैशेषिक दर्शन के कर्ता कणाद जी भी वृक्षों में जीव नहीं मानते, देखो वैशेषिक दर्शन का सूत्र —

तत् पुन पृथिव्यादि कार्य्य द्रव्य त्रिविध शरीरेन्द्रिय विषय सञ्ज्ञकम् ।

(वैशेषिक ४।२।१)

उत्तर—वैशेषिक दर्शन के कर्ता श्री कणाद जी ने वृक्षों में जीव का निषेध कदापि नहीं किया, जो इसी बात से साबित है कि न तो इस सूत्र में और न अन्य सूत्रों में ऐसा वर्णन आया है।-वरन् इस के विरुद्ध वृक्ष में जीव होना तो यहां पाया जाता है। रही इस सूत्र की बात, सो हम ने इस का भाष्य स्वामी स्वा० दर्श० का पढ़ा तो ऐक शब्द भी ऐसा न पाया जो वृक्ष को जीव रहित प्रकट करता ।

दूसरा अनुवाक ।

प्रश्न—इस सूत्र पर श्री प्रशस्त-पाद जी का जो भाष्य है उस में ऐसा आया है —

" विषयस्तु द्व्यणुकादि प्रक्रमेणारब्धस्त्रिविधो मृत् पाषाण स्थावर लक्षण, तत्र भूप्रदेशा प्राकारेष्टिकादयो मृत्प्रकारा पाषाणा उपलमणि वज्रादय. । स्थावरास्तृणगुल्मौषधि तरु लता वितान,वनस्पतय इति ।"

अर्थ—विषय द्व्यणुक आदि से आरम्भ करके तीन प्रकार के हैं—एक मट्टी, दूसरे पाषाण और तीसरे स्थावर

के लक्षणवाले। पहिला भूमि में होने वाला मट्टी के ईंट आदि हैं। दूसरा पाषाण के प्रकार जवाहरात, मणि वज्र आदि हैं, तीसरा स्थावर— तृण, गुल्म, लता आदि हैं।

यहां वृक्ष के प्रकरणों को मट्टी के कार्य और विषय (भोग्य) पदार्थ कहा गया है इसलिए वे जड हैं।

उत्तर— मट्टा कारण के कार्य रूप होने से अगर वृक्ष जड हैं, तो फिर यत "वृक्ष" के फल, फूल, डाली, पत्ते रूपी जड कारण से हमारा शरीर बनता है इसलिये "जड़ कारण का कार्य" होने से मनुष्य को भी जड क्यों नहीं मानत? रही "भोग्य" होने की बात कि वृक्ष हमारे भी भोग्य हैं, इसलिए वे जड़ होंगे, तो सिंह का भोग्य मनुष्य होने से यह भी फिर जड़ ही होगा।

प्रश्न— तो फिर प्रशास्त्त पाद जी ने भोग्य पदार्थों में वृक्षादि ही को क्यों गिनाया? और मनुष्यादि को भी भोग्य में क्यों नहीं गिनाया?

उत्तर— उनके समीप सिंहादि के भोग्य का प्रश्न उपस्थित न था। (मनुष्य, मृगा, गाय आदि सिंह के भोग्य हैं) वे केवल यह बतला रहे थे कि मनुष्य का भोग्य क्या २ है? अत उन्होने सिंह का भोग्य बतलाना आवश्यक न समझा, इसलिए वृक्ष कारण के कार्य रूप मानुषी शरीर पर कुछ विचार नहीं किया।

निदान यह आक्षेप भी निर्मूल सिद्ध हो रहा है।

—०—

दसवां अध्याय ।

शङ्कराचार्य विरोधी नहीं थे ।

पहिला अनुवाक ।

प्रश्न— शङ्कर भाष्य में लिखा है कि बौद्धों के मत में स्थावर (वृक्षादि) चेतन हैं, और कणाद के मत में स्थावर जड़ हैं। इससे यह बात स्पष्ट है कि शङ्कराचार्य आस्तिक कणाद के मत को स्वानुकूल होने से स्वीकारते और बौद्ध मत का खण्डन करते हैं (अर्थात् वे वृक्षों को जीवरहित जड़ पदार्थ मानते हैं।)

उत्तर—स्वामी शङ्कराचार्य जी महाराज ने कदापि ऐसा नहीं माना। उनके नाम से मनमानी गढन्त करके सर्व साधारण को भ्रम मे डाल देना, क्या स्वामी दर्शनानन्द जैसे विद्वानों का काम होना चाहिए ? आश्चर्य !

यहा जिस मन्त्र के भाष्य पर इशारा है वह छान्दोग्य उपनिषद का ६। ११।२ है, जिसे हम उसी प्रकरण में लिख चुके हैं। 'विपक्षी का कथन है कि स्वामी शङ्कराचार्य जी ने अपने इस मन्त्र के भाष्य में ऊपरी सम्मति दी है,

अत हम उस वाक्य को ज्यों का त्यों नीचे उद्धृत किये देते हैं.—

"बौद्ध काणाद मतमचेतनाः स्थावरा इत्येतदसारमिति दर्शितं भवति" ॥२॥

अर्थ— और बौद्ध तथा काणाद (कणाद ऋषि के मत वाले) लोग यह माने बैठे हैं कि स्थावर अचेतन हैं (अर्थात् वृक्ष जड़ हैं) परन्तु यह (उनका मनतव्य) **असार** है, ऐसा ही यहां भली प्रकार दिखला दिया गया है।

दूसरा अनुवाक।

—.०—

श्री स्वामी शङ्कराचार्य जी हमारे पक्ष के विरोधी नहीं थे। विरोध कैसा! वे तो बड़े जोरदार शब्दों में पुष्टि कर गये हैं। इसी मन्त्र के भाष्य में आपने जो कुछ कथन किया है उसका साराश हम नीचे दिये देते हैं—

(१) वृक्षों में जीव व्याप्त है। (२) वृक्ष पानी पीते हैं। (३) वे भूमि के रसों को खाते हैं। (४) उनमें खाद्य पदार्थों से रस बनता है, जिससे उनका शरीर वृद्धि प्राप्त करता है। (५) वे हर्ष प्राप्त करते हैं (जो मन

दसवां अध्याय ।

शङ्कराचार्य विरोधी नहीं थे ।

पहिला अनुवाक ।



प्रश्न— शङ्कर भाष्य में लिखा है कि बौद्धों के मत में स्थावर (वृक्षादि) चेतन हैं, और कणाद के मत में स्थावर जड हैं। इससे यह बात स्पष्ट है कि शङ्कराचार्य आस्तिक कणाद के मत को स्वानुकूल होने से स्वीकारते और बौद्ध मत का खण्डन करते हैं (अर्थात् वे वृक्षों को जीवरहित जड़ पदार्थ मानते हैं।)

उत्तर—स्वामी शङ्कराचार्य जी महाराज ने कदापि ऐसा नहीं माना। उनके नाम से मनमानी गढन्त करके सर्व साधारण को भ्रम में डाल देना, क्या स्वामी दर्शनानन्द जैसे विद्वानों का काम होना चाहिए? आश्चर्य!

यहा जिस मन्त्र के भाष्य पर इशारा है वह छान्दोग्य उपनिषद् का ६।११।२ है, जिसे हम उसी प्रकरण में लिख चुके हैं। 'विपक्षी का कथन है कि स्वामी शङ्कराचार्य जी ने अपने इस मन्त्र के भाष्य में ऊपरी सम्मति दी है,

ग्यारहवां अध्याय ।

—०—

वृक्षों मे जीव और प्राण दोनों हैं ।

पहिला अनुवाक ।

जब हमारी अकाट्य युक्तियों से वृक्ष का जीवधारी होना सिद्ध हो गया तो विपक्षी महाशय ने एक नया बहाना ढूंढ निकाला अर्थात् अब आप कहने लगे कि हां हां वृक्ष में जीवन के सब लक्षण पाये जाते हैं, अतः हम भी यही मानते हैं कि उनमें जीवन (जिन्दगी) लाइफ life या प्राण) तो मौजूद हैं परन्तु जीवात्मा नहीं है।

अब देखना यह है कि स्वामी दर्शनानन्द जी की यह बात कहां तक सत्य हो सकती है। शास्त्रों का स्वाध्याय करने से हमें पता लगा कि आपकी यह बात सर्वथा शास्त्र-विरुद्ध है। इस बारे में, कुछ प्रमाण नीचे प्रस्तुत किये जाते हैं, जो यह दर्शायेंगे कि प्राण अकेला बिना जीव के नहीं रह सकता।

श्री पाणिनि महाराज ने अपनी अष्टाध्यायी में एक सूत्र-

या अन्तःकरण का धर्म है)। (६) वे रोगी भी होते हैं। (७) उनमे वाणी, मन, प्राण मौजूद हैं (८) वृक्ष के लिए "**शरीर**" शब्द पढा गया है इत्यादि।

निदान यह आक्षेप भी निर्मूल सिद्ध हुआ अतः वृक्ष जीवधारी ही हैं।



" अदृष्ट द्वारा चेदसम्बद्धस्य तदसम्भवाज्जलादिवदंकुरे ॥ "
(सांख्य ६।६१)

अर्थ (प० प्रभूदयाल का)

यदि अदृष्ट (प्रारब्ध) से प्राण को शरीर का अधिष्ठाता कहें तो भी ठीक नहीं हो सकता, क्योंकि प्राण का जब अदृष्ट के साथ कोई सम्बन्ध ही नहीं है तब उसे अधिष्ठाता कैसे कह सकते हैं? जैसे अंकुर उत्पन्न होने में यद्यपि जल भी हेतु है, परन्तु बिना बीज के जल से अंकुर उत्पन्न नहीं हो सकता। इसी भांति यद्यपि शरीर की अनेक क्रियायें प्राण से होती हैं, परन्तु वह प्राण बिना आत्मा की कोई क्रिया नहीं कर सकता ॥ ६१ ॥

इस सूत्र से यह स्पष्ट हो रहा है कि प्राण स्वय अशक्य है, बिना जीवात्मा की सहायता के कुछ भी नहीं कर सकता है। ऐसी दशा में जो हमारे स्वामी दर्शनानन्द जी यह मान रहे हैं कि वृक्षों में केवल प्राण हैं और वे ही उन्हें हरा भरा बनाये रहते हैं इत्यादि यह आप की बात इस प्रमाण से कट जाती है। यहां यह बतला दिया गया है कि जीवात्मा के बिना प्राण बेचारा अकेला कुछ कर धर नहीं सकता। इसलिए मानना पड़ेगा कि अगर वृक्षों में प्राण हैं तो उन में जीवात्मा भी अवश्य है।

— o —

जाव प्राणने ।

लिखा है । अर्थात् "जीव" धातु का अर्थ "प्राण" (सांस लेना) है । इस प्रमाण से जीव प्राण का साथ रहना सिद्ध है । परन्तु हम इससे अधिक उच्च कोटि के प्रमाणों को आगे सुनायेंगे ।

दूसरा अनुवाक ।

—०—

देखिये वेदान्त इस बारे में क्या कहता है—

प्राण गतेश्च ।

(ब्रह्म सूत्र ३।१।३)

अर्थ (प० आर्यमुनि का)—

"प्राणों की गति पाये जाने से भी यह पाया जाता है कि जीवों के साथ पांच भूतों का सूक्ष्म शरीर जाता है ।"

यहां प्राण का जीव के साथ जाना कहा गया है ।

—०—

तीसरा अनुवाक ।

अच्छा देखिये सांख्य क्या कहता है ?

गुण प्रकाशित रहते हैं, और जब शरीर छोड़ कर चला जाता है तब ये गुण शरीर में नहीं रहते। जिसके होने से जो हो, और न होने से न हो, वे गुण उसी के होते हैं, जैसे दीप और सूर्य्यादि के न होने से प्रकाशादि का न होना, और होने से होना है"।

यह सत्यार्थप्रकाश का वाक्य बहुत स्पष्ट है, और पाठकों को विचारना चाहिये कि यहाँ प्राण और जीवका कैसा घनिष्ट सम्बन्ध माना गया है। श्री स्वामी जी ने तो दृष्टान्त भी बहुत उत्तम देदिया है, कि जैसे सूर्य्य के साथ प्रकाश बना रहता है उसके अस्त होने पर प्रकाश का भी अस्त हो जाता है। उसी प्रकार ये प्राण आदि जीव रूपी सूर्य के (प्रकाश सदृश) गुण हैं। अत वृक्षों में अगर प्राण मौजूद हैं (जैसा कि मान लिया गया है) तो जीव का होना भी मानना पड़ेगा, क्योंकि जैसे प्रकाश बिना सूर्य के नहीं रहता वैसे "प्राण" बिना जीव के नहीं रह सकता।"

पाचवा अनुवाक।



इसी सूत्र के भाष्य में स्वामी दर्शनानन्द जी का एक वाक्य यों है —

चौथा अनुवाक ।

—०—

अब वैशेषिक की भी सुनिये—वही वैशेषिक जिस पर हमारे विपक्षियों का बड़ा जोर था कि वह सरासर वृक्षों के जीवधारी होने से इनकारी हैं —

"प्राणापान निमेषोन्मेष मनोगतीन्द्रियान्तर विकाराः सुख दुःखेच्छा द्वेषौ प्रयत्नाश्चात्मनो लिङ्गानि ॥"

(वैशेषिक ३।२।४)

इसका अर्थ सत्यार्थप्रकाश पृष्ठ २०२ पर निम्नप्रकार है —

"(प्राण) प्राण को बाहर से भीतर को लेना (अपान) प्राणवायु को बाहर निकालना (निमेष) आँख को मीचना (उन्मेष) आँख को खोलना (मन) निश्चय, स्मरण और अहङ्कार करना (गति) चलना (इन्द्रिय) सब इन्द्रियों को चलाना (अन्तर विकार) भिन्न २ क्षुधा, तृषा, हर्ष, शोकादि युक्त होना (सुख, दुःख इच्छा, द्वेष, प्रयत्न) ये सब जीवात्मा के *गुण** हैं । इन्हीं से आत्मा की प्रतीति करनी, क्योंकि वह स्थूल नहीं है, जब तक आत्मा देह में होता है तभी तक ये

*ध्यान दीजिये कि प्राण को जीवात्मा का गुण कहा गया है । गुण अपने गुणी से पृथक हो नहीं सकता, तो फिर वृक्ष में गुण (प्राण) रहे और गुणी (जीव) न रहे यह कैसे हो सकता है (मङ्ग०)

बारहवां अध्याय।

* वृक्ष सुखी दुखी होता है।

पहिला अनुवाक।

—०—

प्रश्न—हम यह मानते हैं कि वृक्ष यद्यपि जीवधारी है परन्तु वह दुखी सुखी नहीं हुआ करता क्योंकि उसमें पाचों ज्ञानइन्द्रियों का अभाव है?

उत्तर— हम ऊपरी दोनों खण्डों में युक्तिया और प्रमाणों से यह दर्शा आये हैं कि वृक्षों में पाचों ज्ञान-इन्द्रिया विद्यमान हैं और वे सुख दुख का अनुभव करते हैं।

प्रश्न— अच्छा "हमारा प्रमाण सुनो—

श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती महाराज सत्यार्थप्रकाश १२ वें समुल्लास (पृ० ४७८) में कहते हैं कि—

---

* यह श्री प० अयोध्या प्रसाद जी बी० ए० उपदेशक कलकत्ता आर्यसमाज का पक्ष है। आपकी बातों के आधार पर यह अध्याय रची जाती है।

लिखे देते हैं जो लोग चाहें मूल में देख लें—

१ प्रश्नोपनिषद्—३।३।

(इस में कहा है कि जैसे पुरुष की छाया सदा उसके साथ रहती है उसी प्रकार जीव के साथ प्राण रहता है) ।

२—प्रश्नो०—३।१०।

(प्राण जीवात्मा के साथ २ जाता है)

३—बृहदारण्यक उपनिषद् ४।४।२ ।

(जीव के साथ ही प्राण जाता है)

इन प्रमाणों से जब कि यह बात सिद्ध हो रही है कि प्राण और जीव साथ साथ रहा करते हैं तो हमारे विपक्षी का यह कथन कि वृक्ष में प्राण तो हैं पर जीव नहीं हैं अवश्य ही शास्त्रों के विरुद्ध होने से त्याज्य है ।



प्राप्त कभी नहीं हो सकता, जैसे मूर्च्छित प्राणी सुख दुःख को प्राप्त नहीं हो सकता, वैसे वे वायुकायादि के जीव भी अत्यन्त मूर्च्छित होने से सुख दु.ख, को प्राप्त नहीं हो सकते०" ।

यह उद्धरण स्पष्ट सिद्ध कर रहा है कि श्री स्वामी जी महाराज वृक्षों में जीवों को सुषुप्ति या मूर्च्छित दशा में मानते हैं, और अपने पक्ष की पुष्टि युक्ति तथा सांख्य के प्रमाण से कर रहे हैं।

दूसरा अनुवाक।

—,०—

उत्तर—हां श्री स्वामी जी का अवश्य यही निर्णय है कि वृक्ष में जीव तो है, परन्तु वह सुखी दुःखी नहीं होता, लेकिन इस सांख्य सूत्र में वृक्षों का कोई वर्णन नहीं है—न वहा वृक्ष के सुखी दुःखी होने की बात कही गई है और न उसमें पांचों ज्ञान इन्द्रियों का निषेध किया गया है। सूत्र में तो एक सर्व साधारण नियम General rule बतलाया गया है कि "पांचों ज्ञान इन्द्रियों के योग से (जीवात्मा) सुख दु ख का अनुभव किया करता है"।

अतः यों समझो कि जिस प्रकार मनुष्य का जीवात्मा अपनी इन्द्रियों के योग से सुख दुःख का अनुभव

" देखो ! पीड़ा उन्हीं जीवों को पहुंचती है जिन की वृत्ति सब अवयवों के साथ विद्यमान हो। इस में प्रमाण :—

पञ्चावयव योगात् सुख संवित्ति.॥

(सांख्य अ० ५, सू० २७)

जब पांचो इन्द्रियो का पांच विषयो के साथ सम्बन्ध होता है तभी सुख व दुख की प्राप्ति जीव को होती है, जैसे बधिर को गाली प्रदान, अन्धे को रूप वा आगे से सर्प व्याघ्रादि भयदायक जीवो का चला जाना, शून्य बहिरी वाले को स्पर्श, पिनस रोग वाले को गन्ध और शून्य-जिह्वा वाले को रस प्राप्त नहीं हो सकता इसी प्रकार उन जीवो की भी व्यवस्था है। देखो जब मनुष्य का जीव सुषुप्ति दशा में रहता है तब उसको सुख वा दुख की प्राप्ति कुछ भी नहीं होती, क्योकि वह शरीर के भीतर तो है परन्तु उसका बाहर के अवयवो के साथ उस समय सम्बन्ध न रहने से सुख दुख की प्राप्ति नहीं कर सकता और जैसे वैद्य वा आज कल के डाक्टर लोग नशे की वस्तु खिला वा सुंघा के रोगी पुरुष के शरीर के अवयवों को काटते वा चीरते हैं उस को उस समय कुछ भी दुख विदित नहीं होता, जैसे वायुकाय अथवा अन्य **स्थावर** शरीर वाले जीवों को सुख वा दुख

प्राप्त कभी नहीं हो सकता, जैसे मूर्च्छित प्राणी सुख दुःख को प्राप्त नहीं हो सकता, वैसे वे वायुकायादि के जीव भी अत्यन्त मूर्च्छित होने से सुख दुःख, को प्राप्त नही हो सकते०" ।

यह उद्धरण स्पष्ट सिद्ध कर रहा है कि श्री स्वामी जी महाराज वृक्षों में जीवों को सुषुप्ति या मूर्च्छित दशा में मानते हैं, और अपने पक्ष की पुष्टि युक्ति तथा सांख्य के प्रमाण से कर रहे हैं ।

दूसरा अनुवाक ।

—,०—

उत्तर—हां श्री स्वामी जी का अवश्य यही निर्णय है कि वृक्ष में जीव तो है, परन्तु वह सुखी दुःखी नहीं होता, लेकिन इस सांख्य सूत्र में वृक्षों का कोई वर्णन नहीं है—न वहा वृक्ष के सुखी दुःखी होने की बात कही गई है और न उसमे पाचों ज्ञान इन्द्रियों का निषेध किया गया है । सूत्र में तो एक सर्व साधारण नियम General rule बतलाया गया है कि "पाचों ज्ञान इन्द्रियों के योग से (जीवात्मा) सुख दुःख का अनुभव किया करता है" ।

अतः यों समझो कि जिस प्रकार मनुष्य का जीवात्मा अपनी इन्द्रियों के योग से सुख दुःख का अनुभव

"ओम् शान्ति कुटी शिमला, ता० १८—६—२३
स्वामी मङ्गलानन्द पुरी जी । नमस्ते

बराार में निवेदन है कि मनुस्मृति के अध्याय १ श्लोक ४६ में जो वृक्षों में सुख दु ख का होना लिखा है इस से विरुद्ध मैंने सुख दु.ख समन्वितः के स्थान में सुख दु.ख विवर्जिताः ऐसा पाठ किसी स्मृति म पढा है, परन्तु इस समय मुझे उस स्मृति की याद नहीं । मनु में तो "सुख दु ख समन्विता" ही पाठ है ।

भवदीय
विश्वेश्वरानन्द ।"

इस पत्र को प्रस्तुत करके हम पाठकों का ध्यान इस बात पर आकर्षित करते हैं कि उक्त महात्मा श्री स्वामी विश्वेश्वरानन्द जी महाराज ने मनु १।४६ को (जिस म वृक्ष को सुख दु ख से समन्वित=युक्त कहा गया है) क्षेपक या वेद विरुद्ध 'नहीं' प्रकट किया, अत हमारा यही मन्तव्य है कि जहा सर जगदीश चन्द्रादि नवीन विद्वानों का यह निर्णय है कि वृक्ष सुख दु ख का अनुभव प्राप्त करते हैं वहा मनु भगवान आदि प्राचीन ऋषियों का भी यही निर्णय था । अत यही सिद्धान्त ठीक है कि वृक्ष सुखी दु खी रहते हैं ।

तेरहवां अध्याय ।

पत्थरादि में जीव होने पर विचार

पहिला अनुवाक ।

हमारे विपक्षी कहा करते हैं कि अगर वृक्षों को जीवधारी मानोगे तो पत्थर आदिको को भी जीवधारी मानना पड़ेगा, क्योकि जिस प्रकार वृक्षों में बढना आदि पाया जाता है, उसी प्रकार पत्थर आदि भी बढ़ा करते हैं ।

उत्तर—यद्यपि पत्थरादि का बढना अन्य प्रकार का है, परन्तु यदि पत्थरो आदि को जीवधारी मान ही लिया जाय, तो बतलाओ इससे हमारे पक्ष की क्या हानि होगी ? पत्थर में जीव सिद्ध होने से कुछ हमारे वृक्षो के जीव भाग तो नहीं जांयगे ?

प्रश्न—अच्छा प्रथम हमें आप यह बात बतला दें कि वस्तुत पत्थर, सोना, चांदी आदि भी जीवधारी हैं या नहीं ?

उत्तर—शास्त्रीय प्रमाणों के आधार पर तो हम यही कह सकते हैं कि उन्हें जड ही माना गया है । मनुस्मृति मे जहां वृक्षों की उत्पत्ति जीवधारियो के चार प्रकारों में

तीसरा अनुवाक।

—:o:—

प्रश्न—तो फिर क्या यही मान लिया जाय कि सब जड़ ही जड़ है, सँसार चेतन नाम की वस्तु नहीं है, क्यों कि हमारे शरीर तक को आप जड़ बतला रहे हैं।

उत्तर— शरीर तो मनुष्य पशु, पत्ती तथा वृक्षों के भी पाँच तत्वों से बने हुये होने से जड़ ही हैं। परन्तु उनमें जीवात्मा आ कर बैठा हुआ है, इसलिये वे चेतन कहलाते हैं। अवश्य ही जीव के शरीर से निकल जाने पर जब इस को मुर्दा कहा जाता है, तो वह जड़ ही तो होता है, अब अभिप्राय यह हुआ कि एक जिन्दा मनुष्य जड़ चेतन दोनों का समुदाय रूप है, परन्तु मुर्दा केवल जड़ ही है।

प्रश्न—तो क्या पत्थर,दि में भी ऐसा मान लिया जाय कि पहाड़ एक शरीर है—वह बढता है, अपने अनुकूल परमाणुओं को अपने अन्दर जज़्ब करता है और वृक्षों की तरह जीवित पदार्थ है, और जब हम उसमें से पत्थर काट लाते हैं तो मानों उस शरीर के अवयवों को उससे पृथक कर लेते हैं तब ये पत्थर मुर्दा और जड़ पदार्थ बन जाते हैं?

उत्तर — ऐसा मान भी लिया जाय तो हमारे पक्ष की कोई हानि नहीं है, परन्तु उस पक्ष के पोषकों के पास न तो वृक्षों में जीव होने सदृश प्रबल युक्तियां हैं और न वैदिकधर्म की पुस्तकों के प्रमाण हैं।

चौथा अनुवाक।

—o—

प्रश्न — अच्छा आप चुम्बक पत्थर को जड़ मानते हैं या चैतन्य ?

उत्तर — हम तो उसे अवश्य जड़ कहेंगे।

प्रश्न — तो सुनिये कि चुम्बक पत्थर में यह स्वभाव है कि वह लोहे को खींच लेता है। अत: उस में वृक्ष सदृश प्रयत्न पाया जाता है — देखो सोमनाथ जी के मन्दिर का वृत्तान्त लिखा है कि तीन गज की वह मूर्त्ति (शिवलिङ्ग) इसी चुम्बक के प्रताप से बीच आकाश में खड़ी थी, न वह नीचे भूमि से छुई थी और न ऊपर छत से — यह अद्भुत आश्चर्यजनक गुण जिस चुम्बक में पाया जाता है उसे भी वृक्षों की तरह चेतन क्यों न माना जाय ? सो या तो दोनों चेतन हों या जड़। यतः आपने चुम्बक

तीसरा अनुवाद

—.०·—

प्रश्न—तो फिर क्या यही मान जड़ ही जड़ है, सँसार चेतन नाम क कि हमारे शरीर तक को आप जड़ बत

उत्तर — शरीर तो मनुष्य पशु, भी पाँच तत्वों से बने हुये होने से ज उनमें जीवात्मा आ कर बैठा हुआ है, कहलाते हैं। अवश्य ही जीव के शरीर पर जब इस को मुर्दा कहा जाता है, क्यों होता है, अब अभिप्राय यह हुआ कि एक जड़ चेतन दोनों का समुदाय रूप है पर जड़ ही है।

प्रश्न—तो क्या पत्थरादि में भी ऐसा कि पहाड़ एक शरीर है—वह बढता है, अप माणुओं को अपने अन्दर जज़ब करता है उ तरह जीवित पदार्थ है, और जब हम उसमें र लाते हैं तो मानों उस शरीर के अवयवों को कर लेते हैं तब ये पत्थर मुर्दा और जड़ जाते हैं ?

से वह फूल उठा, परन्तु इससे उस का मिलान वृक्षों के साथ करना कितनी भारी भूल होगी। चने उबाले हुये थोड़े ही समय में सड़ जाते हैं, ठीक जिस प्रकार मुरदा शरीर (जीव रहित) सड़ जाता है, परन्तु वृक्ष बढ़ता हुआ अवश्य हम जीवित मनुष्यों सदृश हरा भरा बना रहता है—सड़ नहीं जाता। चने के उबलने का दृष्टान्त निर्जीव पदार्थ में ही घटता है, अत यह आक्षेप भी निर्मूल है।

छठवा अनुवाक।

— ०—

प्रश्न—हमारी समझ में यह सिद्धान्त ठीक जचता है कि जड़ चेतन का झगड़ा ही वृथा है, बस सब को चेतन या सब को जड़ ही मान लिया जाय।

उत्तर — ऐसा मानने का प्रमाण नहीं है।

प्रश्न — प्रमाण तो वेदान्त का बड़ा अच्छा मौजूद है कि —

" सर्वं खल्विदं ब्रह्म "

अर्थात् यह सारा जगत ब्रह्म ही है — बस अब न

को जड़ माना है, इसलिये वृक्ष को भी जड़ ही मान लीजिये ?

उत्तर — चुम्बक लोहे को अपनी ओर आकर्षण करता है, इसलिये यही कह सकते हैं कि उस में अन्यों से अधिक आकर्षण-शक्ति विद्यमान है। आप को ज्ञात हो कि सर आइज़क् न्यूटन महोदय ने यह सिद्धान्त प्रकट कर दिया है कि संसार की समस्त वस्तुओं में आकर्षण है — वे अपने से निर्बलों को अपनी ओर खींचती हैं। यह दशा जड़ चेतन सब में है, इसलिये चुम्बक की इस आकर्षण की तुलना वृक्ष के प्रयत्न (नीचे से ऊपर पानी खींचने) पर नहीं लागू हो सकता। अतः चुम्बक के जड़ होने से वृक्ष नहीं माने जा सकते।

पाचवां अनुवाक।

—o—

प्रश्न — अच्छा, देखो चने जब उबाले जाते हैं तो बढ़ जाते हैं, अतः जड़ पदार्थ का बढ़ सकना सिद्ध हो रहा है। इसी प्रकार वृक्ष जड़ होने पर भी बढ़ने वाला पाया जाता है ?

उत्तर — चने को उबालने पर पानी उसमें भर जाने

आदि के परमाणुओं का उन पर संग्रह होते रहना प्राकृतिक घटनायें हैं। वृक्ष जैसे पानी को खींच कर अपने अन्दर फूल, फल, डाली, पत्ती उपजाता, अपना मल विकार त्यागता, वायु (कार्बन आदि) को ग्रहण करता है— इत्यादि बातें उस की मनुष्यों, पशु, पक्षियों के साथ तो तुलना खाती हैं, लेकिन पर्वतादि से बिलकुल नहीं।

आठवां अनुवाक।

प्रश्न — धातुयें भी जीवित मानी जाती हैं — देखो "पारा" जीवित होता है, फिर उसे वैद्य लोग मारते हैं तब मुरदा याने भस्म बनता है। जिसे मारा हुआ पारा कहा जाता है। इसी प्रकार अन्य सारे धातुओं (सोना आदि) की दशा है। देखो उन से (जब वे जीवित रहते हैं तो) ठनकार की सुरीली आवाज़ निकलती है, पर मर जाने (किसी सिक्का भूषण या बरतन के टूट जाने) पर बेढंगा शब्द निकलता है, अतः वे जीवधारी हैं?

उत्तर — इस लक्षण से भी जीवधारी होना कदापि

सातवां अनुवाक ।

प्रश्न — आप जिन युक्तियों से वृक्षों को चेतन सिद्ध करते हैं, उन्हीं युक्तियों से हम पत्थरादि को चेतन सिद्ध कर देंगे । नहीं तो पत्थरादि सदृश वृक्षों को जड़ मान लो * ?

उत्तर — नहीं, ऐसा त्रिकाल में भी नहीं हो सकता । वृक्ष का भोक्ता होना आदि हम सिद्ध कर आये हैं परन्तु पत्थरादि में वे बातें नहीं पाई जातीं ।

प्रश्न — देखो पहाड़ भी वृक्षों के सदृश बढ़ते हैं । अगर वृक्ष में पानी का ऊपर चढ़ जाना उस के अन्दर जीव को सिद्ध करता है, तो हमारे पहाड़ों का भी हवा पानी मिट्टी के परमाणुओं का अपने अन्दर खींचते रहना उन में जीव की विद्यमानता को क्यों न प्रकट करेगा ?

उत्तर — विज्ञान-वेत्ताओं ने यह दर्शाया है कि पहाड़ का बढ़ना उस पर रहा या तह पर तह के पड़ते जाने तथा भूकम्पादि कारणों पर निर्भर है, और पृथिवी जल

* यह वाक्य आर्यसमाज के एक उपदेशक पण्डित शेरसिंह जी शर्मा मुजफ्फरनगर निवासी का है

चौथा खण्ड ।

हिंसा पर विचार ।

हुआ करते हैं । और आपने देख लिया कि कैसी प्रबल युक्तियों से उनका खण्डन किया गया है । अगर इतने पर भी वे लोग अपनी हठधर्मी न छोड़ें तो क्या इलाज है !!!

इस प्रकार हमने जहां आदि के दो खण्डों में युक्तियों प्रमाणों से वृक्षों में जीव का होना सिद्ध कर दिया, वहां इस खण्ड में आक्षेपों के उत्तर भी भली प्रकार दे दिये हैं और हमारी समझ में अब स्वामी दर्शनानन्द जी तथा उनके अनुयायियों की कोई भी युक्ति शेष नहीं रह गई जिस पर विचार न कर लिया गया हो इसलिए अब इस खण्ड को समाप्त किया जाता है । इससे आगे चौथे अन्तिम खण्ड में "हिंसा के प्रश्न" पर प्रकाश डाला जायगा ।

पहिला अध्याय।

बिना हिंसा काम चल सकता है।

पहिला अनुवाक।

—०—

ऊपर के तीन खण्डों में भली प्रकार युक्तियों, प्रमाणों, तथा प्राचीन और अर्वाचीन विद्वानों की सम्मतियों द्वारा यह सिद्ध कर दिया गया है कि वृक्षों की योनि भी हम लोगों सदृश जीवधारी है। अब इस चौथे खण्ड में हम इस प्रश्न पर विचार करेंगे कि क्या वृक्षों में जीवों की विद्यमानता सिद्ध हो जाने पर फल, फूल, अन्न आदि को खाने वाले निरामिष आहारी या फलाहारी लोगों पर भी वैसा ही हिंसा का पाप लगता है जैसा कि पशुओं को मार कर उन का मांस खाने वालों पर, या नहीं? यहां पूर्व पक्ष यों है.—

प्रश्न—हम लोग बकरी गाय आदि पशुओं को मार कर खा डालते हैं और तुम लोग भी आम जामुन आदि पेड़ों के फल, फूल, डाली, पत्ते तोड़ते हो, या गेहूं चना आदि को खाते हो, इस लिये अगर हमारे ऊपर हिंसा का पाप लगता हो गा तो निस्सन्देह तुम पर भी लगे गा। क्योंकि

लेंगे, परन्तु जिस अनाज की मनुष्य को सब से अधिक जरूरत है उन गेहूं चना, जो, चावल, मूँग उड़द, अरहर मसूर, मटर आदि की प्राप्ति तो बिना पौधों को नष्ट किये न हो सकेगी ?

उत्तर—उनके भी हिन्सा करने का कुछ काम नहीं हैं, गेहू आदि के पौधों की आयु ही ४ से ८ मास तक की होती है। उन के फल जब पक जाते हैं तब वे सूखकर मर जाते हैं, अत. हम उन मुरदा पौधों को खेतों में से उखाड़ लाते हैं या उन के दानों मात्र को तोड़ लेते हैं। बतलाइये इसमें हिन्सा काह हुई ? क्या मांसाहारी भी ऐसा ही करेंगे ? कि स्वयँ अपनी मौत से मरे हुये पशुओं को लाकर उनका मांस खा लिया करें—अगर वे ऐसा ही करें तब अलबत्ता वे भी हिन्सा से बच सकते हैं।

प्रश्न—गेहूं चना आदि बीज हैं और बीजों में भी जीव रहते हैं, अत उन को खाने से क्या हिन्सा न होगी ?

उत्तर—ऊपर तीसरे खण्ड के १, २, ३ ४, अध्यायों में हम भली प्रकार प्रकट कर आये हैं कि बीज में अनुशयी जीव रहता है जो दुखी नहीं हुआ करता, अत. हमें हिन्सा न होगी (पूरा पूरा वहीं फिर पढ़ देखो)

जैसे वे पशु पक्षी जीव-धारी हैं, वैसे ही वृक्ष भी तो जीव-धारी सिद्ध हो रहे हैं।

उत्तर—मांसाहार और फलाहार में जो बड़ा भारी भेद है उस पर अगर आप विचार कर लेते तो इस भ्रम में न पड़ते। सुनो कि जहा मास की प्राप्ति बिना पशु-वध के नहीं होती, वहा फलो की प्राप्ति बिना वृक्ष को जड़ से उखाड़े हुए हो जाती है।

इतना ही क्यों! हम तो अपने प्यारे, मनोहर, आनन्द दायक फल वृक्षो को बड़े आदर सत्कार के साथ वाटिकाओं मे लगाते हैं और खूब पानी सींच कर तथा खाद डालकर उन्हे सदा हृष्ट पुष्ट बनाये रखने का प्रबन्ध करते हैं। हम जितनी ही ज्यादा उनकी सेवा करते हैं वे उतने अधिक आयु तक जिन्दा रहते हुए हमें चिरकाल तक फलों फूलों द्वारा सन्तुष्ट करते रहते हैं। भला बतलाओ! मांसाहार से इसकी क्या तुलना हो सकती है, जिनका काम बिना पशु का सिर धड़ से पृथक किये हुए चल ही नहीं सकता।

दूसरा अनुवाक।

—:o.—

प्रश्न—फलों (आम, जामुन, केला, आमरूद, सेब, नाशपाती, अनार आदि) को तो आप बड़े पेड़ों से प्राप्त कर

दूसरा अनुवाक।

—,०'—

उत्तर — नहीं, घबराव मत, हिंसा के पाप के भागी न बनोगे।

हमने प्रथमाध्याय में जो कुछ कहा था वह केवल यह दर्शाने के लिये कि हम मनुष्य लोग अगर चाहें तो वृक्ष का एक पत्ता तक तोड़े विना भी अपना निर्वाह फल फूल, कन्द, मूल, अन्नादि खाकर चला सकते हैं। परन्तु वस्तुत सिद्धान्त पक्ष हमारा यही है कि यद्यपि वृक्षों में जीव है परन्तु मनुष्य उन को जड़ तक से उखाड़ने पर भी पापी नहीं हो सकता।

प्रश्न — कैसे नहीं होगा ?

उत्तर — इस प्रश्न का उत्तर हम कई प्रकार से अगले अध्यायों में देंगे। यहा प्रथम श्रीस्वामी दयानन्द सरस्वती महाराज का निर्णय सुनाते हैं। उस पर चाहे अन्य लोग कान न दें परन्तु आर्य सामाजिक सज्जनों को अवश्य ध्यान देकर सुन लेना चाहिये —

स्वामी जीकी एक सम्मति तो हम तीसरे खण्ड के १२वें अध्याय में उद्धृत कर आये हैं (वहीं देखिये) दूसरी यों है —

घाम में सुखाने से रंग खिल जाता और मूल्य द्विगुण* मिलता है और दवाइयों में जड़ी बूटियां बड़े काम आती हैं, अत इन को हम क्यों न उखाड़ें इत्यादि, इत्यादि इत्यादि कहां तक गनावें — हमारा सारा काम हरे भरे पेड़ों को जड़ से उखाड़ने या उनके फल फूलादि को तोड़ने, पत्ती डाली काटने बग़ैर नहीं चल सकता। हा हा लकड़ी की बात तो भूल ही गये, सुनो ईंधन के लिये भी हमें हर पेड़ काटने की भारी जरूरत है। ठूँठ पेड़ों से अब मानुषी संसार का काम नहीं चल सकता, क्योंकि लकड़ी की खपत बहुत ज्यादा बढ़ गई है; उतने ठूँठ संसार में नहीं हैं। बतलाइये फिर क्या हमें हिंसक बनना पड़ेगा, तब तो हम से मांसाहारी ही अच्छे रहे ?



---

* यह हाल हमने जञ्जिबार टापू में देखा था जहां से लौंग जर्मनी देश में रङ्ग बनाये जाने के लिये जाता है।
(मङ्गलानन्द)।

तीसरा अध्याय।

वृक्षों पर हमारा स्वत्व है।

पहिला अनुवाक।

प्रश्न — स्वामी दयानन्द के उक्त निर्णय को हम नहीं मानते। हमारी यह मति है कि वृक्ष में जागृतादि सब दशायें मौजूद हैं और वह सुखी दुखी होता है। (म० जगदीश० आदि के प्रत्यक्ष प्रमाणानुसार)। इसलिए फल फूल बल्कि पत्ता तोड़ने तक में भी उसे पीड़ा होती ही है, फिर हिन्सा क्यों नहीं ?

उत्तर — नहीं, नहीं, वृक्षों की हत्या का हमें पाप न लगेगा। सुन लो कि जड़ तक से उखाड़ने पर भी हम मनुष्यों पर कोई पाप नहीं लग सकता।

क्योंकि फल आदि खाना "हमारा स्वाभाविक भोजन (कुदरती गिज़ा Natural food) है। अवश्य ही हमारे लिये जो पदार्थ पर ब्रह्म परमात्मा — सर्व रक्षक पालक, जगज्जननी — ने "आहार" नियत कर दिया है, उसके भक्षण करने से, हमें पाप कदापि नहीं लग सकता।

*पीडा दिये बिना किसी जीव का किंचित भी निर्वाह नहीं हो सकता।"**

हम इस उद्धरण पर कोई टीका टिप्पणी किये बिना स्वामी जी के अनन्य भक्तों के विचार पर छोड़ते हैं।

इस अध्याय में पाठकों ने यह देख लिया कि वृक्ष की हिंसा करने में मनुष्य पापी नहीं बनता, क्योंकि उसकी हिंसा (दयानन्द-कथनानुसार) होती ही नहीं।



*टेढे अक्षर हमारे हैं (सम्पा०)।

चूहे पर है, सिंह का हिरन, गाय, बकरी आदि पर है, साप का मेंढक पर है, गरुड़ और मोर का सांप पर है, अजगर का अनेक वन्य पशुओं पर है या जैसे गाय घोड़े आदि का घास पर है, इसी प्रकार संसार की रचना करने वाले प्रभु परमात्मा ने हम मनुष्यों का स्वत्व वृक्षों पर रख दिया है। और हम लोगों को यही आज्ञा दे दी है कि "तुम मनुष्य लोगों का आहार वृक्षादि है, इन्हें खाओ, पिओ, चैन करो—"

तीसरा अनुवाक।

—:o:—

प्रश्न—हम ऐसा नहीं मानते कि परमेश्वर ने जिस प्रकार सिंह का आहार मृगादि को नियत किया है, उस प्रकार मनुष्य के लिये वृक्ष दे दिया है?

उत्तर—अगर ऐसा नहीं मानते तो यह बतलाइये कि फिर मनुष्य को परमेश्वरीय आज्ञा कौन सी चीजें खाने की है? परमेश्वर ने हमारे शरीर में पेट, जिह्वा, दांत आदि बना कर यह तो निर्णय कर ही दिया है कि कुछ न कुछ हमें खाना पड़ेगा। मांस हमारा खाद्य द्रव्य नहीं है, यह बात हम आगे प्रकट करेंगे। फिर अगर

दूसरा अनुवाक।

—०—

प्रश्न — हम भी तो यही कहते हैं कि वृक्षों को निस्सन्देह खाइये, पर उन्हें जड वस्तु मान लीजिये, चेतन न मानिये और बस फिर कुछ भी पाप की शङ्का न रहेगी।

उत्तर — इस प्रकार केवल कल्पना मात्र से तो काम नहीं चल सकता। अगर वृक्षों में जीव विद्यमान हैं, तो तुम्हारे इनकारी बन जाने से भी क्या होगा?

प्रश्न — तो फिर यही मानो कि हम पर हिन्सा का पाप लगेगा?

उत्तर — नहीं लगेगा।

प्रश्न — क्यों नहीं लगेगा?

उत्तर — इसलिये कि हम वृक्षों के अवयवों (फलादिकों) को खाने में परमेश्वर की ही आज्ञा का पालन कर रहे हैं।

प्रश्न — क्या आज्ञा?

उत्तर — यही कि हम लोग उन के फलों फूलों आदि से अपना पेट भरें। क्योंकि परमेश्वर ने इन पर हमारा स्वत्व रख दिया है — ठीक जिस प्रकार बिल्ली का स्वत्व

प्रश्न — स्वत्व का क्या अभिप्राय है ?

उत्तर — सुनिये :— स्वत्व 'हक़' (Rights) का अभिप्राय यह है कि जिसको उचित रीति (जायज़ तौर) पर जो वस्तु दी गई हो, उसका उस पर स्वत्व होगा। दृष्टान्त से यों समझो —

अगर कोई सज्जन खुशी से किसी को १०००) रुपये की गठरी मिहनताना, इनाम या दान कर के दे देवें और एक दूसरा मनुष्य उस के घर से १०००) चोरी करके प्राप्त कर ले, तो यद्यपि दोनो धन से होने वाले सुखों को बराबर प्राप्त कर लेंगे, परन्तु जहा एक को चोर माना जायगा (और पकड़ा जाय तो दण्ड पायेगा), वहा दूसरा साहूकार बना रहेगा। अत जिसको उस सेठ ने १०००) स्वय दे दिया उस का इस धन पर स्वत्व स्थापित हो गया।

इसी भाति आहार पर यही दृष्टान्त लगा लो। आहार भी दो प्रकार का होगा — एक वह जो ईश्वरीय आज्ञा के अनुकूल हो दूसरा विरुद्ध।

यह सारा सँसार परमात्मा का है। वह इस का मालिक है। अपनी मिलकियत की जो वस्तु जिसको दे देवें उस का उस पर स्वत्व रहेगा। परमेश्वर ने जहा एक ओर सिंह, भेड़िया आदि पशुओं को आज्ञा दे दी कि वे परमात्मा की सृष्टि के पशुओ को मार मार

वृक्षों के फल फल, कन्द मूलादि भी हम से छीन लिये जाय तो, बतलाओ कि तुमहरे मत में मनुष्य का आहार क्या होगा ?

प्रश्न — यह हम कुछ नहीं जानते । हमें तो सीधी सादी एक बात याद है कि वृक्षों को जड़ और निर्जीव मान कर उन्हें खाते रहना ठीक है ।

उत्तर — यह केवल बे समझी या हठधर्मी की बात है ।

पाठकगण ! आप विचार करें कि जिस दशा में हमारे विपक्षी यह नहीं बतला सकते कि अगर मनुष्य वृक्षों का आहार त्याग देवें तो अन्य क्या वस्तुयें खा कर अपना निर्वाह करें ? तो उस दशा में उस का हम पर केवल आक्षेप ही मात्र करते चले जाना क्या युक्ति युक्त माना जा सकता है ? कदापि नहीं ।



चौथा अनुवाक ।

निदान यही सिद्धान्त है कि वृक्षों की हत्या से हम पर हिन्सा नहीं लगती, क्योंकि सिंह को हिरणादि पर जैसा स्वत्व प्राप्त है, उसी प्रकार हमें वृक्षों पर है ।

अपना भोज्य माने और शेष हानिकारी बन जाय।

दूसरा अनुवाक।

प्रश्न — मनुष्य का नियत आहार क्या है ?

उत्तर — नियत आहार मनुष्य का वही हो सकता है जो ईश्वरीय सृष्टि नियम (क़ानून कुदरत (Law of Nature) के अनुकूल हो। मनुष्य का वह "नियत आहार" माना जायगा जिस पर इसका स्वाभाविक आकर्षण हो। जिस प्रकार बिल्ली चूहे को खाने के लिये ललचाती है, गरुड़ साँप पर झपटता है, सिंह मृगादि पर, चील्ह तथा बगुला मछली पर लोभित होते है, उसी प्रकार क्या मनुष्यों का मन बकरे आदि पर झुकता है ? कदापि नहीं। हां हमारा मन फल फूल आदि पर, अलबत्ता मोहित है। इसलिये मनुष्य का नियत आहार फलादि ही है।

का वध पाप मानते हैं। मुसलमान उसे भी चट कर जाते हैं लेकिन सुअर को मारना गुनाह मानते हैं। लेकिन ईसाई हजरत दोनो को हड़प कर जाते हैं, अलबत्ता साप बीछू, चूहा, बिल्ली आदि को छोड़ देते हैं, परन्तु ब्रह्मा देश वाले इन्हें भी हजम कर डालते हैं। इन मासा-हारियो के आपस ही में बड़ा झगड़ा हो रहा है कि अमुक को खाओ और अमुक को न खाओ। अगर ईश्व-रीय आज्ञा होती तो वह मनुष्य-मात्र के लिए एक समान होती कि सारी जातिया अमुक अमुक पशु को मार खांय। तब सब मनुष्यो के मन की स्वाभाविक इच्छा वैसी ही बन जाता। देखो बिल्ली का आहार परमेश्वर ने चूहा नियत कर दिया है, तो उस का स्वभाव ही ऐसा बन गया है कि वह अपने इस नियत आहार की ओर आकर्षित होती है। या सिंह आदि के लिए सब (घासा हारी) पशु आहार नियत कर दिये गये हैं इस कारण वह उस पर स्वभावत झपटता है।

इसी प्रकार मनुष्य के लिए अगर गाय सुअर आदि नियत आहार होते तो ससार भर के मनुष्यों का इस बारे में ऐक्य-मत होता, क्योंकि उस दशा में इन सब के मन का आकर्षण ही उधर को होता किन्तु यह कभी न होता कि कुछ मनुष्य गाय सुअर आदि को

यह जवाब मिला कि मनुष्य के शरीर की बनावट, स्वभाव, चाल चलन, रग ढँग, तर्ज तरीका सबका सब बनस्पत्याहारी पशुओं (गाय आदि) से मिलता जुलता है और मांसाहारियों से सर्वथा पृथक है। अत निर्णय यही रहा कि मनुष्य का स्वाभाविक भोजन मास न होकर फल, फूल, कन्द, मूलादि ही हैं। इसलिए जहा मासाहार इन के लिए पाप है वहा फलाहार पुण्य दायक है।

प्रश्न — मास खाने वाले पशुओं और घास वालों में क्या व कैसा भेद है ? हम तो इन्हें एक समान समझते हैं, क्यों कि सिंह भी मुँह से खाता और नाक से सूघता है और गाय आदि भी ऐसा ही करती हैं फिर समानता क्यों नहीं ?

उत्तर — सुनो, कैसा भेद है ? यह दर्शाने के लिये हम यहा एक चक्र उपस्थित करते हैं :—



यह स्वाभाविक भोजन माना जा सकता। परन्तु ऐसा नहीं है, अतः हमारा स्वाभाविक भोजन मांस नहीं हो सकता बल्कि फल फूलादि ही हो सकता है।

चौथा अनुवाक।

इस के सिवाय निम्न बातें भी ध्यान देने योग्य हैं:—

यूरोप के बड़े बड़े डाक्टरों ने यह जाच किया है कि जरायुज सृष्टि में यत दो प्रकार के जीव पाये जाते हैं—एक मांसाहारी, दूसरे वनस्पति आहारी। इसलिए देखना चाहिये कि मनुष्य का मिलान किन से है। अर्थात् एक तरफ सिंह से लेकर बिल्ली तक मांसाहारी ही पशु हैं, दूसरी तरफ हाथी, ऊँट घोड़ा, गाय, बकरी आदि वृक्षों के फल, फूल, डाली, पत्ती, या घास, पात आदि खाने वाले पशु हैं। अब जाच करना यह है कि मनुष्य की गणना प्रथम श्रेणी में रक्खी जा सकती है या दूसरी में।

उन डाक्टरों ने भी उसी उपरोक्त "सृष्टि के नियम" वाले ग्रन्थ में इस प्रश्न का उत्तर ढूँढा और वहा से

स०	मासाहारी	घास आहारी	मनुष्य
७	चलने फिरने मे जल्द ही हाफने लगते हैं।	दौडने से भी शीघ्र नहीं हाफते।	घासाहारी से ही सब बातों में समानता है।
८	दिमाग छोटा है, सूक्ष्म विचार की शक्ति में कमी है।	दिमाग बड़ा है। बुद्धि तीक्ष्ण है।	
९	जोड़ा खाते समय उल्टे हो जाते हैं या अन्य प्रकार भी विषय में अधिक प्रवृत्ति होती है।	सर्वथा भिन्न प्रणाली है।	

स०	मांसाहारी पशु (सिंह आदि)	घास आहारी पशु (गाय घोड़ा आदि)	मनुष्य
१	पसीना नहीं आता।	१ पसीना आता है।	घास आहारी से ही सब बातों मे समानता है।
२	थूँक नहीं ”।	२ थूँक ”' ”।	
३	पानी लपलपा कर पीता है।	३ पानी को पान कर लेता है।	
४	अँधियाले में आखों से देखता है।	४ अँधयाले में नहीं देखता	
५	रात में जागते (शिकार को तलाश करते) और खाते हैं और दिन में सोते हैं।	रात में सोते और दिन में ही खाते पीते हैं। रात में नही जागते और न खाते हैं।	
६	मिहनत नहीं करते (केवल खाना और सोना मात्र जीवन का उद्देश्य है।)	मिहनती होते हैं।	

लें और मांसाहार में सब खराबियां ही खराबियां हैं ऐसा सिद्ध होने पर उस से हाथ खींच लें। अपने ईश्वरीय आज्ञानुकूल उत्तम भोजन फल फूलादि पर सन्तोष करें।

—०—

छठवां अनुवाक।

—०—

प्रश्न—हम इस चक्र को नहीं मान सकते, क्योंकि कुछ ऐसे जीव जन्तु भी देखे जाते हैं जो मांस और घास दोनों खा लेते हैं जैसे मछली, पक्षी, सांप, छिपकली आदि ?

उत्तर—ये सारे "अण्डज" हैं। उनकी तो उत्पत्ति ही भिन्न प्रकार की है। हमें उन से क्या सरोकार। हमारा तो भाई चारा "जरायुज" मात्र से है। हम जरायुज हैं। गाय, घोड़ा आदि जरायुज हैं और सिंह आदि भी जरायुज ही हैं इसलिए मिलान जरायुओं भर में ही किया जाता है। (जरायुज वे हैं जो झिल्ली सहित पैदा होकर मा का दूध पीते हैं)।

पाचवा अनुवाक।



पाठक गण! आपने यह चक्र देख लिया। इससे स्पष्ट हो रहा है कि मनुष्य के शरीर की बनावट, और स्वभाव, आदतें आदि मांसाहारी पशुओं ही से मिल जाती हैं, अत उसके भी फलाहारी होने में सन्देह नहीं हो सकता।

प्रश्न—सिंहादि को रात के अन्धकार में क्यों दीखता है?

उत्तर—इसलिए कि वे अपना शिकार आसानी से मार ले। प्रकृति माता को तो अपने सभी बच्चों के भरण-पोषण की फिक्र लगी है।

प्रश्न—सिंहादि मिहनत क्यों नहीं करते?

उत्तर—मांसाहार का यही गुण है। कारण का गुण कार्य में आता है। मासाहारी मनुष्य में भी मिहनत परिश्रम का स्वभाव घट जाता है और अगर कोई मनुष्य केवल मास ही खाय (अन्न, फल, दूध आदि छुवै तक नहीं) तो सिंह के समान वह भी सिवाय खाने और सोते पड़े रहने के और किसी प्रकार भी ससार का उपयोगी न सिद्ध होगा।

इत्यादि सभी बातों को विचार कर पाठक समझ

चौथा अनुवाक ।

—०—

आपने अनाज, फल, दूध और मांस के नक्शों को भली भांति देख लिया । अवश्य ही मांसों में सब से अधिक प्रोटीन वाले मुर्गी के बच्चे हैं । जिन में १०० भाग में से ४२६ (सवा चौबीस) भाग प्रोटीन रहता है, परन्तु इधर हमारे अनाजों में मसूर ऐसा है जो उस पर बाजी मार ले जाता है अर्थात् इस में २५·४० (साढ़े पचीस के लगभग) भाग प्रोटीन का मौजूद है । फिर मेवों में से बादाम में भी २३ भाग से ऊपर है ।

प्रश्न — परन्तु मांसों में चरबी बहुत है जब कि अनाजों में वह अति ही न्यून है ?

उत्तर — इसीलिये हम लोग अनाजों को घी दूध के साथ [illegible] करते हैं । हमारे घी में तो सौ में ६५ भाग* [illegible] भरा पड़ा है ।

[illegible] म नहीं आया, क्योंकि यूरोप [illegible] स्वन में ८५ भाग चरबी कह [illegible] को अग्नि दिखलाने से १५ चरबी हो जायगा ।

(५) चक्र—मासवर्ग ।

म०	नाम वस्तु	पानी	प्रोटीन	चर्बी	निशास्ता	पोटाशियम	Total Nurtimnt सारा पोषक पदार्थ
१	Beef गौ मास	७७ ०	१९ ०	३ ६	०	५ १	२८ ०
२	Mutton बकरी या भेड़ोंका मास	६५ ०	१४ ५	१९ ५		० ८	३४ ८
३	Pork सुअर	३९ ०	९ ८	४८ ९	०	२ ३	६१ ०
४	Venison हिरन	७५ ७	१९ ७	१ ९	०	१ १	२२ ७
५	Chicken मुर्गी-के बच्चाका मास	६७ ४	२४ २६	६ ६८	०	१ ३७	३२ ३१
६	Fish मछली	८६ १	११ ९	२	०	१ २	१३ ३
७	अण्डा (white of eggs	७८ ०१	१२ ४		०	१ ६	१४ ६

छठवां अध्याय।

पाप पर विचार।

—o—

पहिला अनुवाक।

—o—

हमने ऊपर प्रथम अध्याय में यह दर्शाया था कि वृक्षों में जीव होने पर भी हमें इन से अपनी शरीर-यात्रा निमित्त यथावश्यक खाद्य द्रव्य बिना हिंसा मिल सकता है। दूसरी अध्याय में यह प्रकट किया कि स्वामी दयानन्द के मतानुसार वृक्षों को पीड़ा नहीं होती अत हिंसा का पाप हम पर नहीं लगा करता, तीसरी अध्याय में यह बतलाया कि पीड़ा होना मानने पर भी उनपर हमारा स्वत्व है इस लिये भी हम हिंसक नहीं हो सकते। चौथे अध्याय में यह कथन कर दिया कि, मनुष्य को प्रकृति ने मासाहारी नहीं वरन् फलाहारी उत्पन्न किया है इसलिये भी हम लोगों को अपने इन नियत "आहारों" को ग्रहण करने से पापी नहीं बनना पड़ेगा और पांचवीं अध्याय में यह बतला दिया कि बल और ताकत के लिये भी मासाहार दरकार नहीं है। इतनी प्रबल युक्तियों और बुद्धि-

प्रश्न — दूध तो पशु से ही मिलता है । वह आपने पिया तो मांस खा चुके, क्योंकि रुधिर से मांस बनता है और उसी से दूध बन जाता है ?

उत्तर — दूध घास का रस है । अमेरिका वालों ने इसकी जांच कर डाली है और घास में से, एक मशीन द्वारा, दूध निकाल कर रख दिया है, अतः इसे रुधिर का साराश कहना बे समझी की बात होगी ।

फिर यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि क्या जिस प्रकार गाय खड़ी खड़ी खुशी से दूध दुहा लेती है, उसी प्रकार कसाई के तलवार से चपके से गला भी कटा लेती है ? अगर नहीं, तो फिर मांस और दूध की क्या तुलना ?

निदान हर तरह से यह सिद्ध हो रहा है कि अन्न, फल, मेवा,* दूध घी आदि में जो बल, पराक्रम और मिहनत, परिश्रम कराने वाली स्फूर्ति, तेज, ओज, वीर्य आदि मौजूद हैं, उन के मुकाबिले में मांस पसङ्गा भी नहीं है । इसलिये यह ख्याल ही गलत है कि मनुष्य को कभी इस की जरूरत हो सकता है, अत उसके लिये व्यवस्था नहीं दी जा सकती ।

—o—

* बादाम में चरबी सौ में ५३ भाग है, अन्य मेवों में भी बहुत है ।

सर्वांश में तो दृष्टान्त कभी घट ही नहीं सकता और हमें यहां यह वर्णन करना अभीष्ट है कि संसार में ऐसे अनेकों दृष्टान्त देखे जाते हैं कि प्राणियों का वध तो किया जाता है परन्तु पाप नहीं लगा करता। अत हमारा अभिप्राय यह-दर्शाने का है कि वृक्षों की भी जब आवश्यकता वश हिंसा की जाती है तो इसी प्रकार उस हिंसा का भी पाप नहीं-हुआ करता।

तीसरा अनुवाक।

—:o—

वृक्ष हमारे नियत आहार हैं इस कारण उनकी हत्या का हमें पाप नहीं लगता, जसे सिंह को हिरणादि की हत्या का पाप नहीं लगा करता।

प्रश्न — सिंहादि को तो पाप इस कारण नहीं लगा करता कि वे कर्म योनि नहीं हैं केवल भोग योनि हैं ?

उत्तर — यह भोग-योनि, कर्म-योनि आदि की बातें अन्य ग्रन्थों की होंगी, हम यहा जिस महान् ग्रन्थ का निर्णय सुना रहे हैं, उस में वैसी कोई बात नहीं है। यहा तो जो कानून कायदे लिखे हैं वे समस्त संसार के

बध कर डालता है) परन्तु वह पापी नहीं होता।

(च) दो राजाओं में युद्ध छिड़ जाने पर दोनों की सेनायें एक दूसरे को गाजर मूली सदृश काटती हैं, परन्तु वे (सेना के लोग) पापी नहीं होते, बल्कि गीतादि शास्त्रों के निर्णयानुसार तो स्वर्ग लोक को जाते हैं इत्यादि, अनेकों ऐसे दृष्टान्त हैं जिन से यही ज्ञात होता है कि अन्य तो क्या मनुष्य जैसे सर्व-श्रेष्ठ प्राणी का भी बध कर देने से पाप नहीं होता। नहीं नहीं बल्कि कई दशाओं में पुण्य भी हुआ करता है। तो फिर भला बतलाओ कि वृक्ष का हनन करने वाले बेचारों को क्यों पापी माना जाय ?

दूसरा अनुवाक।

—०—

प्रश्न — इन दृष्टान्तों से यह आया कि अपराधी, चोर, बदमाश, दुष्ट मनुष्यों या हिंस्र जन्तुओं को मार डालना पाप नहीं है, परन्तु इन हमारे सुन्दर, मनोहर, प्यारे पौधों ने तो कोई अपराध नहीं किया, फिर इनकी हिंसा किस निमित्त से की जाय ?

उत्तर — दृष्टान्त अपराध पर नहीं, केवल "हत्या" पर है, दृष्टान्त का केवल एक अंश लिया जाया करता है

सर्वांश में तो दृष्टान्त कभी घट ही नहीं सकता और हमें यहां यह वर्णन करना अभीष्ट है कि ससार में ऐसे अनेकों दृष्टान्त देखे जाते हैं कि प्राणियों का बध तो किया जाता है परन्तु पाप नहीं लगा करता। अत हमारा अभिप्राय यह दर्शाने का है कि वृक्षों की भी जब आवश्यकता वश हिंसा की जाती है तो इसी प्रकार उस हिंसा का भी पाप नहीं हुआ करता।

तीसरा अनुवाक।

—०—

वृक्ष हमारे नियत आहार हैं इस कारण उनकी हत्या का हमें पाप नहीं लगता, जसे सिंह को हिरणादि की हत्या का पाप नहीं लगा करता।

प्रश्न — सिंहादि को तो पाप इस कारण नहीं लगा करता कि वे कर्म योनि नहीं हैं केवल भोग योनि हैं ?

उत्तर — यह भोग-योनि, कर्म-योनि आदि की बातें अन्य ग्रन्थों की होंगी, हम यहां जिस महान् ग्रन्थ का निर्णय सुना रहे हैं, उस में वैसी कोई बात नहीं है। यहां तो जो कानून कायदे लिखे हैं वे समस्त ससार के

लिये समान हैं । इस अपूर्व शास्त्र में सिंहादि भी पापी बन सकते हैं ।

प्रश्न — भला जी । सिंह किस दशा में पापी बनेगा ?

उत्तर — सिंह अगर घास खायगा तो वह पापी माना जायगा, अगर वह गदहे खच्चरों आदि सदृश बोझे ढोने लगेगा तो वह पापी बन जायगा, अगर वह किसी जन्तु को पकड़ कर मारे बिना (दया करके) जीवित छोड़ देवे तो वह अवश्य पापी ही माना जायगा इत्यादि इत्यादि ।

हम समझते हैं कि इतने से पाठकों ने हमारे इस सृष्टि-नियम ग्रंथ के पाप पुण्यों का नमूना समझ लिया होगा । और यह ज्ञात कर लिया होगा कि क्यों और किस प्रकार मनुष्य कन्द मूल आदि को खाने से हिंसक और पापी नहीं बना करता ।



सातवां अध्याय।

स्वार्थ पर विचार।

पहिला अनुवाक।

—०—

ऊपर हम कह चुके हैं कि पाप तभी होगा जब स्वार्थ परायणता वश किसी मनुष्य, पशु, पक्षी या वृक्ष का वध कर डाला जाय, किन्तु कर्तव्य पालन निमित्त वध करने से हम पापी नहीं बना करते। अब इस अध्याय में हम यह विचार करेंगे कि "स्वार्थ" किसे कहते हैं और किन किन दशाओं में हम स्वार्थी नहीं माने जा सकते। यहां पूर्व पक्ष यों है —

प्रश्न — ऊपर की ४ थी अध्याय में अनेकों दृष्टान्त हमने सुने हैं, परन्तु उन से इस प्रश्न का उत्तर नहीं मिलता। भले ही चोर डाकुओं को राजा फांसी पर चढ़ा दे पर वृक्ष ने तो चोरी डाका नहीं मारा फिर हम उन्हें क्यों वध करें?

उत्तर — हम भी तो यह नहीं कहते कि वृक्षादि वैसे अपराधी हैं। उन्हें हम अपराध के बदले में वध का दण्ड

नहीं देते, किन्तु उनकी हिंसा इसलिये करते हैं कि वसा करना हमारा कर्तव्य कर्म ठहर जाता है।

प्रश्न — कौन सा कर्तव्य कर्म ?

उत्तर — संसार का उपकार करना हमारा सब से अच्छा और उत्तम कर्तव्य कर्म है जिस से सर्वत्र सुख शान्ति फैले।

प्रश्न — भला फिर वृक्षों का हनन कर के तुम कौन सा संसार का उपकार कर डालते हो ? और कहां सुख शान्ति फैलाते हो ?

उत्तर — हम अपनी शरीर-यात्रा करते हैं, यही बड़ा भारी ससार का उपकार है, और अन्न फलादि खा पीकर हम मनुष्य लोग जो तृप्त होते हैं यही सुख शान्ति फैलाना है॥

प्रश्न — वाह, वाह। यह तो आप की बडी विचित्र युक्ति है। भला जी। आप अपने शरीर को मोटा ताजा बनाना ससार का उपकार कैसे मान सकते हैं, हमें तो यह पूरा स्वार्थ दीखता है ?

उत्तर — हां हां फिर सुन लो और कान खोल कर सुन लो कि अनाज आदि को खा, पीकर हम लोग अपने शरीर को जीवित रखने में स्वार्थ सिद्धि नहीं कर

रहे हैं। वरन् परोपकार साधन निमित्त ही ऐसा करते हैं क्योंकि जब शरीर बनाये रक्खेंगे तभी तो परोपकार करने के योग्य सिद्ध होंगे। अगर हम अन्न आदि न खायें तो हमारे शरीर का अन्त हो जायगा, फिर बतलाओ कोई क्या परोपकार करेगा।

निदान यही सिद्धान्त वेदों का है कि मनुष्य का सब से प्रथम कर्तव्य कर्म अपने शरीर को बनाये रखना (मरने न देना) है। शरीर को काम करने योग्य स्वस्थ बनाते हुये कर्म, उपासना, ज्ञान की प्राप्ति में लग जाँय—जप पूजा पाठ करते चले जायँ और देशभक्ति, परोपकार, जाति सेवा, धर्म सेवा, समाज सेवा आदि में तन्मय हो जायँ। यही मनुष्य का परम धर्म है।

इत्यादि सारे कार्यों निमित्त हम फल फूलादि को खाते हैं, अत यह स्वार्थ बिलकुल नहीं है।



आठवां अध्याय।

——:o——

अन्य हिन्साओं से तुलना।

पहिला अनुवाक।

फल, फूल, आदि खाने पर जो लोग इतना कुतर्क करते हैं कि वृक्ष काटने की हिंसा होगी ;, हिंसा होगी इत्यादि— उन महाशयों का ध्यान हम इस अध्याय में कुछ ऐसे कार्यों पर आकर्षित करना चाहते हैं, जो खुल्लम खुल्ला हिंसा और दूसरे जीवों को दु:ख देने पर निर्भर हैं, परन्तु कभी भूल कर यह ख्याल नहीं करते कि उन में कभी किसी प्रकार का पाप होना सम्भव है या नहीं।

प्रश्न—वे कौन से ऐसे कार्य हैं ?

१—उत्तर—सुनिये गाय, भैंस, बकरी आदि का दूध हम प्राप्त करते हैं। क्या इससे उनके बच्चों का स्वत्व छीन लेना रूपी हिंसा नहीं है ? हमें अपनी माता के दुग्ध पर सन्तोष करना उचित था, दूसरों की माताओं के दूध पर ललचाना और डाका मारना कहां का न्याय है ?

२—हम बैल, घोड़ा, खच्चर, गधा आदि पशुओं से बोझा ढोने हल चलाने सवारी करने आदि की सेवाएं लेते हैं। इस का भी हमें कोई स्वत्व न था। वे पशु वनों में अपने आनन्द से रहते, हम मनुष्यों ने इन बेचारों की स्वतन्त्रता को नष्ट किया। और अपने सुखके लिए उन्हें दुख दिया करते हैं, क्या यह हिंसा नहीं है?

३—बकरी भेड़ी आदि का ऊन कतर कर हम लोग अपने कम्बल बनाते हैं। जो वस्त्र परमेश्वर ने उन्हें दिया था, उस को हम लोग अपनी धींगा धींगी से छीन लेते हैं, क्या यह हमारा स्वार्थ और हिन्सा नहीं है?

४—मधु (शहद) की प्राप्ति भी पूरी हिन्सा परक है। इस वस्तु का इतना आदर है कि आर्यों का कोई धार्मिक कार्य बिना मधु के नहीं हो सकता। यहां तक कि बालक को जन्मते ही जो वस्तु सब से पहिले चटाई जाती है वह मधु ही है। ऐसी आवश्यक वस्तु आती कहां से है? मधु-मक्खियों को मार कर या कम से कम भगा कर उनका बड़े परिश्रम से एकत्र किया हुआ शहद हम निकाल लाते हैं। क्या यह हिन्सा नहीं है? फिर एक दो नहीं, सैंकड़ों और हजारों मक्खियों की हत्या होती है, तब कहीं थोड़ा सा शहद मिलता है।

प्रश्न—मक्खियों की हिन्सा किये बिना ही हमें शहद मिल सकता है, उन्हें मारें नहीं, उड़ा दें?

५ उत्तर—प्रथम तो वैसा करनेसे भी अनेको मर ही जाती हैं परन्तु वे न भी मरे तो क्या उनको दुःख पहुंचाना हिन्सा नहीं है ? उनको घर से भगाना और आहार छीन लेना क्या उन को पीड़ा देने का कारण नहीं है ? हमारा क्या स्वत्व है कि हम उन बेचारी मधु मक्खियों का आहार छीन लें ?

६—फिर हम मृगा को मार कर या नाभि काट कर (जिस से वह तड़प तड़प कर मर ही जाता है) कस्तूरी निकाल लाते हैं, जो इतना पवित्र है कि हवन-सामग्री तक में शामिल कर दिया गया है। हमें क्या स्वत्व है कि हम एक पशु को बिना अपराध मारें या जखमी करें। क्या यह हिन्सा नहीं है ?

७—अच्छा आपने कभी रेशम पर भी विचार किया है, यह कहां से आता है ? यह रेशम के कीड़े से बनता है। शायद एक थान रेशम पर कई लाख जीवो की हत्या होती होगी। अत क्या रेशमी वस्त्र पहिनने वाले पूरे हिन्सक नहीं सिद्ध हो रहे हैं इत्यादि इत्यादि।

दूस...

प्रश्न—तो क्या ... कि इन
बन्द करा दिया जाय, ... भैंस

नहीं पीते। क्या शहद और कस्तूरी नहीं खाते ? क्या बैलों के जोते खेतों के अनाज नहीं खाते और क्या बैलगाड़ी घोड़ा-गाड़ी आदि पर सवारी नहीं करते ?

उत्तर—मैं स्वयं तो सब कुछ करता हूं।

प्रश्न—फिर इस अध्याय में ऐसी लम्बी चौड़ी सूची उप-स्थित करने का क्या अभिप्राय है ?

उत्तर—हम यह दर्शाना चाहते हैं कि उक्त प्रकार के सरा-सर हिन्सा परक कार्य को करते हुये भी ये हमारे भ्राता गण किस मुह से वृक्ष हिन्सा की शङ्का उठाते हैं। अगर वृक्ष-हिन्सा होती भी है तो वह ईश्वरीय नियमानुकूल और हमारा उन पर स्वत्व होने से वह पाप तो कदापि नहीं है। लेकिन उक्त प्रकार शहद आदि की प्राप्ति में तो खुल्लम खुल्ला हिन्सा हो रही है परन्तु इन पर कोई शङ्कायें क्यों नहीं करता।

प्रश्न—उन पर भी करने वालों ने अनेक शङ्कायें कीं और उन सब के उत्तर उन्हें दे दिये गये। अब हमने आपका पक्ष समझ लिया कि शहद कस्तूरी आदि सेवन करने में जो हिन्सा होनी सम्भव है वह वृक्ष-हनन की अपेक्षा भारी हिन्सा है, इस लिए एक को करने वाला दूसरे पर आक्षेप किस मुह से कर सकता है। अच्छा अब हम चुप हुए जाते हैं और आप भी चुप हो जाइये

---

५ उत्तर—प्रथम तो वैसा करनेसे भी अनेको मर ही जाती हैं परन्तु वे न भी मरे तो क्या उनको दुःख पहुंचाना हिन्सा नहीं है ? उनको घर से भगाना और आहार छीन लेना क्या उन को पीड़ा देने का कारण नहीं है ? हमारा क्या स्वत्व है कि हम उन बेचारी मधु मक्खियो का आहार छीन लें ?

६—फिर हम मृगा को मार कर या नाभि काट कर (जिस से वह तड़प तड़प कर मर ही जाता है) कस्तूरी निकाल लाते हैं, जो इतना पवित्र है कि हवन-सामग्री तक में शामिल कर दिया गया है। हमें क्या स्वत्व है कि हम एक पशु को बिना अपराध मारे या जखमी करे। क्या यह हिन्सा नहीं है ?

७—अच्छा आपने कभी रेशम पर भी विचार किया है, यह कहा से आता है ? यह रेशम के कीड़ों से बनता है। शायद एक थान रेशम पर कई लाख जीवों की हत्या होती होगी। अतः क्या रेशमी वस्त्र पहिनने वाले पूरे हिन्सक नहीं सिद्ध हो रहे हैं इत्यादि इत्यादि।

दूसरा अनुवाक।

प्रश्न—तो क्या आप यह चाहते हैं कि इन सब कामो को बन्द करा दिया जाय, क्या आप स्वयं गाय भैंस आदि का दूध

नहीं पीते। क्या शहद और कस्तूरी नहीं खाते ? क्या बैलों के जोते खेतों के अनाज नहीं खाते और क्या बैलगाड़ी घोड़ा-गाड़ी आदि पर सवारी नहीं करते ?

उत्तर—मैं स्वयं तो सब कुछ करता हूं।

प्रश्न—फिर इस अध्याय में ऐसी लम्बी चौड़ी सूची उप-स्थित करने का क्या अभिप्राय है ?

उत्तर—हम यह दर्शाना चाहते हैं कि उक्त प्रकार के सरा-सर हिन्सा परक कार्य को करते हुये भी ये हमारे भ्राता गण किस मुह से वृक्ष हिन्सा की शङ्का उठाते हैं। अगर वृक्ष-हिन्सा होती भी है तो वह ईश्वरीय नियमानुकूल और हमारा उन पर स्वत्व होने से वह पाप तो कदापि नहीं है। लेकिन उक्त प्रकार शहद आदि की प्राप्ति में तो खुल्लम खुल्ला हिन्सा हो रही है परन्तु इन पर कोई शङ्कायें क्यों नहीं करता।

प्रश्न—उन पर भी करने वालों ने अनेक शङ्कायें कीं और उन सब के उत्तर उन्हें दे दिये गये। अब हमने आपका पक्ष समझ लिया कि शहद कस्तूरी आदि सेवन करने में जो हिन्सा होनी सम्भव है वह वृक्ष-हनन की अपेक्षा भारी हिन्सा है, इस लिए एक को करने वाला दूसरे पर आक्षेप किस मुह से कर सकता है। अच्छा अब हम चुप हुए जाते हैं और आप भी चुप हो जाइये

नवां अध्याय।

हिन्सा पाप निवारण।

पहिला अनुवाक।

हमने ऊपरी अध्यायो में भली प्रकार यह दर्शा दिया है कि वृक्षों के फल, फूल आदि का उपयोग करने से हम पर किसी प्रकार के भी हिंसा का पाप नहीं लगा करता, परन्तु इतने पर भी जो लोग सन्तुष्ट न हों और यही माने कि पाप लगे ही गा उन के मन्तव्य के आधार पर इस अध्याय में विचार किये देते हैं—

वृक्ष हिन्सा पर भारी झगड़ा चलाने वाले महाशयों से हम यह पूछते हैं कि वृक्षों को तो आप लोग निर्जीव पदार्थ कह कर पीछा छुडा लेना चाहते हैं, परन्तु जिन अनेकों प्रत्यक्ष चलते फिरते जीव जन्तुओं की आप हत्या किया करते हैं उन के बारे में क्या विचार किया है।

प्रश्न—किस प्रकार की हत्या ?

उत्तर—जो चींटी आदि पॉव से दब कर मर जाती हैं। आपने दीपक जलाया कि सैकड़ों पतंगे आ कूदते हैं, क्या उन

के मरने से आप पर उनकी हत्या न लगेगी ! आप के कपड़ों को धोबी धोता है उस के झटके से अनेको छोटे जीव मर जाते हैं, क्या उनकी हत्या आप पर न लगेगी अच्छा गूलर के फलों को आप खाते हैं या नहीं* फिर क्या उस के अन्दर जो सैकड़ों मच्छड़ बैठे रहते हैं उनकी हत्या न होगी ? उन कीड़ों को उड़ा कर फल को खा लेने से कोई कोई लोग समझते हैं कि वे हिंसा से बच जायँगे पर ऐसा भी नहीं है, क्योंकि वे मच्छड गूलर फल से बाहर की खुली हवा को सहन नहीं कर सकते और फौरन मर जाते हैं फिर आलू, बैंगन, भिण्डी, तोरई, कद्दू, करेला, आदि में प्राय जीव पड जाया करते हैं जिन की हिंसा तरकारी भाजी खाने वालों पर पड़ती ही है इत्यादि।

—०—

दूसरा अनुवाक।



बतलाइये ऐसे जीवहिंसा के पापों की निवृत्ति का आप ने क्या उपाय किया है ? बस जो उपाय इन हिंसाओं पर विचारा

* वैद्यक में यह फल वीर्यवर्धक और खास कर आँखोंको ताकत देने वाला माना गया है और जिन पुस्तकों में लहसुन प्याज आदि खाना मना है वहा भी गूलर को वर्जित नहीं किया गया वरन् गूलर का वृक्ष उत्तम माना गया है, उसकी मथानी से मथा हुआ घृत हवन में डालने और गर्भाधान निमित्त खाने का विधान है।

हो उसे ही पत्तों की हिंसा पर भी अगर (हिंसा मानो) लगा लेना।

प्रश्न—हमने तो इन पापों के बारे में कभी विचार नहीं किया, आप हमें यथेष्ट उपदेश दें कि इन पापों के निवारणार्थ हमें क्या करना चाहिये ?

उत्तर—अच्छा सुनिये, मनुस्मृति से हम यह विषय सुनाते हैं—

पञ्च सूना गृहस्थस्य चुल्ली पेषण्यु परस्कर
कण्डनी चोदकुम्भश्च बध्यते यास्तु वाहयन् ॥
(मनु० ३।६८)

अर्थ—गृहस्थियों पर पञ्च सूना नामी पांच प्रकार के पाप कर्म नित्य प्रति लगा करते हैं। वे पांच ये हैं—

१ चूल्हा २ चक्की ३ ओखली मूसल ४ जल का घड़ा ५ बुहारी या झाड़—

अर्थात् इन पांच स्थानों पर छोटे २ जीव मर जाते हैं। इस प्रकार के अनायास होने वाले पापों के निवारण का उपाय मनु महाराज यों बतलाते हैं—

पञ्चैतान्यो महायज्ञान्न हापयति शक्तित ।
सगृहेऽपि वसन्नित्य सूना दोषैर्न लिप्यते ॥
(मनु० ३।७१)

अर्थ—पांचो महा यज्ञ प्रति दिन करने वाला गृहस्थी इस सूना दोष से नहीं लिप्त होता।

बप यो समझो कि जिस प्रकार चींटी, मच्छड़, घुन, मूंडे आदि छोटे २ जीव जन्तुओं की अनायास हिन्सा हो जाने का जो पाप होता है उसकी निवृत्ति पञ्च महायज्ञों (सन्ध्या, हवन, आदि) द्वारा हो जाती है, इसी प्रकार इन वृक्षों की हिंसा भी (अगर हिन्सा होगी तो) इन्हीं से निवारण हो जायगी।

प्रश्न—वृक्ष-हिन्सा के निवारण पर प्रमाण बतलाओ?

उत्तर—प्रमाण नहीं मिल सकता, क्योंकि वे प्रमाण देने वाले ऋषि लोग वृक्ष को काटना पाप नहीं मानते थे। अत-इन पर श्रद्धा रखने वालो! वृक्ष हिन्सा का तत्त्व त्याग दो।



दसवां अध्याय।

—∞—

प्रायश्चित।

पहिला अनुवाक।

यद्यपि वृक्षों के अङ्गों को खाने पीने में पाप नहीं होता तौ भी जो लोग अब तक शङ्कासागर में गोते खा रहे हैं, उन के लिये सहज उपाय यही है कि वे पाप (मन की शङ्का) का प्रायश्चित करा डालें।

किसी को फलाहार के कारण प्रायश्चित करने की सम्मति हम नहीं देते, क्योंकि शास्त्र ने मनुष्यों को वृक्षावयव खाने से पापी माना ही नहीं, फिर प्रायश्चित कैसा, परन्तु यह अध्याय लिखने से हमारा अभिप्राय केवल शङ्कातुरों की सन्तुष्टि कराने का है कि जिसके अन्तःकरण में अब भी ऐसा भय भरा हो वह प्रायश्चित ही करा लेवे।

अत इस अध्याय में इसी प्रायश्चित के प्रश्न पर विचार किया जाता है, यहां पूर्व पक्ष यों है—

प्रश्न—अच्छा हम यह मानते हैं कि वृक्ष को काटने से हमें पाप लगेगा, लेकिन हम उसकी निवृत्ति पञ्च यज्ञों से नहीं

मानते, क्योंकि यह तो पञ्च सूना दोषो को निवृत्ति के लिए कहा गया है। अगर वृक्षों की हिन्सा की निवृत्ति का और कोई उपाय हो तो बतलाइये ?

उत्तर—सब ही प्रकार की हिन्सा तथा अन्य सारे ही पापों के प्रायश्चित मनुस्मृति की ११ वीं अध्याय में लिखे हैं।

प्रथम यह विचारणीय है कि वृक्ष-हिन्सा का पाप किस दरजे का है—अर्थात् हमारे वैदिक धर्म में यह निर्णय है कि संसार में जितने प्राणी हैं —मनुष्य से लेकर वृक्षों तक सभी के हनन में पाप तो होगा, परन्तु प्रत्येक के वध का पाप बराबर नहीं है। मनुष्य को वध करने के पाप से पशु को मारने का पाप कम होगा, फिर जीव, जन्तु, कीट, पतङ्ग मच्छड़ आदि को मारने का पाप उससे भी कम होगा और जुयें चीलर खटमल आदि स्वेदज का, दरजा उन से भी न्यून है, परन्तु उनसे भी कमती पाप हरे पेड़ो को जड़ से उखाड़ने का होगा।

दूसरा अनुवाक ।

—:०:—

मनुस्मृति की ११ वीं अध्याय में सब प्रकार के पापों के प्रायश्चितों का वर्णन आया है। हम हिन्सा-पापों का एक

चक्र यहां उपस्थित किये देते हैं जिससे पता लगेगा कि किस के मारने से कितना पाप होता है (लेखा प्रायश्चित के व्रतों, तपस्याओं, दान, पुण्यों की न्यूनाधिक्यता पर निर्भर है) अत पाठक देख लें कि वृक्ष-हनन का अगर पाप है भी तो वह अति न्यून मात्र ही है। अच्छा अगले पृष्ठ पर चक्र देखिये।



संख्या	प्रमाण	पाप	प्रायश्चित्
१	मनुस्मृति अ० ११ श्लो० ७२	ब्रह्म हत्या ..	मुरदे के शिर का चिन्ह रखकर भीख मागता हुआ वन में कुटी बनाकर १२ वर्ष निवास करे।
२	,, ,, १२९	क्षत्रिय ,,	ऊपर का चौथाई (तीन साल) तप करे।
३	,, ,,	वैश्य ,,	ऊपर (ब्रह्म हत्या) का आठवा भाग डेढ़साल तप करे।
४	,, ,,	शूद्र ,,	,, ,, ,, सोलहवा भाग ६ महीने तप करे।
५	,, ,,	गौ हत्या	एक बैल और १० गायें दान करे, या अगर इतनी सम्पति पास न होतो सर्वस्व वेदोंके विद्वान को दान दे
६	,, ,, १३६	बकरी, भेड़ी इत्यादिका बध करेतो	एक बैल दान देवे।
७	,, ,, ,,	गधा का बध करे तो	एक वर्ष का बछड़ा दान देवे।
८	,, ,, १५५	सूखा मास खाय या हिंसा स्थान के मास बेजाने या लेवे तो ..	चान्द्रायण व्रत करे।

९	अ० ११ श्लो १५६	कच्चा मांस, या सुअर, ऊट मुरगा कौआ आदि के मांस खावे तो	सप्त कृच्छ्र व्रत करे।
१०	,, | ,, १३३	सांप का बध करे तो...	लोहे की करछुल दान कर देवे।
११	,, | ,, १४१	हड्डी वाले छोटे जीव जंतुओं का बध करे तो	कुछ दान कर देवे।
१२	,, | ,, ,,	बिना हड्डी वाले (खटमल जुएं चीलर आदि) का बध करे तो	प्राणायाम करे।
१३	,, | ,, १४२	हरे वृक्ष (फल देने वाले) गुल्म लता फूलने वाले फल पौधों को काटे (जड़ से उखाड़े) तो	सौ वेद मन्त्रों को जपे (या गायत्री को १०० बार जप लेवे)।

तीसरा अनुवाक ।

—o—

पाठक महाशय ! आपने चक्र देख लिया । इस से आप जान गये होंगे कि वृक्ष की हिन्सा का पाप सब से कमती है । अच्छा अब वह मूल श्लोक भी सुन लें ।

फलदानां तु वृक्षाणां छेदने जप्यमृक् शतम् ।
गुल्म वल्ली लतानां पुष्पितानां च वीरुधाम् ॥

(मनु० ११।१४२)

इसका अर्थ उसी चक्र में आ चुका है । परन्तु एक बात ध्यान में रखने योग्य है—वह यह कि इस श्लोक में जो वृक्ष को नष्ट करने का प्रायश्चित कहा गया है वह हिन्सा के विचार से नहीं, बल्कि इसलिए कि जो बहुत अच्छे हरे भरे फल फूलों के उपजाने वाले पेड़ हैं उन्हें जड़ से उखाड़ डालने वाला इस कारण पापी होगा कि उस वृक्ष से जो हम मनुष्यों का लाभ फल फूलों को उत्पन्न द्वारा होने वाला था उस का सत्यानाश कर रहा है ।

निदान सिद्धान्त यही है कि प्राचीन ऋषियों (मनु आदि) ने फलादि तोड़ने या गाजर मूली आदि को खाने के लिए जड़ से उखाड़ने में कोई पाप नहीं माना और न प्रायश्चित बतलाया पाप ही नहीं तो प्रायश्चित कैसा ।

तथापि हमने इस अध्याय को इसलिए लिख दिया है कि जिन धर्म प्रेमी महाशयों का हृदय अत्यन्त कोमल है और हिंसा के भय से बहुत ही भयभीत हो रहा है वे अपने इस भय और शङ्का का निवारण इस प्रायश्चित से ही कर लिया करें, जो हरे भरे पेड़ों को बिना कारण (खाने के लिये नहीं) काटने या जड़ से उखाड़ने पर लगता।

चौथा अनुवाक।

(समाप्ति)

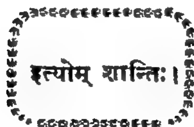
पाठकगण ! हमने हिंसा सम्बधी जितना विचार प्रकट करना था वह आपकी सेवा में रख दिया है अत अब इस खण्ड को समाप्त करते हैं। अन्त में खण्ड का सारांश एक शब्द में सुनाये देते हैं कि वृक्षों को जीवधारी मान कर (जिससे इन्कार नहीं हो सकता) उनके फल, फूल, डाली पत्ती आदि को खाने के लिए तोड़ने या उन्हें जड से भी जरूरत पर उखाड़ने से हम मनुष्यों को हिंसा का पाप नहीं लगता।

परन्तु अगर किसी सज्जन को यह भय लगा ही हो तो वह ऐसे पापों से बचने के लिए प्रायश्चित कर लें। जिस के दो प्रकार हमने दर्शा दिये हैं—एक तो पञ्च महा यज्ञों को करते रहना, दूसरे कोई वेद मन्त्र १०० बार जप कर लेना।

इतना उत्तम और सरल उपाय बतला कर अब हम इस खण्ड को समाप्त करते हैं। और इस चौथे खण्ड के साथ यह ग्रन्थ भी समाप्त होता है।

अन्त में हमारा अपने पाठको से यही नम्र निवेदन है कि चारों खण्डो में हमने यथा सम्भव इस बात की कोशिश की है कि जहाँ एक ओर विषय की पुष्टि में पुष्कलतया युक्ति प्रमाण दिये जाँय वहाँ दूसरी ओर विरोधियों के प्रश्नों या शङ्काओं के समाधान भी कर दिये जाँय, और इस बात का भी हमने पूरा २ ख्याल रक्खा है कि वाद विवाद में अप्रिय या कटु शब्द का प्रयोग न होने पावे। इतना ध्यान रखने पर भी यदि कदाचित कहीं भूल से कोई ऐसा अनुचित वाक्य निकल गया हो तो आप लोग क्षमा करें।

पाठक वृन्द ! अब हम आप से विदा होते हैं और यदि दूसरी पुस्तकों को (जिनका विज्ञापन आगे है) आप पढना पसन्द करेंगे तो फिर आप से मुलाक़ात होगी।



परिशिष्ट संख्या

१—पौधों की किसमें

पहिले खण्ड के दूसरे अध्याय के प्रथम अनुवाक में जो "(घ) प्रार्थना करने वाले पेड़" का वृत्तान्त पृष्ठ १२ पर छपा है उसका कुछ और अधिक ब्योरा विक्रम (कानपुर) के सन् १९२३ ई० के एक अंक (ता० १४ सितम्बर या अक्टूबर*) में हम इस प्रकार पढ़ते हैं—

खजूर का पेड़ लेटता और उठता है।

"स्वराज्य" का रायलचेरू अनन्तपुर से एक सम्वाद-

* मास ठीक स्मरण नहीं रहा।

दावा लिखता है कि एम० एस० एम० रेलवे के किनारे इस गांव से तीन मील पर एक खजूर का पेड़, १२ बजे रात से झुकना शुरू करता है और १२ बजे दिन को जमीन पर एकदम लेट जाता है। फिर दोपहर के बाद वह उठने लगता है और दो पहर रात तक फिर सीधा हो जाता है। यह बीस फुट ऊँचा है। वह पत्तों से हरा भरा दिखाई पड़ता है, यद्यपि आसपास के पेड़ देखने में अच्छे नहीं लगते। सैकड़ों आदमी उसे दैविक वृक्ष समझ कर नारियल आदि चढ़ाते हैं। दर्शकों की हमेशा भीड़ लगी रहती है। वह गत दस दिनों से इस तरह लेटता और उठता है। हम लोगों ने उसे अपनी आँखों से देखा। एक घंटे में तीन चार इंच झुकता और उतना ही उठता है।

२—विद्वानों की सम्मतियां।

दूसरे खण्ड के चौथे अध्याय के पहिले अनुवाक के अन्त में (पृष्ठ १६१ पर) निम्न पंक्तियां, और सम्मिलित कीजिये—

६—आर्य समाज के एक सुविख्यात लेक्चरार और लेखक श्रीमान रावरतन आत्माराम जी अमृतसरी हैं आप की पुस्तक सृष्टिविज्ञान पृष्ठ ४६ से निम्न वाक्य हम उद्धृत करते हैं—

"क्यों वनस्पति में यह गति है ? इसका उत्तर मनु महर्षि ने मानव धर्म शास्त्र के प्रथमाध्याय में यह दिया है कि वह सजीव है। और मनु महर्षि के इस सिद्धान्त को कि वनस्पति सजीव है, बोस महोदय ने सिद्ध करके यूरोप को चकित कर दिया है।"

३—दयानन्द निर्णय पर शंका

समाधान ।

दूसरे खण्ड के तीसरे अध्याय की समाप्ति (पृ० १८६) पर इस निम्नलिखित विषय को तीसरा अनुवाक मान कर पढ़िये—

प्रश्न—सत्यार्थप्रकाश १३ समुल्लास संख्या ७८ की समीक्षा में यह लिखा है—

"भला जो वृक्ष जड़ पदार्थ है उसका क्या अपराध था कि उसको शाप दिया"।

यहां स्वामी दयानन्द का मन्तव्य "वृक्ष जड पदार्थ है" पाया जाता है। आपने इस प्रमाण को अपनी पुस्तक में क्यों नहीं प्रकट किया ?

उत्तर—तेरहवां समुल्लास ईसाइयों और १४ वां मुसलमानों के सम्बन्ध में होने से हमने यह समझ कर कि उन में ऐसी कोई बात सिद्धान्त सम्बन्धी न होगी उधर ध्यान न दिया था। पुस्तक के छप चुकने पर म० जगदम्बा प्रसाद जी सभासद गणेश गञ्ज आर्य समाज लखनऊ से इस प्रमाण को जानकर यहाँ इस पर भी विचार किये देते हैं—

स्वामी जी के अन्य अनेक वाक्यों से जब कि स्पष्ट ही वृक्ष का चेतन होना सिद्ध हो रहा है तो इस वाक्य से उनका विरोध मानना कैसे ठीक होगा। इसे बुद्धिमान लोग स्वयं विचार लें जरा प्रसंग का तो विचार कीजिये—देखिये यहां यह वर्णन चल रहा है कि ईसामसीह ने गूलर-वृक्ष से फल मांगा पर ऋतु फलने की न थी इस कारण उनको निराश

होना पड़ा। आगे बाइबिल में लिखा है कि ईसा महाराज ने उस गूलर पेड़ पर नाराज होकर उसको शाप दिया कि तू कभी न फले फूलेगा इत्यादि। इस पर स्वामी जी यह कटाक्ष करते हैं कि क्या कभी वृक्ष मनुष्य की वाणी को सुन या समझ सकता है, जो इस पर ईसा ने क्रोध प्रकट किया। यहां स्वामी जी का वृक्ष को जड़ कहना ऐसा ही है जैसा लोग क्रोध में मनुष्यों को गधा कह दिया करते हैं तो क्या वह सचमुच गधा हो जाता है? नहीं कदापि नहीं। इसी प्रकार स्वामी जी का भाव यहां पर यही है कि वृक्ष तो हमारी वाणी नहीं सुन सकते—जैसे जड़ पदार्थ नहीं सुनते मानों वृक्ष जड़ वत हैं जैसे "तुम गधे हो" कहने वाले का अभिप्राय यही है कि तुम गधे जैसे बेवकूफ हो।

अतः यह आक्षेप भी यह सिद्ध नहीं करता कि श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती महाराज वृक्ष को जड़ मानते थे।



[illegible]

४—व्याकरण भी इनकारी नहीं है

तीसरे खण्ड के आठवे अध्याय के तीसरे अनुवाक पृष्ठ १५० से आगे निम्न पंक्तियों को सम्मिलित कीजिये—

चौथा अनुवाक।

प्रश्न—व्याकरण (अष्टाध्यायी) में कई ऐसे वाक्य मिलते हैं जिनसे स्पष्ट यही पाया जाता है कि वृक्ष को भी पाणिनि जी महाराज जीवधारी नहीं मानते थे देखो एक सूत्र यह है—

अवयवे ऽप्राणिनि औषधिवृक्षेभ्य.।

यहां अप्राणी के साथ वृक्ष औषधि शब्दों के आने से यही आशय निकलता है कि वृक्ष भी अप्राणी ही है अत वह जीवधारी नहीं माना गया।

उत्तर—अगर वस्तुत व्याकरण वृक्ष को चेतन न मानता हो तो भी हमारे सिद्धान्त की हानि नहीं हो सकती, क्यों कि व्याकरण का यह विषय नहीं है। उसे इस टन्टे से क्या सरोकार कि वृक्ष जड़ है या चेतन ? उसे तो शब्द-शास्त्र समझाना है अत जिन शब्दों को लोग जड़ के सदृश बोलचाल में व्यवहार करते हैं उन्हें व्याकरण जड़ कहे

होगा। परन्तु यतः साधारण वर्ग के लोग अन्य जड़ पदार्थों—पत्थर, कंकड़ आदि—के सदृश मान कर बोलचाल में वैसा ही प्रयोग किया करते हैं, इस कारण व्याकरण ने भी वैसा ही नियम निर्धारित कर दिया।

ज्ञात रहे कि संसार में बोलचाल प्रथम जारी हुआ और व्याकरण पीछे बना है, इस कारण यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि व्याकरण क्यों वृक्ष को जड़वत् प्रयोग करता है।

परन्तु इस सूत्र में तो "अप्राणी" शब्द आया है जब कि हमारे स्वामी दर्शनानन्द महाराज वृक्ष को "अप्राणी" नहीं, वरन् प्राणधारी मान कहे हैं अतः यह सूत्र तो स्वयं उन्हीं के पक्ष को काटने वाला सिद्ध हो रहा है।

५--एक चिट्ठी।

एक महाशय ने वृक्ष के जीवधारी होने के बारे में अपना निजी अनुभव मुझे एक पत्र में प्रकट किया है जिस को पाठकों की वाक़फ़ियत के लिए मैं ज्यों का त्यों उद्धृत किये देता हूँ।

ओ३म्

श्रीमान् स्वामी,

नमस्ते।

आपका व्याख्यान "वृक्षों में जीव विचार" पर समाज मन्दिर जौनपुर में बहुत ध्यान पूर्वक सुनता रहा जो युक्तियां आपने सुनाई उनसे चित्त को बड़ी शान्ति हुई। मैं बहुत दिनों से इस विषय पर सोच रहा था, मेरा विचार भी यही है कि वृक्षों में जीव है इस कारण आप के इस व्याख्यान के सुनने की ज्यादा रुचि रही, आप ने जो युक्तियां बतलाई उन में एक विचार जो मुझ को अपने निज के अनुभवमें प्रतीत हुई, नहीं सुना। इस कारण यह पत्र लिख रहा हूं, यदि आप के विचार में मेरा अनुभव ठीक विदित हो तो इस पर भी आप ध्यान देवें। मेरी आर्य वाटिका में जिसे २० साल से मैंने आबाद किया है भिन्न २ प्रकार के वृक्ष लगे हैं मैं अपने सामाजिक जीवन में इस ख्याल का शुरू ही से था कि वृक्षों में जीव है इस कारण जो वृक्ष किसी कारण मुरझाये रूप में दिखलाई पड़ते तो मैं यह सोचता था कि इन्हें कोई रोग वा दुख है। तो क्या जैसे Mesmerism से लोग मनुष्यों का दुख दूर करते हैं यदि हम भी अपनी विचार शक्ति से वृक्ष पर प्रेम व दया की दृष्टि न डाले तो क्या इन

पर कुछ प्रभाव न पड़ेगा। इस कारण बहुत से ऐसे वृक्ष जो दुखी मालूम होते थे उन पर मैं कुछ देर तक इस प्रकार नजर डालता था गोया उन से मैं प्रेम का बातचीत कर रहा हूं और उन को हरा भरा देखना चाहता हूं। महीने दो महीने ऐसा करने से सचमुच वृक्ष हरे भरे हो जाते थे इस से यह मालूम होता है कि जिस प्रकार पशु पक्षी से प्रेम करने से वे सुखी नजर आते हैं और प्रफुल्लित हो जाते हैं उसी प्रकार वृक्षों पर भी प्रेम व दया का प्रभाव पड़ता है इस से यह स्पष्ट है कि उन में भी जीव अवश्य है। यदि आप अथवा आप के अनेकों परिचित महानुभाव इसका Experiment करें तो बड़ा अच्छा है।

आर्य समाज जौनपुर। भवदीय—

१७ अग० १९१३ प्रतापनारायण

वकील

नोट—इस पत्र पर कोई टीका टिप्पणी आवश्यक नहीं है।

६—दाताओं को धन्यवाद ।



मंगल ग्रन्थमाला की पुस्तकों को छपा कर प्रकाशित कराने के लिये जिन सज्जनों ने आर्थिक सहायता दी है उन (पाँच रुपिया से अधिक देने वालों) के नाम धन्यवाद सहित नीचे प्रकाशित किये जाते हैं। ऐसे साहित्य प्रेमी पुण्यात्मा धर्मात्मा, महाशयों को परमात्मा चिरायु दें।

इस आय से अब तक निम्न पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं —

१—ब्राह्मण कौन है। 2 Vedic Tenets According to Dayananda ३—भगवद्गीता रत्नमाला ३ पृष्ठ में जाते है —

दाताओं की सूची इस प्रकार है।—

संयुक्त प्रान्त आगरा व अवध ।

खीरी लखीमपुर ।

सं०	नाम	धन
१	बिजवा स्टेट, भीराखेरी	५०)
२	आर्य समाज, लखीमपुर	१५)

३ बाबू सीताराम जी बी० ए० एल० एल० बी०
प्रधान आर्य प्रति स० स० प्रान्त ५)
४ प० क्षेमचन्द जी सेशन्स कचहरी जजी ५)
५ डाक्टर प्यारेलाल जी ५)
६ श्री बैजनाथ सिंह जो शर्मा मुनसरिम डिपटी
कमिश्नर, कचहरी। ५)
७ म० रामचरण जी गुप्त ड्राइंग मास्टर गवर्नमेंट स्कूल ५)

हाथरस।

१ प० श्री निवास बख़शी जी जमींदार १०)

मुरादाबाद।

१ आर्य समाज सभल मुरादाबाद १०)

कानपुर।

न०	नाम	धन
१	लाला चुन्नीलाल जी रईस (बाबू ज्वालाप्रसाद बी० ए० एल० एल बी० मन्त्री आर्य समाज द्वारा)	३१)
२	रायसाहब बाबू आनन्द स्वरूप जी बी० ए० वकील, प्रधान आर्य समाज	१५)

स०	नाम	धन
३	बाबू बृजेन्द्र स्वरूप जी वकील ।	१०)
४	डाक्टर फ़क़ीरे राम जी मेस्टन रोड ।	१०)
५	लाला गोपीनाथ छगामल जी व्यापारी ।	१०)≡
६	श्री मती मन्नो बीबी (पत्नी लाला प्रभुदयाल जी) अगरवाला कर्नैलगंज ।	१०)
७	लाला दीवानचन्द जी एम० ए० प्रिन्सिपल डी० ए० वी० कालिज ।	५)
८	श्री राधाकृष्ण जी वकील ।	५)

हरदोई ।

संख्या	नाम	धन
१	श्री राय साहब लाला केदारनाथ जी रईस थमरुवा प्रधान आर्य समाज ।	१५)
२	म० फ़तेहचन्द जी सक्रेटरी डिस्ट्रिक्ट बोर्ड	१०)
३	म० मथुराप्रसाद जी बी० ए० हेड मास्टर गवर्नमेंट स्कूल	५)

जौनपुर ।

१	म० अशरफीलाल जी वकील प्रधान आर्य समाज	५)

सं०	नाम	धन
२	श्री शिवभजनलाल जी मुख्तार पुस्तकाध्यक्ष आर्य समाज।	५)
३	म० प्रतापनारायन जी वकील	५)

१	आर्य समाज फर्रुखाबाद	३१।)
२	श्री डाक्टर शिवदत्त जी पाँडे एल० एम० एस० सुरीर मथुरा।	५)

राजपूताना मालवा।

जोधपुर।

नं०	नाम	धन
१	राव राजा श्री तेजसिंह वर्मा जी (सीनियर)	३०)
२	राव राजा श्री रघुनाथ सिंह जी ठेकाना जीवन्द (सोमेश्वर)।	२०)
३	म० जैमिनि जी ठेकेदार प्रधान आर्य समाज	१०)
४	म० यमुनादास जी, कछवा आदर्श कम्पनी सोजतरोड	१०)

सं०	नाम	धन
५	म० गिरधारीलाल जैनारायण मोदी व्यापारी सोजतरोड ।	१०)
६	म० जीवनराम रामदयाल जी व्यापारी सोजतरोड	१०)
७	,, मोहनसिंह जी ठेकेदार (प्रताप आदर्श) बीकानेर ।	१०)
८	आर्यसमाज वादी कुई ।	१०)

अजमेर ।

सं०	नाम	धन
१	रायसाहब मिट्ठनलाल जी वकील प्रधान आर्य समाज ।	१०)
२	म० घिसूलाल जी एम० ए० वकील, मन्त्री आर्य-प्रतिनिधि सभा राजस्थान ।	१०)
३	बा० गुलराजगोपाल जी इनजीनियर	१०)
४	श्री सूर्यकरण रामविलास शारदा जी बा० ए० वकील	१०)
५	,, प्रभुदयाल जी एम० ए० वकील	१०)
६	,, रामसहाय जी असिस्टेंट इन्जिनियर पी०	

सं०	नाम	धन
	(राजा रामोराम की ड्योढी)	२०)
१४	,, धातरक राजलिगम साहू जागीरदार मेडचल (अतरावल्दा) मर्फ खास ।	१५)

११) देने वाले ।

१५ म० राजनेत सिंह जी अन्दरूननया पुल ।

१६ ,, रामन्ना पूल्लिया कुन्टैया जी व्यापारी रेजिडेन्सी बाजार ।

१७ श्रीमती सुमीरता बाई जी जागीरदारिनी दूध बावली ।

१०) देने वाले ।

१८ ,, मनमोहन दास जी वकील सिकन्दराबाद,

१९ ,, म० देवीप्रसाद जी महाजन बेगम बाजार

२० ,, देवीदीन जी महाजन (कोषा० आर्य स०) शूप बाजार ।

२१ मि० जी० एन० वेलिङ्कर साहब प्रोफ़ेसर प्रधान ब्राह्मो समाज ।

२२ श्री गणेशमल रघुनाथमल जी बैंकर ।

२३ ,, चिराग वीरन्ना मुकद्दम ठेकेदार आवकारी ईसा मियाँ बाजार ।
२४ ,, डाक्टर बृजमोहन लाल साहब न्युलाइन ।
२५ राजा सोहनलाल जी रवी मु० अलीआबाद ।
२६ चिकोटी वीरन्ना ऐण्ड सन्स सिकन्दराबाद ।
२७ श्री वेंकटराव जैगरकल जी कमीशन एजन्ट रायचूर
२८ ,, नरोत्तम दास जी ठेकेदार सिकन्दराबाद ।

---

७) देने वाले ।

२९ म० किशनलाल जी महाजन रंगीली खिड़की ।

---

५) देने वाले ।

३० राय चुन्नीलाल जी वकील गुलज़ार हौज़ ।
३१ श्री सन्नप्पा दीवान जी वकील छोटा मेंहराज गंज ।
३२ पं० मनसाराम जी आर्य समाज ।
३३ श्री नारायण दास जी वैद्य बेगम बाज़ार ।
३४ मिस्टर जे० अलफ्रेड टामस (बसरा एजेन्सी) महबूब, मंजिल मकान नं० ९२२ रेजिडेन्सी बा०
३५ रामनारायण (सत्यनारायण सूरजमल) मिठाई की दूकान मच्छी कमान ।
३६ म० काशीनाथ राव वैद्य एम० ए० वकील ।

स्कूल झरिया। ५०)

४ ,, ठाकुर बीरन सिंह जी चेयरमैन म्युनिसिपलिटी लोहार डग्गा (रांची) १०)

रांची।

५ म० नन्दकुमार जी वकील ५)

६ श्रीमान् आनरेबल श्याम कृष्ण सहाय जी बी० ए० बारिस्टर प्रधान आर्य समाज। ५)

७ म० दिगम्बर सहाय जी वकील। ५)

८ श्री, मान् राजा महेश्वर सिंह जी जमींदार ईचागढ़ ६)

मानभूम।

९ राजा रणबहादुरसिंह जी रामनगर कतरास गढ़ ५)

१० श्री मोतीसिंह सूबेदारसिंह जी ,, ७)

११ आर्य समाज क्वेटा बलूचिस्तान ५०)

रंगून

सं०	नाम	धन
१	श्री सेठ नेवराम रामबकस जी मारवाड़ी	२१)

मूगल स्ट्रीट । २१)
२ श्री कृष्णा स्वामी मूडल्यार खजान्ची मर्केन्टाइल बैङ्क (३० । ३९ स्ट्रीट) १५)
३ „ लव जी भगवान जी लाठी (शाह सिंह कम्पनी) लूइस स्ट्रीट । १०)
४ डाक्टर श्री निवासम कला वस्ती १९।१०९ स्ट्रीट ११)
५ डाक्टर गुरुदत्त मरीन जी जेनरल अस्पताल १०)
६ म० यदुवीर सिंह जी जमादार माहम, कम्पनी ७१।४८ स्ट्रीट १०)
७ म० विश्वेश्वर प्रसाद मथुरा वन पिनमेन हलहाबिया ।सूली पगोडारोड । १०)
८ श्री सुब्बा रायड इलमेन ठेकेदार चावल का मिल डावाग १५)
९ श्रीयुत मगनलाल प्राण जीवन जी (डा० पी० जी० मेहता साहब जौहरी की दूकान) ७)
१० म० गुरदास मल जी ओवरसियर ३७ स्ट्रीट ब्लाक १५)
११ म० पुरषोत्तम शर्मा जी व्यापारी फ्रेजर स्ट्रीट ५)
१२ म० कृष्ण कन्हैया सक्सेना जी असिस्टेंट इन्जीनियर ५)
१३ म० ज्ञानसिंह टेलर १२४ बाड़ारीरोड ५)
१४ सेठ सूरजमल घनश्यामदास जी मारवाड़ी ५)

१५ श्री लल्लू भाई डवे १२ वार स्ट्रीट ५)
१६ " सुन्दरमल लक्ष्मीनारायण इन्सन ५)
१७ डाक्टर माधोप्रसाद जी ६। ४५ स्ट्रीट ५)
१८ ,, पिल्ले सिविल सोर्जन इन्सेन ७)

परिशिष्ट सँख्या ७

शुद्धाशुद्ध पत्र।

इस पुस्तक मे अनेक अशुद्धिया रह गई हैं उन मे से कुछ अत्यन्त आवश्यकीय अशुद्धिया नीचे प्रकाशित की जाती हैं संस्कृत की अशुद्धियों को यहा नही सुधारा गया, आशा है व्यावरण जानने वाले सज्जन गण स्वय सुधार लेगे ।

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१०	१८	पहला	दूसरा
३३	४	का	को
१०६	४	शत्रु शों	शत्रुओं
१२१		२२१	१२१
१३०	२	४०७	४००

१५६	६	रूपा	रूपी
१६७	१८	होता	होना
१२७	१०	वें १४	१४
२५१	१	साक्रुय	माहरुय
"	१०	भिन्तक	भिक्ष
२५५	१४	स्थारवता	स्थावरता
२६४	—	२,१३	२,१४
२७४	६	चाथा	तीसरा
"	७	तीसरा	दूसरा
"	८	तीसरा	दूसरा
पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२७७	१	अथर्धात	अर्थात्
२८३	४	चेतनाद	चेतनाद्
२८४	६	पक्षियों	विपक्षियों
२९१	२	इन	ये
२९१	१६	निपेध न	निषेध
"	१७	सका	समका
२९४	८	मा	सारे
"	१२	मिद्ध	में सिद्ध
२९९	—	चीज	भूलो
"	१५	दि	कि

पृ०	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
३२०	१	प्रश्न प्रजा चला वह रुकता है	प्रश्न—वह कहा चला जाता है ?
३५१	—	विज्ञानी	इनकारी
,,	४	प्रकरणों	प्रकारो
,,	११	भाग्य	भोग्य
३६०	५	मनो गतोन्द्रि	मनोगतीन्द्रि
३७४	३	मसार	ससार में
३७६	१२	वृक्ष	वृक्ष जड़
३८२	१७	से	बसे
४१६	४	मांसाहारी	घासाहारी
४२३	१४	पता	पता न
४२८	१७	१५	१०
४३५	१५	अन्ध	अन्य
४४६	१३	झाड	झाड़ू
४६५	२०	डालें	डालें



मगल ग्रन्थमाला की हस्त-लिखित पुस्तके।

श्री स्वामी म गलानन्द जी पुरी ने अब तक निम्न पुस्तकें लिखी हैं, जो अभी तक अप्रकाशित हैं। इन पुस्तकों के प्रकाशन मे धन की काफ़ी आवश्यकता है, यदि कोई धर्मात्मा इन में से किसी पुस्तक को अपनी ओर से छपवाने का प्रबन्ध करेंगे तो उनका नाम सधन्यवाद चित्र सहित पुस्तक में दे दिया जायगा। पुस्तक-प्रकाशन में छोटी छोटी रक़में प्रदान करने वाले महाशय भी हमारे धन्यवाद के पात्र समझे जायगे और पुस्तक के प्रकाशित होने पर धन्यवाद सूची में उनका भी नाम दे दिया जायगा। स्वामी जी ने निम्न लिखित पुस्तकें यूरोपीय विद्वानो के कथनों के आधार पर लिखी हैं—

[१] वैदिक धर्म का महत्व।
[२] वेदों में एक ब्रह्म उपासना।
[३] हिन्दू सभ्यता और सदाचार
[४] भारत में ईसाई मत का पराजय
[५] वेद में विज्ञान।

[६] जगद्गुरु—भारत

[७] वाइस सो वर्ष पूर्व का भारत

[८] हिन्दू रेखागणित

[९] हिन्दू-भूगोल

निम्न लिखित पुस्तक स्वतन्त्र रूप से रची गई हैं —

[१०] मनुसार-संग्रह।

[११] सर्व स्मृतिसार।

[१२] तुलसी सार संग्रह।

[१३] विधवा ओं पर दया करो [दिल दहलाने वाली पुस्तक]

[१४] हिन्दुओ ! मौतसे बचो !!

[१५] अफरीका भ्रमण [अफरीका का मनोरंजक वृत्तान्त, पुस्तक बड़ी है]

अब तक स्वामी जी की ये पुस्तकें छप चुकी हैं। इन की पहिली आवृत्ति समाप्त हो चुकी है दूसरी आवृत्ति जल्द निकलने वाली है।

१ ब्राह्मण कौन है ? मू०)॥।

२ भगवद्गीता रत्नमाला मू० =)

४ वृक्ष में जीव है पुस्तक आप के हाथ ही में है। मू० २)

यहां उपर्युक्त पुस्तकों के गुणों के विवेचन की आवश्यकता नहीं है । पुस्तकों के नाम ही अपने गुणों को प्रकट करते हैं । आशा है उदार महानुभाव श्री स्वामी जी की पुस्तकों प्रकाशन में हमारा हाथ बटावेंगे ।

निवेदक

मैनेजर एल० एम० वर्मा ऐंड कम्पनी १३८ अतरसूया

प्रयाग ।